ज्योतिषशास्त्र कनिष्ठ सहायक

व्यावसायिक पाठ्यक्रम स्तर 2.5

राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Phone : (0734) 2502266, 2502254, E-mail : msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in

ज्योतिषशास्त्र कनिष्ठ सहायक

प्रधान सम्पादक

प्रो. विरूपाक्ष वि. जड्डीपाल्

सचिव

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

लेखक

डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा, ज्योतिषाचार्य

एम०ए०, एम० फिल०, पी०एचडी०(शैक्षिक सहायक)

प्रधान संयोजक

डॉ.अनूप कुमार मिश्र

सहायक निदेशक, प्रकाशन एवं शोध अनुभाग

आवरण एवं सज्जा : श्री शैलेन्द्र डोडिया

तकनीकी सहयोग एवं टङ्कण : श्री नरेन्द्र सोलंकी

© महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जयिनी

ISBN :

मूल्य :

संस्करण :2024

प्रकाशित प्रति PDF

प्रकाशक : महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान

(शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार की स्वायत्तशासी संस्था)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Email: msrvvpujn@gmail.com, Web: msrvvp.ac.in

दूरभाष (0734) 2502255, 2502254

भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की पाठ्यचर्या एवं राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन का उद्देश्य शिक्षण विकास एवं प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षार्थियों का सर्वांगीण विकास कर रोजगार प्रदान करना है। महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन सदैव शैक्षिक नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर रहा है अतः आदर्श वेद विद्यालयों, पाठशालाओं एवं भारत के विद्यालयों में वैदिक कौशल विकास शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा अनेकानेक गतिविधियों के माध्यम से शिक्षार्थियों को रोजगार के अवसर प्रदान कर रहा है, जिससे शिक्षार्थी प्रशिक्षण के ज्ञानार्जन द्वारा स्वयं को अद्यतन एवं जागृत कर सकेंगे तथा इसके विषय ज्ञान का लाभ अपने दैनन्दिन जीवन के साथ-साथ आजीविका प्राप्त कर राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे।

ज्योतिषशास्त्र कनिष्ठ सहायक पाठ्यपुस्तक में इकाईयों के विषयों को विविध आयामों के साथ सहज एवं प्रभावी तरह से प्रस्तुत किया गया है लेकिन फिर भी कोई दोष हों तो हमें सूचित अवश्य करें क्योंकि हमारा परम उद्देश्य वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर वैदिक ज्ञान को कौशल विकास के माध्यम से जन-जन पहुँचाना है। अतः पाठ्य पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए विद्वानों के समस्त सुझावों का स्वागत है।

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

प्राक्कथन

वेद ही सम्पूर्ण ज्ञान एवं विज्ञान के मूल स्रोत हैं। ज्ञान एवं विज्ञान के अध्ययन के लिए हमारे ऋषि-मुनियों नें ज्योतिष, कल्प, निरुक्त, शिक्षा, व्याकरण, छन्द आदि छः वेदाङ्गों की व्यवस्था की है। ज्योतिषशास्त्र काल विधान शास्त्र है और काल दो प्रकार का होता है। सृष्टि का संहार करने वाला एवं द्वितीय गणना करने वाला। गणना करने वाला काल भी पुनः दो प्रकार का होता है, पहला मूर्त्त(व्यावहारिक) एवं दूसरा सूक्ष्म होने से अमूर्त्तकाल (अव्यवहारिक) होता है जैसा कि सूर्यसिद्धान्तकार ने कहा है-

लोकानामन्तकृत् कालः कालोऽन्यः कलनात्मकः।

स द्विधा स्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्तश्चामूर्त उच्यते।। (**सूर्यसिद्धान्त**1.10)

वेद विहित यज्ञों का सम्पादन शुभ काल पर ही निर्भर है। जैसा कि आचार्य लग्ध के वचन हैं-

वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः कालानुपूर्वा विहिताश्च यज्ञाः।

तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम्।। (आर्च ज्योतिषम् 36)

काल ही नहीं प्राणियों की उत्पत्ति से लेकर सम्पूर्ण विवेचन ज्योतिषशास्त्र के द्वारा किया जा सकता है।

ज्योतिषशास्त्र का स्वरूप-

"स्कन्धत्रयात्मकं ज्योतिश्शास्त्रमेतत् षडङ्गवत्।

गणितं संहिता होरा चेति स्कन्धत्रयं मतम्।

जातकगोलनिमित्तप्रश्नमुहूर्तगणितनामानि।

अभिदधतीहषडङ्गान्याचार्या ज्योतिषे महाशास्त्रे।।"(प्र.मा.1.6)

सिद्धान्त, संहिता और होरा ज्योतिषशास्त्र के तीन स्कन्ध हैं एवं जातक, गोल, निमित्त, प्रश्न, मुहूर्त्त, गणित ये छः ज्योतिष के अंग हैं-

जातक- तनु, धनु, सहज, सुख, संतान, रिपु, ज्याया, आयु, भाग्य, कर्म, आय और व्यय भावों से अनेक विषयों का विचार किया जाता है।

गोल- गोल ज्ञान से ग्रह नक्षत्रों की गति और स्थिति का ज्ञान होता है।

निमित्त- कृषि, वृष्टि, वास्तु, सामुद्रिक और शकुनों का विचार किया जाता है।

प्रश्न - नष्टजातक और नष्टवस्तुओं का प्रश्नशास्त्र के द्वारा शुभाशुभ फल का विचार किया जाता है।

मुहूर्त्त – वेद विहित यज्ञ कर्मों का इष्टफल एवं संस्कारादि कर्मों तथा वास्तुप्रतिष्ठा के लिए शुभ मुहूर्त्त का निर्णय किया जाता है।

गणित- दैनिन्दिन व्यवहार में सदैव गणित की आवश्यकता होती है। बिना गणित के काल गणना, व्यापार, समय शुद्धि आदि में सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन, ज्योतिषशास्त्र का स्वरूप, ज्योतिषशास्त्र की उपयोगिता, ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक, राशिभेदाध्याय, ग्रहभेदाध्याय, सामान्य पञ्चाङ्ग ज्ञान, सामान्य मुहूर्त्त निर्णय, भावविचार, गोचरविचारादि विषयों का विविध आयामों सहित प्रस्तुत ज्योतिषशास्त्र कनिष्ठ सहायक की यह संग्राह्य पुस्तक प्रशिक्षणार्थियों के लिए ज्योतिष में प्रवेश के साथ- साथ उद्यमिता प्राप्त करने में भी अतीव सहायक होगी।

डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा

यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
इकाई 1: कौशल भारत मिशन एवं ज्योतिष शास्त्र कनिष्ठ सहायक की भूमिका का परिचय	
1.1 राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन	1-1
1.2 राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन के उद्देश्य	1-1
1.3 कौशल विकास और उद्यमशीलता मन्त्रालय	1-1
1.4 मन्त्रालय के उद्देश्य	2
1.5 प्रशिक्षण महानिदेशालय (डीजीटी)	2
1.6 प्रशिक्षण महानिदेशालय मुख्य कार्य	2-3
1.7 राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद(एनसीवीईटी)	3
1.8 राष्ट्रीय कौशल विकास के प्रभाव	3.4
1.9 ज्योतिष शास्त्र कनिष्ठ सहायक की भूमिका का परिचय	4-5
इकाई 2 : ज्योतिश्शास्त्र का स्वरूप	
2.1ज्योतिषशास्त्र का उद्भव	6-7
2.2 ज्योतिषशास्त्र का स्वरूप	7-8
2.3 ज्योतिषशास्त्र की उपयोगिता	8-9
2.4 ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक	9-11
इकाई 3 : राशिभेदाध्याय	**12-28**
3.1 राशियों के नाम	12
3.2 राशियों के पर्यायपद	13-14
3.3 मेषादि राशियों के स्वामी	14-15
3.4 सूर्यादि ग्रहों के उच्च- नीच स्थान	15

3.5 मूलत्रिकोण राशि 16

3.6 मेषादि राशियों का स्वरूप 17

3.7 राशियों की क्रूराक्रूर,स्त्री (सम) एवं पुरुष (विषम) 18

3.8 संज्ञा, पित्तादि धातु विचार एवं रोग ज्ञान 18

3.9 चर,स्थिर और द्विस्वभाव 18

3.10 राशियों का विशेष वर्गीकरण 19

3.11 कालपुरुष के अंगों में मेषादि राशियों का न्यास 22-23

3.12 द्विपद, चतुष्पद् और कीट 23-24

3.13 धातु, मूल और जीव 24

3.14 मेषादि राशियों की विप्रादि संज्ञा 24

3.15 मेषादि राशियों के वर्णविशेष 24

3.16 राशियों के द्रव्य 24.25

3.17 मेषादिराशियों के देश 25

3.18 दिशा ज्ञान. द्वार, बाह्य और गर्भ, 25.26

3.19 अयन कर्क और मकर

3.20 राशिस्वरूप

3.21 पृष्ठोदय और शीर्षोदय

3.22 राशियों के वास स्थान

3.23 राशियों के तत्त्व 26-27

इकाई 4 : ग्रहभेदाध्याय

4.1ग्रह, कालपुरुष के आत्मादि कारक ग्रह 29

4.2 सूर्यादि ग्रहों की राजा एवं कुमारादि संज्ञा 29

4.3 सूर्यादि ग्रहों शुभाशुभ विचार 30

4.4 शुभाशुभ, सूर्यादि ग्रहों का उदय विचार 31

4.5 वेदों के अधिपति और धातुमूलादि	31
4.6 संज्ञा, ग्रहों की अवस्था, वर्ण एंव दुस्थाविशेष	31-32
4.7 ग्रहों के द्रव्य तथा देवता	32
4.8. रव्यादि ग्रहों के रत्न एवं वस्त्र	32-33
4.9. ग्रहों के प्रदेश विभाग	33
4.10 ग्रहों की वर्ण विशेष संज्ञा	33
4.11 ग्रहों की कक्षा का क्रम तथा वारेशज्ञान	34
4.12 सूर्यादि ग्रहों के धातु	34
4.13 ग्रहों के रत्न	35
4.14 अयन, दिन आदि के स्वामी-	35
4.15 रव्यादि ग्रहों की विशेष दृष्टि	35
4.16 ग्रहों का स्थान बल-	35
4.17 ग्रहों के दिग्बल	36
4.18 दिशाओं के स्वामी एवं शुभाशुभ ग्रह	36
4.19 शत्रु और मित्र	36-37
4.20 सूर्यादि ग्रहों से विचारीय फल विमर्श-	37-38
4.21 भावों के कारक ग्रह	38
4.22 सूर्यादि ग्रहों के स्वरुप	39-40
4.23 ग्रहों का स्थान बल विशेष	40-41
4.24 ग्रहों की अधोमुख एवं ऊर्धमुख संज्ञा	42
4.25 स्थान विशेष में ग्रहों की विफलता	42
4.26 ग्रहों के अनुसार रोग प्रकार ज्ञान	43-44
4.27 राशियों का ग्रहानुसार फल काल	44

4.28 पुरुष और स्त्री 45
4.29 ग्रहों के पञ्च महाभूत 45

इकाई 5 : पञ्चाङ्गविधान

5.1 तिथि 47-48
5.2 तिथि स्वामी 49
5.3 तिथि संज्ञा 49-52
5.4. वार 52
5.5 वारदोष व परिहार, 53
5.6 नक्षत्र 53
5.7 नक्षत्रसंज्ञा 54
5.8 नक्षत्र जन्म पाद ज्ञान 55
5.9 चोरी गत वस्तुओं का लाभालाभ विचार 55
5.10 योग विष्कुम्भादि 56
5.11 करण 56
5.12 करणप्रकार 57
5.13 भद्राविचार 57
5.14 शुभाशुभ 57
5.15 पक्ष ज्ञान शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष। 57
5.16 मास विचार 58-61
5.17 संवत्सर विचार- 62-63
5.18 ऋतुज्ञान चक्र 63
5.19 अयन ज्ञान 63-64
5.20 नक्षत्रों के अनुसार मासों के नाम 64-65
5.21 संवत्सर नाम- 65-66
5.22 गण्डान्त विचार 66-67

5.23 भचक्र परिचय 67-72

इकाई 6 : मुहूर्त्तपरिचय 74-97

6.1मुहूर्त्तविचार 74-77

6.2गृहारम्भ 77-80

6.3गृहप्रवेश 80-82

6.4अक्षरारम्भ 82-83

6.5विद्यारम्भ 84

6.6उपनयन 84-88

6.7रवियोग 88

6.8सर्वार्थसिद्धि 88

6.9अशुभयोग 88-89

6.10 आनन्दादि योग 89

6.11 अशुभ योगों का परिहार 90

6.12 उत्पात, मृत्यु, काण और सिद्धियोग 90

6.13 कुलिकादि योग 90

6.14 नक्षत्र से शुभाशुभ फल ज्ञान 91

6.15 गोधूलिवेला 92

6.16 शुभ कार्य के आरम्भ करने का मुहूर्त्त 92

6.17 कर्ज देने-लेने का मुहूर्त 93

6.18 औषधि निर्माण-सेवन और सिलाई- कढ़ाई मुहूर्त्त 93

6.19 विक्रय करने एवं दुकान खोलने का मुहूर्त्त 94

6.20 वाहन, घोड़ा-हाथी खरीदने-बेचने का मुहूर्त्त 94

6.21 अभिजित 94-95

इकाई 7 : भावविचार परिचय 98-104

7.1 कारकग्रह 98

7.2 भाव फल विचार का निर्णय 98

7.3 भाव फल विचार का निर्णय 98

7.4 भावों से विचारणीय विषय 98-102

7.5 भावों की केन्द्रादि संज्ञा 102

इकाई 8 : गोचरविचार 105-121

8.1. गोचर काल 105

8.2 गोचर लग्न निर्णय 106

8.3 चन्द्र लग्न की प्रधानता 105

8.4 ग्रहों का राशियों में संचरण तथा शुभाशुभ फल 106-121

।।श्रीः।।

इकाई 1 : कौशल भारत मिशन एवं ज्योतिष शास्त्र कनिष्ठ सहायक की भूमिका का परिचय

1.1. **राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन** - 15 जुलाई, 2015 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने राष्ट्रीय कौशलभारत मिशन का शुभारंभ किया। कुशल भारत, भारत सरकार की एक पहल है जो कौशल प्रशिक्षण के द्वारा देश के युवाओं का व्यक्तिगत विकास कर उनको सशक्त उद्यमी और अधिक उद्यमशील बनाकर उनका तथा देश के आर्थिक विकास को उन्नत करके कुशल भारत और समृद्ध भारत बनाने के लिए शुरू किया गया है। राष्ट्रीय कौशल मिशन के अध्यक्ष माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी हैं।

भारत की 65% युवा आबादी को कौशल विकास के माध्यम से उद्यमशील बनाकर देश को एक वैश्विक शक्ति बना सकते हैं। अतः कुशल भारत सम्पूर्ण देश के 40 क्षेत्रों में पाठ्यक्रम प्रदान करता है जो राष्ट्रीय कौशल अर्हता मानक के तहत उद्योग और सरकार दोनों द्वारा मान्यता प्राप्त मानकों सहित हैं। यह पाठ्यक्रम एक शिक्षार्थी को कार्य के व्यावहारिक समन्वय के साथ-साथ उसको तकनीकी रूप से उद्यम करने में सक्षम बनाता है।

1.2. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन के उद्देश्य

- कौशल विकास का उद्देश्य युवाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण के द्वारा आजीविका प्रदान करना है।
- यह कौशल औपचारिक शिक्षा के साथ कौशल प्रशिक्षण के द्वारा उद्यमिता क्षमता में गुणवत्तापूर्ण परिणाम लाता है।
- कौशल विकास राष्ट्रीय मानकों के तहत प्रौद्योगिकी के माध्यम से कार्य क्षमता को बढ़ाना है।
- युवाओं का व्यक्तिगत विकास के साथ- साथ देश की आर्थिक वृद्धि को शिखर पर ले जाना है।

1.3. कौशल विकास और उद्यमशीलता मन्त्रालय-

कौशल विकास के द्वारा युवाओं की आजीविका क्षमता को बढ़ाने हेतु केन्द्र सरकार ने कौशल विकास एवं उद्यमशीलता मंत्रालय (एमएसडीई) का 26 मई 2014 को गठन किया। यह मन्त्रालय कौशल विकास के समस्त प्रयासों का समन्वय करने, कुशल जनशक्ति की मांग और आपूर्ति के बीच के अन्तर को दूर करने, व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण ढांचे का निर्माण करने, कौशल उन्नयन करने, न केवल मौजूदा

रोजगारों हेतु, बल्कि सृजित की जाने वाली नौकरियों के लिए भी नए-नए कौशलों का निर्माण करने के लिए अहर्निशम प्रयासरत है।

1.4. **मंत्रालय का उद्देश्य-** 'कुशल भारत' के दृष्टिकोण के लक्ष्यों को प्राप्त करने और उच्च मानकों के साथ बड़े पैमाने पर कुशल बनाना है। इन पहलों में इसकी सहायता करने के लिए निम्न संस्थाएँ कार्यरत हैं - प्रशिक्षण महानिदेशालय (डीजीटी), राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीईटी), राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी), राष्ट्रीय कौशल विकास निधि (एनएसडीएफ़) और 37 क्षेत्र कौशल परिषदें (एसएससी) के साथ-साथ 33 राष्ट्रीय कौशल प्रशिक्षण संस्थान [एनएसटीआई/एनएसटीआई (महिला)], डीजीटी के अंतर्गत लगभग 15000 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (आईटीआई) और एनएसडीसी के साथ 187 प्रशिक्षण भागीदार पंजीकृत हैं। मंत्रालय ने कौशल विकास केंद्रों, विश्वविद्यालयों और इस क्षेत्र के अन्य गठबन्धनों के साथ कार्य कर रहा है। इनके अतिरिक्त, संबंधित केंद्रीय मन्त्रालयों, राज्य सरकारों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, उद्योग एवं गैर-सरकारी संगठनों के साथ कौशल विकास को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कार्य कर रहा है तथा देश के कार्यबल को पुनः सुदृढ़ और सक्रिय कर रहे हैं; तथा युवाओं को घरेलु उद्यमों से लेकर अंतरराष्ट्रीय रोजगार और विकास के हेतु तैयार कर रहें हैं।

1.5. **प्रशिक्षण महानिदेशालय (डीजीटी)-** व्यावसायिक प्रशिक्षण, जिसमें महिलाओं का व्यावसायिक प्रशिक्षण से संबंधित कार्यक्रमों के लिए राष्ट्रीय स्तर पर विकास तथा समन्वय हेतु कौशल विकास एवं उद्यमशीलता मंत्रालय में प्रशिक्षण महानिदेशालय (डीजीटी) एक शीर्षस्थ संगठन है। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान राज्य सरकारों या संघराज्य क्षेत्रों के प्रशासनों के प्रशासनिक तथा वित्तीय नियन्त्रणाधीन हैं। डीजीटी भी अपने सीधे नियंत्रण में क्षेत्रीय संस्थानों के माध्यम से कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में व्यावसायिक प्रशिक्षण योजनाएँ संचालित करता है। राष्ट्रीय स्तर पर इन कार्यक्रमों का विस्तार करने की जिम्मेदारी विशेषतः सामान्य नीतियों, सामान्य मानक तथा प्रक्रियाओं, अनुदेशकों के प्रशिक्षण तथा व्यवसाय परीक्षण सम्बन्धित क्षेत्र में लेकिन औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों की दैनन्दिन व्यवस्था की जिम्मेदारी राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्रों के प्रशासनों की है।

1.6. **प्रशिक्षण महानिदेशालय मुख्य कार्य-**

- व्यावसायिक प्रशिक्षण हेतु समग्र नीतियाँ, मानदण्ड तथा मानक तैयार करना।

- शिल्पकारों तथा शिल्प अनुदेशकों के मामले में प्रशिक्षण के प्रशिक्षण सुविधाओं में विविधता लाना, उन्हें अद्यतन करना तथा उनका विस्तार करना।
- विशेष रूप से स्थापित प्रशिक्षण संस्थानों पर विशिष्ट प्रशिक्षण तथा अनुसंधान की व्यवस्था तथा आयोजन करना।
- शिक्षुता अधिनियम 1961 के अंतर्गत (**शिक्षुता संशोधन नियम 2019**) शिक्षुओं के प्रशिक्षण का पैमाना लागू करना उसका नियमन तथा विस्तार करना
- महिलाओं के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना
- व्यावसायिक मार्गदर्शन तथा रोजगार परामर्श प्रदान करना।
- अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों तथा दिव्यांगों की वेतन रोजगार तथा स्व रोजगार हेतु सामर्थ्य बढ़ाने में सहायता करना।

1.7. राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद(एनसीवीईटी) -

राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद की स्थापना भारत सरकार द्वारा 5 दिसम्बर 2018 को एक नियामक निकाय के रूप में की गई थी। यह 1 अगस्त 2020 से एनसीवीईटी मानकों को स्थापित करने, व्यापक नियमों को विकसित करने और व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल पारिस्थितिकी संस्थाओं, मूल्यांकन एजेंसियों और कौशल सूचना प्रदाताओं को मान्यता देता है और उनके कामकाज की निगरानी करता है। इस प्रकार इसका उद्देश्य अत्यधिक कुशल जनशक्ति की उपलब्धता को सुविधाजनक बनाना, रोजगार क्षमता में सुधार करना और भारतीय अर्थव्यवस्था के त्वरित विकास में योगदान देना है।

1..8. राष्ट्रीय कौशल विकास के प्रभाव-

- प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (पीएमकेवीवाई) से अब तक लगभग 1.37 करोड़ लोगों को सक्षम बनाकर नए कुशल भारत के लिए तैयार किया गया है।
- देश में कौशल विकास अब तक 720 से अधिक प्रधानमंत्री कौशल केंद्र स्थापित किए जा चुके हैं। ये शिक्षाशास्त्र एवं प्रौद्योगिकी के लाभ के अत्याधुनिक कौशल केंद्र हैं।

- एमएसडीई, पीएमकेवीवाई के तहत इसके पूर्व शिक्षण मान्यता (आरपीएल) कार्यक्रम के माध्यम से अनौपचारिक साधनों द्वारा प्राप्त कौशल को मान्यता देता है और प्रमाणित करता है, जिससे असंगठित क्षेत्र को संगठित अर्थव्यवस्था में लाना एक बड़ा परिवर्तन है। इस कार्यक्रम के तहत अब तक 50 लाख से अधिक लोग प्रमाणित और औपचारिक रूप से मान्यता प्राप्त कर चुके हैं।
- कुशल भारत देश में सभी कौशल विकास कार्यक्रमों में सामान्य मानदंडों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदारी लेता है ताकि वे सभी मानकीकृत और एक समान हों। व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण में बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए कुशल भारत के तहत आईटीआई इकोसिस्टम को भी शामिल किया गया है।

कुशल भारत में प्रशिक्षित युवा अब देश लेकर अंतरराष्ट्रीय स्तर की मांगों को भी पूरा करेंगे क्योंकि किसी भी राष्ट्र की सफलता सदैव शिक्षित एवं प्रशिक्षित लोगों पर निर्भर करती है और कुशल भारत इस युवा भारतीयों के लिए आत्मनिर्भर बनने का निश्चित अवसर प्रदान करेगा। जिससे भारत एक कुशल भारत और श्रेष्ठ भारत के रूप में विकसित होगा जहाँ सभी के लिए आजीविका और प्रतिष्ठा होगी।

1.9 ज्योतिष शास्त्र कनिष्ठ सहायक की भूमिका का परिचय

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का लक्ष्य व्यक्ति का सर्वाङ्गीण विकास करना है। देशों को इस समय कुशल एवं सक्षम जनशक्ति की आवश्यकता है। जिस आवश्यकता को इस मॉड्यूल योग्यता आधारित पाठ्यक्रम से पूर्ति की जा सकती है। 64 कलाओं में से एक ज्योतिषशास्त्र कौशल न केवल भारतीय सांस्कृतिक दैनिक मुहूर्त्तादि से सम्बन्धित विभिन्न विषयों, पचाङ्ग, संस्कार, सिद्धान्तों, प्रक्रियाओं और प्रथाओं की मूल समझ प्रदान करने के लिए शुरू किया गया है, बल्कि यह छात्रों के कौशल और व्यावसायिक आवश्यकताओं को भी पूरा करेगा तथा कौशल आधारित शिक्षा और प्रशिक्षण के माध्यम से रोजगार क्षमता में सुधार भी करेगा।

कनिष्ठ सहायक की भूमिका-

- उस संस्कृति एवं वातावरण की समझ विकसित करना जिसमें हम रहते हैं और ज्योतिष से सम्बन्धित संस्कारादि विभिन्न गतिविधियाँ करते हैं।

- पंचाग के सिद्धांतों और प्रक्रियाओं का ज्ञान प्रदान करना।
- कंप्यूटर सहित तकनीकी उपकरणों और ज्योतिषशास्त्र में इसके अनुप्रयोग का ज्ञान प्रदान करना।
- शिक्षार्थियों को विभिन्न मुहूर्त्त के व गण्डान्त के क्षेत्रों में शिक्षित करना और उसके बारे में उनकी समझ विकसित करना।
- उद्यमिता की भावना को प्रोत्साहित करना और शिक्षार्थी को स्व-रोजगार में प्रवेश कराने के लिए गुण विकसित कराना है।

मुख्य विशेषताएँ-

- यह पाठ्यक्रम मुहूर्त्तविचार, गृहारम्भ, गृहप्रवेश और व्यवसाय, सम्बन्धित गतिविधियों को करने के लिए आवश्यक मूलभूत कौशल विकसित करने में मदद करेगा।
- यह पाठ्यक्रम शुभाशुभ भावेश, भाव संचार, विश्लेषणात्मक, गृहक्लेश जैसी समस्याओं को सुलझाने की योग्यता और व्यक्ति के व्यावहारिक रूप, आकार, एवं स्वभाव जैसे कौशल सिखाने पर अधिक बल देगा।

आजीविका के अवसर-

ज्योतिषशास्त्र कनिष्ठ सहायक कौशल प्रशिक्षण के साथ नौवीं कक्षा पूरी करने पर यह पाठ्यक्रम छात्रों को अपनी शिक्षा को अद्यतन करने, सामान्य मुहूर्त्त निर्णय, गण्डान्त निर्णय, व्यक्ति विशेष के व्यवहार का पूर्वानुमान करने, व्यापार में साझेदारी चयन के क्षेत्रों में काम करने की अनुमति देगा।

सक्रिय गतिशीलता-

इस पाठ्यक्रम में भाग लेकर छात्र विभिन्न संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों के ज्योतिष, वास्तु विभाग तथा समाज के लिए सहायक होंगे।

इकाई- 2 ज्योतिश्शास्त्र का स्वरूप

2.1. भूमिका

श्वासोच्छ्वास रूपी वेद शब्द विद् धातु में घञ् प्रत्यय लगने पर निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है ज्ञान। जैसा कि ईशोपनिषद् का निर्देश है- **"अविद्ययामृत्युं तीर्त्वा विद्यया अमृतमश्नुते"**। ऋषियों ने मानव के जीवन को आध्यात्मिक, भौतिक और नैतिक दृष्टि से उन्नत करने के निमित्त चार पुरुषार्थों का अन्वेषण कर चार आश्रमों की योजना की थी।उन चार पुरुषार्थों की प्राप्ति हेतु मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र एवं पुराण के साथ चतुर्दशविद्याओं का आविष्कार किया था। यथा-

"अङ्गानि वेदाः चत्वारो मीमांसोन्यायविस्तरः।
धर्मशास्त्रं पुराणञ्च विद्यान्येत् चतुर्दश।।"

भगवान् श्रीपति स्तोत्रपरक अपौरुषेय प्रभुसंहिता ऋग्वेदादि चार वेद हैं। अपौरुषेय की परिधि में अवस्थित वेदों के मन्त्रद्रष्टा, युगानुरूप वेदनिधि की रक्षा के लिए शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द एवं ज्योतिष इन विशिष्ट वेदों के अध्ययन के लिए छः वेदांगों का आविर्भाव किया तथा वैज्ञानिक अनुसंधान तथा विश्व के उपकार के लिए भारतीय ऋषियों को प्रेरित किया। जैसा कि भास्कराचार्य ने कहा है -

"शब्दशास्त्रं मुखं ज्योतिषं चक्षुषी श्रोत्रमुक्तं निरुक्तं च कल्पः करौ।
या तु शिक्षा अस्य वेदस्य सा नासिका पादपद्मद्वयं च्छन्द आद्यैर्बुधः।।" सि.शि./म.अ./.अ./श्लोसं १०.

सूर्यादिग्रहार्क्षादीनां गतिं स्थितिं चाधारीकृत्य कृतं शास्त्रं ज्योतिषशास्त्रम्। अर्थात् सूर्यादि ग्रहों तथा नक्षत्रों की गति व स्थिति का बोध कराने वाला चक्षु ज्योतिषशास्त्र हैं।

पाणिनि ने पाणिनीयशिक्षा में **"ज्योतिषामयनं चक्षुः"** तथा भास्कराचार्य के सिद्धान्तशिरोमणि में **"वेदचक्षुः किलेदं स्मृतं ज्यौतिषम्"** का वर्णन किया है। पुनः नेत्र रूपी ज्योतिषशास्त्र समय ज्ञान हेतु अलङ्कृत है। जैसा कि नारद संहिता में वर्णन है-

"वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिश्शास्त्रमकल्मषम्।
विनैतदखिलं कर्म श्रौतं स्मार्त्तं न सिद्ध्यति ।।" ना.सं./पृ.सं.११।

चतुर्दश विद्याओं में मीमांसा शास्त्र अन्यतम है। **अथातो धर्मजिज्ञासा** इति मीमांसा सूत्रकर्ता जैमिनि ने **धर्मं जिज्ञासितव्यमिति तत्र को वा धर्मेति पृच्छे सत्यां तदाह यागादिरेव धर्मऽति।** उन छः अङ्गों में ज्योतिषशास्त्र दिक्, देशकाल, यज्ञ ,तप, दान ,व्रत ,और उपवासादि बीज है। अतः इसका अध्ययन ,अध्यापन ,संशोधन , संरक्षण एवं संवर्धन आवश्यक है। जहाँ सभी वेदवाङ्मयादि का एक ही सिद्धान्त है कि सभी लोगों को यज्ञ, दान, व्रत, और उपवासों के द्वारा ईश्वर की उपासना करनी चाहिए। अतः यज्ञ और सोलह संस्कारों की सफलता के लिए प्रारब्ध शास्त्र ज्योतिष ही है। जैसा कि लगधमुनि ने वेदाङ्गज्योतिष में कहा है -

"ज्योतिषमयनं पुण्यं प्रवक्ष्याम्यनुपूर्वशः।
सम्मतं ब्रह्मणेन्द्राणां यज्ञकालार्थसिद्धये।। " याजुषज्योतिषम् 2

"वेदाः हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ता कालानुपूर्वविहिताश्च यज्ञाः।
तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं स वेदयज्ञम्।।"-याजुषज्योतिषम् 3

सूर्यादयः नवग्रहाः, अश्विन्यादि सत्ताईस नक्षत्र , सिद्धान्त, संहिता, होरा आदि तीन स्कन्धों में ज्योतिषशास्त्र विवेचन है। यथा-

2.2. ज्योतिषशास्त्र का स्वरूप-

"स्कन्धत्रयात्मकं ज्योतिश्शास्त्रमेतत् षडङ्गवत्।
गणितं संहिता होरा चेति स्कन्धत्रयं मतम्।
जातकगोलनिमित्तप्रश्नमुहूर्तगणितनामानि।
अभिदधतीहषडङ्गान्याचार्या ज्योतिषे महाशास्त्रे।।"(प्र.मा.1.5.6)

सिद्धान्त, संहिता और होरा ज्योतिषशास्त्र के तीन स्कन्ध हैं एवं जातक, गोल, निमित्त, प्रश्न, मुहूर्त्त, गणित ये छः ज्योतिष के अंग हैं-

ज्यौतिषशास्त्रम्

प्रमाणम् | फलम्

सिद्धान्तः | संहिता | होरा

1 गोलः | 2 गणितम् | 3 निमित्तम् | 4 मुहूर्त्त | निमित्तम् | 5 प्रश्नः | 6 जातकम्

सिद्धान्तस्कन्ध-

सिद्धान्तः गणितम्),प्रमाणम्

↓

सिद्धान्तः	तन्त्रम्	करणम्

इस प्रकार सृष्टि से लेकर प्रलय पर्यन्त समय की गणना की जा सकती है, जैसे-सौर, सावन, चान्द्र, नाक्षत्र आदि नवविध काल मानों के ज्ञान का विधान तथा व्यक्त-अव्यक्त गणित के विचार का ज्ञान जिससे किया जाता है उसे सिद्धान्त स्कन्ध कहते हैं तथा गणित से ग्रहगति का निर्णय होने के कारण इसे तन्त्र भी कहा जाता है।

संहितास्कन्ध-

सम्पूर्ण शास्त्रज्ञान जिस स्कन्ध में पाया जाता है वही संहितास्कन्ध है। ग्रहगतियों के पर्यवेक्ष से प्रकृति में जायमान घटना विशेष का यहाँ विचार किया जाता है। ग्रहों की स्थिति के अनुसार ही सकल ब्रह्माण्ड की सुभिक्ष, दुर्भिक्ष और शकुनों का शुभाशुभ पूर्वानुमान देता हैं। अतः संहिताग्रन्थ ही सार्वभौम स्कन्ध है।

होरास्कन्ध-

इस शास्त्र की आवश्यकता का सारावली में कल्याणवर्मा ने इस प्रकार उद्घोष किया है-

"अर्थाजने सहायः पुरुषाणामापदर्णवे पोतः।

यात्रासमये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपरः।।"(सा.2.5)

मनुष्य इस शास्त्र से अर्थार्जन कर सकता है, विपदा के समय यह शास्त्र पोत जैसा कार्य करता है। मन्त्री जैसे राजा से परामर्श लेता है उसी प्रकार दैवज्ञ इस शास्त्र के द्वारा मानवों के लिए विदेशगमन यात्रादि विचार का शुभाशुभ सूचित करता है। अर्थात् ज्योतिषी अपनी दृष्टि से ब्रह्मा के द्वारा मानव के ललाट पर लिखी गई भाग्य पंक्तियों को हृदयंगम कर लोगों की सहायता करता है।

2.3. **ज्योतिषशास्त्र के प्रयोजन-** ज्योतिषशास्त्र के प्रयोजन के तीन प्रयोजन हैं। वैदिक प्रयोजन, लौकिक प्रयोजन एवं सुख प्रयोजन।

वैदिक प्रयोजन-वेदों में विहित यज्ञ व अनुष्ठानादि का उचित काल निर्णय।

अभिधेयञ्च जगतः शुभाशुभनिरूपणम्।

यज्ञाध्ययनसंक्रान्तिग्रहषोडशकर्मणाम्।

प्रयोजनञ्च विज्ञेयं तत्तत्कालविनिर्णयात्।।

विनैतदखिलं श्रौतस्मार्त्त कर्म न सिध्यति।

तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा रचितं पुरा।। (ना.सं.1.5-7)

लौकिक प्रयोजन- सूर्यादि ग्रहों की आकाशीय स्थिति का ज्ञान,विविध संस्कारों व वृत-उपवासादि , कृषि कार्यारम्भ, यात्रा, कुण्डली के द्वारा दुःख का समाधान व उन्नति, विवाहमेलापक, वास्तुविद्या शुभाशुभ मुहूर्त्तों का निर्धारण वृष्टि,महामारी-भूकम्प-उल्कापातादि के द्वारा आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक स्थितियों का परिज्ञान।

सर्वसुख प्रयोजन- परामर्शादि फलादेशों के द्वारा प्राप्त सुखानुभूति। जैसा कि तैत्तिरीय ब्राह्मण (1.5.2) में वर्णन है- **कृत्तिकाः प्रथमं, विशाखे उत्तमं, तानि देवनक्षत्राणि।**

अनुराधा: प्रथममपभरणीरुत्तमं तानि यमनक्षत्राणि।।

तानि वा एतानि यमनक्षत्राणि यान्येव देवनक्षत्राणि।

तेषु कुर्वीत यत्कारी स्यात् पुण्याह एव कुरुते॥

तथैव भास्कराचार्य के वचन हैं- '**यो ज्योतिषं वेत्ति नरः सः सम्यग् धर्मार्थकामान् लभते यशश्च**'।

ज्योतिष के अङ्गों का विचार-

जातक- तनु, धनु, सहज, सुख, संतान, रिपु, ज्याया, आयु, भाग्य, कर्म, आय और व्यय भावों से अनेक विषयों का विचार किया जाता है।

गोल- गोल ज्ञान से ग्रह नक्षत्रों की गति और स्थिति का ज्ञान होता है।

निमित्त- कृषि, वृष्टि, वास्तु, सामुद्रिक और शकुनों का विचार किया जाता है।

प्रश्न - नष्टजातक और नष्टवस्तुओं का प्रश्नशास्त्र के द्वारा शुभाशुभ फल का विचार किया जाता है।

मुहूर्त्त – वेद विहित यज्ञ कर्मो का इष्टफल एवं संस्कारादि कर्मों तथा वास्तुप्रतिष्ठा के लिए शुभ मुहूर्त्त का निर्णय किया जाता है।

गणित- दैनिन्दिन व्यवहार में सदैव गणित की आवश्यकता होती है। बिना गणित के काल गणना, व्यापार, समय शुद्धि आदि में सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

2.4. ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक –

"सूर्यः पितामहोव्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पराशरः।

कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुराङ्गिराः।।

लोमशः पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो भृगुः।

शौनकोष्टादशश्चैते ज्योतिश्शास्त्रः प्रवर्त्तकाः ।।"(भा.ज्यो. शा. इ. पृ.9)

इकाई का सारांश- मानव जीवन के रहस्यों का ज्ञान ज्योतिषशास्त्र के द्वारा ही संभव है। ज्योतिषशास्त्र की यह विशेषता है कि मनुष्य के द्वारा किए गए जन्मजन्मान्तरों के शुभ-अशुभ कर्म के परिणामस्वरूप उसके जीवन में आने वाले सुख-दुःख, जय-पराजय, उन्नति-अवनति, लाभ-हानि, यश- अपयश और भाग्योदय के समय के परिज्ञान से मनुष्य के लिए सफलता एवं समस्या का निवारण व मार्गदर्शन करता है। ज्योतिषशास्त्र व्यक्ति के जीवनं में एक दीपक की तरह कार्य करता है, जैसा कि वराहमिहिर ने बृहत्संहिता में कहा है-

"यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मणः पक्तिम्।

व्यञ्जयति शास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीप इवः।।"

इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में ज्योतिषशास्त्र की आवश्यकता है। अतः इस शास्त्र का उद्देश्य समाज के सभी प्रकार के कष्टों का समाधान करते हुए लोगों का उपकार करना है।

इकाई समाप्त

प्रश्न-1. ज्योतिशास्त्र के कितने स्कन्ध हैं? तीन- (सिद्धान्त, संहिता और होरा)

प्रश्न-2. ज्योतिषशास्त्र के कितने अङ्ग हैं? ज्योतिष के छः अंग हैं (जातक, गोल, निमित्त, प्रश्न, मुहूर्त, गणित)

प्रश्न-3. वेदाङ्गज्योतिष के आचार्य हैं? आचार्य लगधमुनि।

प्रश्न-4. सृष्टि से लेकर प्रलय पर्यन्त समय का आंकलन किस स्कन्ध से किया जाता है? सिद्धान्त।

प्रश्न-5. ज्योतिषशास्त्र के कितने प्रवर्तक हैं?(18) अष्टादश।

1. षड् वेदांगों में किस शास्त्र को नेत्र स्थान प्राप्त है? **ज्योतिषशास्त्र।**

2. होरा स्कन्ध को किस नाम से जाना जाता है? (**जातक व फलित**)

3. होरा स्कन्ध के मुख्यतः कितने भेद है? **पाँच भेद हैं-जातक, ताजिक, मुहूर्त, प्रश्न तथा संहिता।**

4. आचार्य वराहमिहिर के अनुसार गणित और फलित के मिश्रित रूप को कहा जाता है? **संहिता।**

बोधप्रश्न प्रश्न-

1. ज्योतिषशास्त्र का सामान्य परिचय दीजिए?
2. ज्योतिष के अङ्गों का विचार करते हुए ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तको का भी वर्णन कीजिए?
3. ज्योतिषशास्त्र के त्रिस्कन्धों के विषयों का विवेचन कीजिए?

इकाई-3 राशिशीलाध्यायः

प्रस्तावना - राशियों से मनुष्य के स्वभाव, रूप, और वर्णादि का सटीक निर्णय किया जाएगा और भी राशियों के अनेक प्रयोजन हैं।चर राशि के उदयकाल में प्रारम्भ किए गए कार्यों में स्थायित्व का अभाव होता है। स्थिर राशि के उदयकाल में सम्पादित किया गया कार्य नामानुगुण स्थिर होता है। द्विस्वभाव राशि के पूर्वाद्ध में प्रारम्भ किया गया कार्य दीर्घकालिक होगा लेकिन उत्तराद्ध में प्रारंभ होने वाले कार्य परेशानियों का सामना करना पडेगा और कार्य में स्थायित्व भी नहीं होगा। द्वार संज्ञक राशि के उदयकाल में नष्टवस्तु घर के निकट ही होगी तथा वह धातुमूलक होगी। बाह्यसंज्ञक राशि के उदयकाल में नष्टवस्तु घर के बाहर होगी होगी और संभवतः काष्ठ निर्मित होगी। गर्भसंज्ञक राशि के उदयकाल में नष्टवस्तु गृह के अंतः होगी तथा जीव संज्ञक होगी।पुरुष या विषम राशि में पुरुष ग्रह बलवान और स्त्री एवं सम राशि में स्त्री ग्रह बलवान होते है। ग्रह जिस राशि में हों उस राशि की दिशा में भाग्योदय व लाभ का अवसर प्राप्त होने पर सफलता प्राप्त होती है।

राशि - (The Sign) का अर्थ है विकास (To spread)। 'अशे रश' सूत्र से 'राश' धातु में इण् प्रत्यय (Suffix) लगने से राशि निष्पन्न होती है । अब जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि कितनी राशि हैं और उनके नाम क्या हैं? How many Rashis are their? बारह (12) राशियाँ। There is twelve Rashis.

3.1. राशियों के नाम/Names of Rashis.

मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाऽथवृश्चिककः।

धन्वी मकरः कुम्भो मीनस्त्विति राशिनामानि ।।

मेष (Aries), वृष (Taurus), मिथुन (Gemini), कर्क (Cancer), सिंह (Leo), कन्या (Virgo), तुला (Libra), वृश्चिक(Scorpio), धनु (Sagittarius), मकर (Capricorn), कुम्भ(Aquarius),
मीन (Pisces)

इसे भी समझे- क्रान्तिवृत्त के 360 अंशों के तारे समूहों को 12 से भाग देने पर एक राशि का प्रमाण 30 अंश प्राप्त होता है। अर्थात् एक राशि का प्रमाण 30 अंश होता है।

12 मीन	1 मेष	2 वृष	3 मिथुन
11 कुम्भ3			4 कर्क
10 मकर			5 सिंह
9 धनु	8 वृश्चिक	7 तुला	6 कन्या

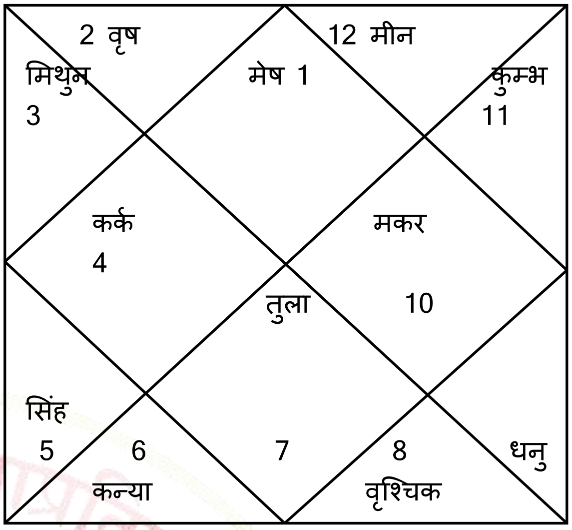

3.2. राशियों के पर्यायवाची / Synonym names of Rashis

क्रिय-ताबुरि-जितुम-कुलीर-लेय-पाथोन-जूक कौर्प्याख्याः।

तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चान्त्यभं चेत्थम् ।।

क्रियः = मेषः, ताबुरिः = वृषभः , जितुमः = मिथुनम् ,कुलीरः = कर्कटः, लेयः = सिंहः, पाथोनः = कन्या, जूकः = तुला, कौर्पिकः = वृश्चिकः, तौक्षिकः = धनुः, आकोकेरः = मकरः, हृद्रोगः = कुम्भः, अन्त्यभं = मीनः

जातकपारिजात के अनुसार राशियों के पर्यायवाची शब्द-

मेषाजविश्वक्रियुम्बुराद्या वृषोक्षगोताबुरुगोकुलानि ।

द्वन्द्वं नृगुग्मं जुतुमं यमं च युगं तृतीयं मिथुनं वदन्ति।।(जा.पा.1.4)

मेष, अज, विश्व, क्रिया, तुम्बुर और आद्य मेष के नाम हैं। वृष उक्ष,गो, तावुरू और गोकुल ,वृष के नाम हैं। द्वन्द्व , नृयुग्म, यम, युग, और तृतीय मिथुन को कहते हैं।

कुलीरकर्कोटकर्कटाख्याः कण्ठीरवः सिंहमृगेन्द्रलेयाः।

पाथोनकन्यारमणीतरुण्यस्तौली वणिक्जूकतुलाघटाश्च ।।(जा.पा.1.5)

कुलीर, कर्कोटक और कर्कट, कर्क को कहते हैं। कंठीरव, सिंह, मृगेन्द्र और लेय सिंह को कहते हैं। पाथोन ,कन्या रमणी और तरुणी कन्या को कहते हैं। तौली, वणिक्, जूक, धट और तुला को कहते हैं।

अल्पष्टमं वृश्चिककौर्पिकीटाः धन्वी धनुश्चापशरासनानि ।

मृगो मृगास्यो मकरश्च नक्रः कुम्भो घटस्तोयधराभिधानः।। (जा.पा.1.6)

अलि, अष्टम, वृश्चिक, कौर्पि और कीट, वृश्चिक के नाम हैं। धन्वी, धनुः, चाप और शरासन, धनु के नाम हैं। मृग, मृगास्य, मकर और नक्र, मकर के नाम हैं। कुम्भ, घट और तोयघर कुम्भ को कहते हैं।

मीनान्त्यमत्स्यपृथुरोमझषा वदन्ति दस्रादिकर्क्षनवपादयुताः क्रियाद्याः।

चक्रस्थिता दिविचरा दिननाथ सङ्ख्याः क्षेत्रर्क्षराशिभवनानि भसंज्ञितानि।। (जा.पा.1.7)

मीन, अन्त्य, मत्स्य, पृथुरोन और झष, मीन को कहते हैं। चार चार चरणों के एक एक नक्षत्र होते हैं। अश्विनी आदि नक्षत्रों के नव 2 चरणों के सहित मेषादि बारह राशि चक्र (वृत्त) में रहते हुए आकाश में घूमा करते हैं और ये ही 12 राशियाँ क्षेत्र, ऋक्ष, राशि, भवन और भ इत्यादि नाम से कहे जाते हैं।

3.3. मेषादि राशियों के स्वामी

भौमः शुक्रबुधेन्दुसूर्यशशिजाः शुक्रारजीवार्कजाः।

मन्दो देवगुरु क्रमेण कथिता मेशादिराशीश्वराः।। (फ.दी. रा.6)

मेष का मंगल।वृष का शुक्र।मिथुन का बुध।कर्क का चन्द्रमा। सिंह का सूर्य ।कन्या का बुध।तुला का शुक्र । वृश्चिक का मंगल।धनु का बृहस्पति। मकर का शनि। कुम्भ का शनि और मीन का बृहस्पति है।

12 मीन- गुरु	1 मेष- कुज	2 वृष- शुक्र	3 मिथुन-बुध
11 कुम्भ- शनि			4 कर्क- चन्द्र
10 मकर- शनि			5 सिंह- सूर्य
9 धनु-गुरु	8 वृश्चिक- कुज	7 तुला- शुक्र	6 कन्या- बुध

1.1. सूर्यादि ग्रहों के उच्च- नीच स्थान –

ग्रह	उच्चस्थान	परमोच्चस्थान	नीचस्थान	परमनीचस्थान
सूर्य	मेष	10	तुला	10
चन्द्र	वृष	3	वृश्चिक	3
मङ्गल	मकर	28	कर्क	28
बुध	कन्या	15	मीन	15
गुरु	कर्क	5	मकर	5
शुक्र	मीन	27	कन्या	27
शनि	तुला	20	मेष	20

यथा- **सूर्यादुच्चग्रहाः क्रियो वृषमृगस्त्रीकर्किमीनास्तुला**

दिक्-त्र्यंशैर्मनुयुक्तिथीषुभनखांशैस्तेऽस्तनीचाः क्रमात्।।(फ.दी. रा.6)

सूर्यादिग्रहों की जिसकी जो उच्च राशि हैं। उससे 7 वीं उसकी नीच राशि है। सूर्यादि ग्रहों की जो उच्चराशि हैं उनमें अति उच्च (परमोच्च) क्रम से 10 ,3 ,28 ,15 ,5 ,27 ,20 अंश तक हैं और सातवीं राशियों के उक्त अंश के अनुशार परम नीचांश हैं।

1.2. ग्रहों के स्वामित्व एवं मूलत्रिकोण-

मूलत्रिकोणा हरिताबुरूक्रिया वधूधनुस्तौलिघटा दिवाकरात् ।

सितासिताक्राङ्गिरसां नखांशकास्त्रिणमादौ परतः स्वमन्दिरम् ।।

वृषादिभागत्रयमुच्चमिन्दोर्मूलत्रिकोणं परस्तु सर्वम्।

मेषादिगा द्वादशभागसंज्ञाः कुजस्य कोणं परतः स्वभं स्यात् ।।

कन्यार्द्धमुच्चं,शशिजस्य कोणं दशांशकाः, स्वर्क्षफलं शरांशाः।

कुम्भस्त्रिकोणं, फणिनायकस्य तुङ्गं नृयुग्मं रमणी गृहं स्यात्।।

यथा- मूलत्रिकोण बोधक चक्र-

ग्रह	मूलत्रिकोण	अंश	स्वगृह
सूर्य	सिंह	0-20	21-30
चन्द्र	वृष	4-30	कर्क राशि

मङ्गल	मेष	0-12	13-30
बुध	कन्या	16-20	21-30
गुरु	धनु	0-10	11-30
शुक्र	तुला	0-5	6-30
शनि	कुम्भ	0-20	21-30

राहु का मूलत्रिकोंण कुम्भ है ,मिथुन 25 उच्च है और कन्या स्वगृह है।

1.3. मेषादि राशियों का स्वरूप/ symbolizes of Rasis .

ह्रस्वा गोऽजघटाः समा मृगनृयुक् चापान्त्यकर्कोटकाःदीर्घा वृश्चिककन्यकाहरितुला मेषादिपुंयोषितौ। प्रागादिक्रियगोनृयुक्कटकभान्येतानि कोणान्वितान्याहुः क्रूरशुभौ चरस्थिरद्वन्द्वानि तानि क्रमात् ।।(जा.पा.1.13)

मेष , वृष और कुम्भ ,ह्रस्व है। मकर ,मिथुन ,धनु ,मीन ,और कर्क ,सम है। वृश्चिक ,कन्या ,सिंह और तुला दीर्घ हैं। मेषादि द्वादश राशि क्रम पुरुष और स्त्री संज्ञक हैं। मेष, मि. सि. तु. ध. कु.ये नर. राशि हैं। एवं वृष. कर्क. कन्या. वृश्चिक. मकर. मीन. ये स्त्री राशि हैं। मेष, वृष , मिथुन, कर्क, अपने –अपने पञ्चम और नवम से सहित पूर्वादि दिशा के राशि हैं। जैसे मे.सिं. ध. पूर्व की । वृष, कन्या, मकर, दक्षिण की । मिथुन , तुला , कुम्भ, पश्चिम की ।और कर्क, वृश्चिक, मीन उत्तर दिशा की राशि हैं। मेष , मिथुन, सिंह , तुला , धनु, कुम्भ यह क्रूर हैं। एवं वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मक, मीन ये शुभ हैं। मेषादि द्वादश राशि क्रम से चर स्थिर द्विस्वभाव संज्ञक हैं। जैसे – 1,4,7,10 यह चर हैं। 2,5,8,11 ये स्थिर हैं और 3,6,9,12 ये द्विस्वभाव हैं और मीन ये शुभ हैं।

वीर्योपेता निशि वृषनृयुक्कर्किचापाजनक्राः हित्वा युग्मं भवनमपरे पृष्टपूर्वोदयाश्च ।
शेषाः शीर्षोदयादिनबलाः श्रेष्ठता राशयस्ते मीनाकारद्वयमुभयतः काललग्नं समेति ।। (जा.पा.1.14)

वृष, मिथुन , कर्क, धनु, मेष और मकर ये राशियाँ रात्रि में बली हैं। मिथुन को छोड़ कर ये ही पृष्ठोदय हैं।शेष) सिंह , कन्या ,तुला , वृश्चिक , कुम्भ (राशि दिन में बली हैं। ये ही और मिथुन शीर्षोदय हैं। मीन दो मछलियों के मुख पूंछ मिलकर उभयोदय हैं। जो पीठ से उदय होते हैं वे पृष्ठदोय जो शिर से उदय होते हैं वे शीर्षोदय हैं।

बृहज्जातक (1/5) **वराहमिहिर -**

मत्स्यौ घटी नृमिथुनं सगदं सवीणं चापी नरोऽश्वजघनो मकरो मृगास्यः ।

तौलीससस्यदहना प्लवगा च कन्या शेषाः स्वनामसदृशाः खचराश्च सर्वे ।।

मेष राशि – मेषाकार, वृषभ राशि – वृषभाकार, मिथुन राशि – नृमिथुनम्, कर्कराशिः- कर्कटाकारः

सिंहराशिः – सिंहाकारः, कन्याराशिः - कन्या , तुलाराशिः – तौली, वृश्चिकराशिः - वृश्चिकाकारः

धनुराशिः – चापी, मकरराशि – मृगमुखसदृशः, कुम्भराशिः –घटधारिपुरुषः, मीन मत्स्यद्ध्यसदृशः

3.7.राशियों की चर-स्थिर-द्विस्वभाव संज्ञा, क्रूराक्रूर,स्त्री, पुरुष,पित्तादि धातु विचार-

चरस्थिरद्विस्वभावाः क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ ।

पित्तानिलत्रिधात्वैक्य-श्लैस्मिकाश्च क्रियादयः ।।

बृहत्पाराशर होराशास्त्र (5/5-6) पराशर

मेषादि राशि क्रम से चर स्थिर द्विस्वभाव संज्ञक हैं। जैसे – 1,4,7,10 यह चर हैं। 2,5,8,11 ये स्थिर हैं और 3,6,9,12 ये द्विस्वभाव हैं।

चर राशि /Movable Signs	स्थिर राशि/Stable Signs	द्विस्वभाव राशि/Dual Signs
मेष	वृष	मिथुन
कर्क	सिंह	कन्या
तुला	वृश्चिक	धनु
मकर	कुम्भ	मीन

1.4. राशियों की क्रूराक्रूर,स्त्री एवं पुरुष संज्ञा-

क्रूरराशि/ Odd Signs	अक्रूर राशि/ Even Signs	पुरुषराशि/ Male Signs	स्त्रीराशि/ Female Signs
मेष	वृष	मेष	वृष
मिथुन	कर्क	मिथुन	कर्क
सिंह	कन्या	सिंह	कन्या
तुला	वृश्चिक	तुला	वृश्चिक
धनु	मकर	धनु	मकर
कुम्भ	मीन	कुम्भ	मीन

1.5. पित्तादि धातु विचार एवं रोग ज्ञान

पित्त / Bile	वात/ Blown	कफ /Phlegm	मिश्रित /Mixed
मेष	वृष	कर्क	मिथुन
सिंह	कन्या	वृश्चिक	तुला
धनु	मकर	मीन	कुम्भ

3.10. राशियों का विशेष वर्गीकरण

मेषराशिः - **रक्तवर्णो बृहद्गात्रश्चतुष्पाद् रात्रिविक्रमी ।।**

पूर्ववासी नृपज्ञातिः शैलचारी रजोगुणी ।

पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशिः कुजाधिपः।। (बृ. पा.हो. रा. 6-7)

मेष राशि का वर्ण लाल, शरीर लम्बा, चार पाद, रात्रि में पराक्रम, पूर्व दिशा में निवास, क्षत्रिय जाति, पर्वतों में विचरण, रजो गुण, पृष्ठ से उदय, अग्नि तत्त्व, तथा स्वामी मंगल है।

वृषभराशिः - **श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घः चतुष्पाच्छर्वरीवली ।**

याम्येट् ग्राम्यो वणिग् भूमी रजः पृष्ठोदयो वृषः ।। (बृ. पा.हो. **रा.** 8)

वृष राशि का वर्ण सफेद, लम्बा शरीर, चार पाद, रात्रि में बली, याम्य दिशा में निवास, ग्राम में विचरण, वैश्य जाति, भूमि तत्त्व, रजो गुण, पृष्ठ से उदय, तथा स्वामी शुक्र है।

मिथुनराशिः -

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम् ।

प्रत्यग्वायुर्द्विपाद्रात्रिबली ग्रामव्रजोऽनिली ।।

समगात्रो हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः । (बृ. पा.हो. रा. 9-10)

गदा - वीणा सहित पुरुष-स्त्री की जोडी, शीर्ष से उदय, पश्चिम दिशा में निवास, वायुतत्त्व, दो पैर, रात्रि में बल, ग्रामों में विचरण, वात प्रकृतिक, समान शरीर, हरित वर्ण (Green) , और स्वामी बुध है।

कर्कटराशिः - **पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान् ।।**

बहुपादचरः स्थूल्यतनुः सत्त्वगुणी जली ।

पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगाङ्काऽधिपतिः स्मृतः ।।(बृ. पा.हो.11.12)

कर्क राशि का पाटल वर्ण (Blackish), वन में विचरण करने वाला, ब्राह्मण जाति, रात्रि में बली, अनेक पैर, मोटा शरीर, सत्त्व गुण, जल तत्त्व, पृष्ठ से उदय, इसका स्वामी चन्द्र है।

सिंहराशिः - सिंहः सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात् क्षत्रियो वनी

शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पाण्डुः पूर्वेड् द्युवीर्यवान् ।। (बृ. पा.हो.12)

सिंहराशिका अधिपति सूर्य, सत्त्व गुण, चार पैर, क्षत्रिय वर्ण, पर्वत जङ्गल में विचरण, शीर्ष से उदय, बड़ा शरीर, पाण्डुरवर्ण (Yellowish), पूर्वदिशा में निवास, तथा दिन में बली होता है।

कन्याराशिः - **पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता ।**

शीर्षोदया च मध्याङ्गा द्विपाद्याम्यचरा च सा ।।

सा सस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभञ्जिनी ।

कुमारी तमसा युक्ता बालभावा बुधाधिपाः।।(बृ. पा.हो.13.14)

कन्या राशि का पर्वतीय प्रदेशों में विचरण, दिन में बल, शीर्ष से उदय, मध्यम शरीर, दो पैर, दक्षिण दिशा में निवास, शस्य सहित अग्नि का हाथ में धारण, वैश्य जाति, चित्र वर्ण (Mixed), वायुतत्त्व, कुमार अवस्था, तमोगुण, एवं स्वामी बुध है।

तुलाराशिः - शीर्षोदयी द्युवीर्याढ्यस्तुलः धटः कृष्णो रजोगुणी ।

पश्चिमो भूचरो घाती शूद्रो मध्यतनुर्द्विपात् ।। (बृ. पा.हो. 15)

तुला राशि का शीर्ष से उदय, दिन में प्रबलता, धट - तुला, कृष्णवर्ण, रजोगुण, पश्चिम दिशा में निवास, भूमि में विचरण, हिंसक प्रकृति, शूद्रजाति, मध्यम शरीर, दो पैर, तथा स्वामी शुक्र है।

वृश्चिकराशिः - स्वल्पाङ्गो बहुपाद्ब्राह्मणो बली ।

सौम्यस्थो दिनवीर्याढ्यः पिशङ्गो जलभूवहः ।।

रोमस्वाढ्योऽतितीक्ष्णाग्रो वृश्चिकश्च कुजाधिपः। (बृ. पा.हो.16)

वृश्चिक राशि का सम शरीर, बहुत से पैर, ब्राह्मण जाति, बिल में संस्थान, उत्तर दिशा में निवास, दिन में प्राबल्य, पिशङ्गवर्ण (Golden), जलतत्त्व, भूमि में विचरण, रोमयुक्त शरीर, अत्यधिक तेज डंक, तथा स्वामी भौम है।

धनुराशिः - पृष्ठोदयी त्वथ धनुर्गुरुस्वामी च सात्त्विकः ।।

पिङ्गलो निशिवीर्याढ्यः पावकः क्षत्रियो द्विपात् ।

आदावन्ते चतुष्पादः समगात्रो धनुर्धरः ।।

पूर्वस्थो वसुधाचारी बह्मणा कृतः ।(बृ. पा.हो. 17-18)

धनुराशि का पृष्ठ से उदय, स्वामी गुरु, सत्वगुण, पिङ्गलवर्ण (Nut Brown), रात्रि में प्राबल्य, अग्नितत्त्व, क्षत्रियवर्ण, पूर्वार्ध में दो पैर और उत्तरार्ध में चार पैर, समान शरीर, धनुर्धारण, पूर्व दिशा में निवास, पृथ्वी पर विचरण तथा तेजस्वी तेज होता है।

मकरराशिः - मन्दाधिपस्तमी भौमी याम्येट् च निशि वीर्यवान् ।।

पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः कर्बूरो वनभूचरः।

आदौ चतुष्पादोऽन्ते तु विपदो जलगो मतः ।।(बृ. पा.हो.19-20)

मकर राशि का स्वामी शनि, तामस गुण, भूमितत्त्व, दक्षिण दिशा में निवास, रात्रि में प्राबल्य, पृष्ठ से उदय, बडा शरीर, चित्रवर्ण, वन तथा भूमि मे चलन, पूर्वार्ध में चतुष्पद, उत्तरार्ध में पद रहित और जल में संचरण होता है।

कुम्भराशिः - **कुम्भः कुम्भी नरो बभ्रुर्वर्णो मध्यतनुर्द्विपात् ।**

द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः।।

शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः ।(बृ. पा.हो.21-22)

कुम्भ राशि का घडा लिए हुए पुरुष जैसा स्वरूप, भूरा (Brown) वर्ण, मध्यम शरीर, दो पैर, दिन में प्राबल्य, पानी के मध्यम में संचरण, वायुतत्त्व, शीर्ष से उदय, तामस गुण, शूद्रजाति, पश्चिम दिशा में निवास तथा स्वामी शनि है।

मीनराशिः - मीनौ पुच्छास्यसंलग्नौ मीनराशिर्दिवाबली ।।

जली सत्त्वगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः ।

अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी ।।

सुराचार्याधिपश्चेति राशीनां गदिता गुणाः ।

त्रिंशद्भागात्मकानां च स्थूलसूक्ष्मफलाय च ।। (बृ. पा.हो.23-24)

मीन राशि का मुखपुच्छ मिलित-दो मछलियों जैसा स्वरूप (Symbolizes), दिन में प्राबल्य, जलतत्त्व, सत्त्वगुण, स्वस्थ चेहरा, जल में संचरण, विप्रजाति, पाद रहित (Pastoralist) , मध्यम शरीर, उत्तर दिशा में निवास, मुख-पुच्छ दोनों से उदय, (Bisexuality उभयोदय) तथा स्वामी गुरु होता है। इस प्रकार स्थूल एवं सूक्ष्म फलादेशों के लिए त्रिंशत् भागात्मक राशियों का गुण है।

3.11. कालपुरुष के अङ्ग विभाग का राशि विन्यास-

शीर्षमुखबाहुहृदयोदराणिकटिबस्तिसंज्ञानि।

उरू जानू जङ्घे चरणाविति राशयोऽजाद्या।।

कालनरस्यावयवान् पुरुषाणां चिन्तयेत्प्रसवकाले।

सदसद् ग्रहसंयोगात् पुष्टाः सोपद्रवास्ते च (ल.जा.रा.4-5)

इस राशि चक्र का न्यास काल पुरुष के शरीर में इस प्रकार विद्यमान है मेष शिर ,वृष मुख ,मिथुन भुजा, ,कर्क हृदय ,सिंह उदर, (कन्या कमर , तुला वस्ति(मूत्रेन्द्रिय) , वृश्चिक गुह्येन्द्रिय,धनु उरू (जांघ)

मकर)दोनों घुटने , कुम्भ दोनों जांघें और मीन दोनों पैर हैं। राशि चक्र के अङ्ग विभाग का तात्पर्य यह है कि जन्म अथवा प्रश्न वा गोचर में जो राशि शुभग्रह राशियों से युक्त अंग पुष्ट पापाक्रान्त हों उस राशि वाले अङ्ग निर्बल होते हैं। अर्थात् जो राशि शुभ ग्रह से युक्त हो वह अङ्ग पुष्ट होगा यह विशेष रूप से स्मरणीय है।

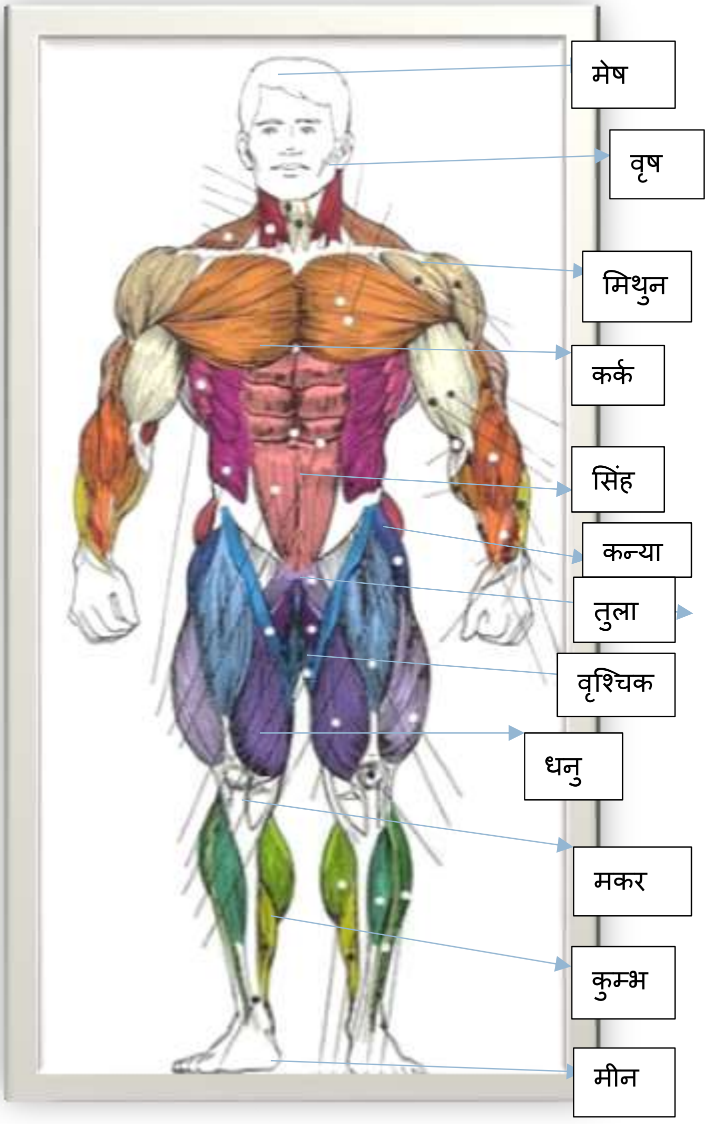

3.12. भावविशेष के सम्बन्ध में मेषादि राशियों की चतुष्पदादि संज्ञा बल-

चापापरार्द्धहरिगोमकरादिमेषा मानस्थिता बलयुताश्च चतुष्पदाख्याः।

कन्यानृयुग्मघटतौलिशरासनाद्या लग्नान्विता यदि नरा द्विपदा बलाढ्याः।।(जा.पा.1.16)

धनु का परार्ध ,सिंह ,वृष ,मकर का पूर्वार्द्ध और मेष ये चतुष्पद हैं और ये दशम भाव में बली होते हैं। कन्या ,मिथुन ,कुम्भ ,तुला ,धनु का पूर्वार्द्ध ये नर राशियाँ हैं और ये लग्न में बली होती हैं।

मृगापरार्द्धान्त्यकुलीरसंज्ञा जलाभिधाना बलिनश्चतुर्थे।

जलाश्रयो वृश्चिकनामधेयः स सप्तमस्थानगतो बली स्यात्।।(जा.पा.1.17)

मकर का परार्ध ,मीन और कर्क जलचर हैं और चौथे भाव में बली होती है, वृश्चिक जलाश्रय है ,वह सप्तम स्थान में बली होती है।

केन्द्रं गतोऽह्नि द्विपदो बलाढ्यः चतुष्पदाः केन्द्रगता रजन्याम्।

कीटास्तु सर्वे यदि कणकस्थाः सन्धिद्वये वीर्ययुता भवन्ति।।(जा.पा.1.18)

द्विपद नर केन्द्र में प्राप्त होकर दिन में बली होते हैं। चतुष्पद ,केन्द्र में जाने पर रात्रि में बली होते हैं। सभी कीट जलचर (केन्द्र में प्राप्त होकर दोनों सन्ध्या) –सुबह और सायं में बली होते हैं।

3.13 राशियों की धातु -मूल एवं जीव संज्ञा –

धातुर्मूल जीवमित्याहुरार्या मेषादीनामोजयुग्मे तथैव।

स्वर्णाद्धातुर्मृत्तिकान्तं तृणान्तं वृक्षान्मूलं जीवकूटः स जीवः।।(जा.पा.1.19)

विद्वान लोग मेषादि राशियो की धातु,मूल और जीव संज्ञा कहते हैं) ,जैसे 1,4,7,10 धातु 2,5,8,11 मूल और 3,6,9,12जीव हैं एवं विषम् और सम संज्ञा कहें सोना से मिट्टी तक धातु। वृक्ष से तृण तक मूल। प्राणीमात्र जीव है।

3.14. मेषादि राशियों की विप्रादि संज्ञा-

मीनालिवृषभा विप्राश्चापाजहरयो नृपाः।

कुम्भयुग्मतुला वैश्याः शूद्रा स्त्रीमृगकर्कटाः।। (जा.पा.1.20)

मीन ,वृश्चिक ,और वृष ब्राह्मण वर्ण हैं। धनु ,मेष और सिंह क्षत्रिय वर्ण हैं। कुम्भ ,मिथुन और तुला वैश्य वर्ण हैं। कन्या ,मकर और कर्क शूद्र वर्ण हैं।

3.15. मेषादि राशियों के वर्णविशेषः-

रक्तगौरशुककान्तिपाटलाः पाण्डुचित्ररुचिनीलकाञ्चनाः।

पिङ्गलः शबलबभ्रुपाण्डुरास्तुम्बुरादि भवनेषु कल्पिताः।।(जा.पा.1.23)

मेष का लाल ,वृष का सफेद ,मिथुन का हरा ,कर्क का रक्तश्वेत ,सिंह का ,श्वेत कन्या का विविध वर्ण तुला का नील ,वृश्चिक का स्वर्णवर्ण पीला मकर का पीतश्वेत युक्त ,कुम्भ का नेवला के सदृश और मीन का श्वेत वर्ण है।

3.16. मेषादि बारह राशियों के द्रव्य-

वस्त्राद्यं शालिमुख्यं ,वनफलनिचयः ,कन्दली ,मुख्यधान्यम् ,

त्वक्सारं ,मुद्गपूर्वं ,तिलवसनमुखं ,त्विक्षुलोहादिकं च।

शस्त्राश्वं ,काञ्चनाद्यं,जलजनिकुसुमं , तोयजातं समस्तम् ,

द्रव्याण्याहुः क्रियादिष्वबलबलयुतेष्वल्पताधिक्यभाञ्जि।।(जा.पा.1.24)

1- वस्त्र और धान्य। 2 वान्यफल। 3 हरिणविषेश 4 उत्तम। 5जिसकी त्वचा में बल हो। 6 मूंग आदि। 7 तिल वस्त्र आदि। 8 ईख और लोहा आदि । 9 शस्त्र और घोडा। 10 सुवर्णादि। 11 जल में होने वाले फूल। 12 समस्त जल में होने वाली वस्तुएँ हैं।

3.17. मेषादिराशियों के देश-

क्रमात्पाटलकर्नाटचरचोलवसुन्धराः।

पाणड्यकेरलकोल्लासमलयावनिसैन्धवाः।।

उदक्पाञ्चायवनकोशलक्षितिसंज्ञकाः।

मेषादिसर्वराशीनां वासदेशाः प्रकीर्तिताः।।

पाटल ,कर्नाट ,चर ,चोल ,पांडु ,केरल ,कोल्लास ,मलय ,सैन्धव ,पाञ्चाल ,यवन ,और कोशल ये क्रम से मेषादि राशियों के देश हैं।

मेषूरणोदयकलत्ररसातलानि स्युःकेन्द्रकण्टकचतुष्टयसंज्ञितानि ।

लग्नात्रिकोणभवनं नवपञ्चमं च स्याद्रित्रिकोणमुदयान्नवमं वदन्ति ।।(जा.पा.1.43)

(4, 7, 1, 10)भावों की केन्द्र ,कण्टक और चतुष्टय संज्ञा हैं। लग्न से (5, 9)की त्रिकोण संज्ञा है। लग्न से नवम को त्रित्रिकोंण कहते हैं।

तनुसुखमदनाज्ञा राशयः केन्द्रसंज्ञाःपणफरभवनानि स्वायपुत्राष्टमानि।

व्ययरिपुगुरुदुश्चिक्यानि चापोक्लिमानि प्रभवति चतुरस्रं मृत्युबन्धुद्वयं च ।।(जा.पा.1.45)

(10, 7, 4, 1)भावों को केन्द्र स्थान, (11, 8, 5, 2)भावों को पणफर। (3, 9, 6, 12)भावों को आपोक्लिम संज्ञक, अष्टम और चतुर्थ भाव चतुरस्त्र कहते हैं।

दुश्चक्यायारिमानान्युपचयभवनान्याहुरा चार्यमुख्याः

शेषाः पीडर्क्षसंज्ञा नवधनजलधीकामरन्ध्रान्त्यहोराः।।

एते भावास्तदीशेन्दुजसितगुरुभिः संयुता वीक्षिता वा

नान्यैर्युक्ता न दृष्टा यदि शुभफलदा जन्मतःपृच्छतो वा ।।(जा.पा.1.44)

(3, 6,10,11) इन चार स्थानों की उपचय संज्ञा हैं। शेष 8 स्थान (9,2,4,5,7,8,12,1) पीडर्क्ष संज्ञक हैं। ये भाव जन्मकुण्डली या प्रश्नकुण्डली में अपने – अपने भाव में बुध, शुक्र , बृहस्पति से युक्त हो या देखे जाते हों और अन्य ग्रह से युक्त दृष्ट नहीं हो तो शुभ फल देते हैं।

अथ राशियों के उदयमान-

नखा जिना विंशतिरष्टयुक्ता रदाङ्गलोका वियदर्णवाख्याः।

मेषादिमानं क्रमशो वदन्ति तुलादिषट्कस्य विलोमतस्ते।।(जा.पा.1.46)

मेशादि छ राशियों के क्रम से 40, 36, 32, 28, 24, 20 उदय अंश मान हैं और तुलादि छः राशि के विलोम से ही मान हैं।

इकाई का सार-

राशियों की भेदबोधक सारणी

राशि	वर्ण	जाति	दिक्	विक्रम	गुण	तत्त्व	धात्वादि	कारक	पाद	उदय	शरीर	विचरण	चरादि	पुं.स्त्री	क्रूराक्रूर	पित्तवात.	ऋतुः	स्वामी
मेष	रक्त	क्षत्रिय	पूर्व	रात्रि	रज	अग्नि	धातु	पित्त	चतुष्पद	पृष्ठ	दीर्घ	पर्वत	चर	पुं	क्रूर	पित्त	वसन्त	कुज
वृष	श्वेत	वैश्य	दक्षिण	रात्रि	रज	भूमि	मूल	वात	चतुष्पद	पृष्ठ	दीर्घ	ग्राम	स्थिर	स्त्री	अक्रूर	वात	ग्रीष्म	शुक्र
मिथुन	हरित	शूद्र	पश्चिम	रात्रि	मिश्रित	वायु	जीव	मिश्रित	द्विपाद	शीर्ष	सम	ग्राम	द्विस्वभाव	पुं	क्रूर	कफ	ग्रीष्म	बुध
कर्क	पाटल	ब्राह्मण	उत्तर	रात्रि	सत्त्व	जल	धातु	कफ	बहुपाद	पृष्ठ	स्थूल	वन	चर	स्त्री	अक्रूर	मिश्रित	वर्षा	चन्द्र
सिंह	पाण्डुर	क्षत्रिय	पूर्व	दिवा	सत्त्व	अग्नि	मूल	पित्त	चतुष्पद	शीर्ष	बृहत्	वन/ पर्वत	स्थिर	पुं	क्रूर	पित्त	वर्षा	सूर्य
कन्या	चित्र	वैश्य	दक्षिण	दिवा	तम	वायु/ भूमि	जीव	वात	द्विपाद	शीर्ष	मध्यम/ कुमारी	पर्वत/ ग्राम	द्विस्वभाव	स्त्री	अक्रूर	वात	शरत	बुध
तुला	कृष्ण	शूद्र	पश्चिम	दिवा	रज/ हिंसक	वायु	धातु	मिश्रित	द्विपाद	शीर्ष	मध्यम	भूमि/ वाणिज्य	चर	पुं	क्रूर	कफ	शरत	शुक्र

वृश्चिक	पिशङ्ग	ब्राह्मण	उत्तर	दिवा	तम/ मिश्रित	जल	मूल	कफ	बहुपाद	पुच्छ	स्वल्प	बिल/ भूमि	स्थिर	स्त्री	अक्रूर	मिश्रित	हेमन्त	कुज
धनु	पिङ्गल	क्षत्रिय	पूर्व	रात्रि	सत्त्व	अग्नि	जीव	पित्त	द्विः/चतुः	पृष्ठ	सम	रणभूमि	द्विस्वभाव	पुं	क्रूर	पित्त	हेमन्त	गुरु
मकर	चित्र	वैश्य	दक्षिण	रात्रि	तम	भूमि	धातु	वात	चतुः/अ.	पृष्ठ	बृहत्	वनभूमि	चर	स्त्री	अक्रूर	वात	शीत	शनि
कुम्भ	बभ्रु	शूद्र	पश्चिम	दिवा	तम	वायु	मूल	मिश्रित	द्विपाद	शीर्ष	मध्यम	जल	स्थिर	पुं	क्रूर	कफ	शीत	शनि
मीन	श्वेत	ब्राह्मण	उत्तर	दिवा	सत्त्व	जल	जीव	कफ	अपाद	उभय	स्वस्थ/ मध्यम	जल	द्विस्वभाव	स्त्री	अक्रूर	मिश्रित	वसन्त	गुरु

इस प्रकार राशियों के द्वारा वर्ण, जाति, दिशा, पराक्रम, तत्त्व,धातु, कारक, शरीर, पुँल्लिग, स्त्रीलिङ्ग और ऋतु आदि से लाभालाभ के समय ज्ञात होगा कि लाभकर ग्रह धातु संज्ञक राशिगत हों तो धातु का लाभ, यदि मूल संज्ञक में हों तो काष्ठनिर्मित वस्तुओं का और यदि वे ग्रह जीव संज्ञक राशि में हों तो जीव का लाभ होगा। इसके अतिरिक्त इनके द्वारा शरीर के अंगों का व रोगों का कालपुरुष के अनुसार निर्णय करने के उपरान्त उचित उपाय किया जा सकता है।

इकाई समाप्त

बहु चयनात्मक प्रश्न-

प्रश्न-1. किससे मनुष्य के स्वभाव, रूप, और वर्णादि का सटीक निर्णय किया जाता है? राशियों से।

प्रश्न-2. राशियाँ कितनी हैं? बारह।

प्रश्न-3. राशियाँ कितने प्रकार की होती हैं? तीन प्रकार की (चर, स्थिर और द्विस्वभाव)।

प्रश्न-4. (4, 7, 1, 10) भावों को संज्ञा दी गई हैं? केन्द्र , कण्टक और चतुष्टय संज्ञा।

प्रश्न-5. (5, 9) भावों को क्या संज्ञा दी गई हैं? की त्रिकोंण संज्ञा।

प्रश्न-6. (11, 8, 5, 2) भावों को क्या संज्ञा दी गई हैं? पणफर।

प्रश्न-7. (3, 9, 6, 12) भावों को क्या संज्ञा दी गई हैं? आपोक्लिम।

प्रश्न-8. मेष राशि का स्वामी है? कुज।

प्रश्न-9. चन्द्र की मूलत्रिकोण राशि कौनसी है? वृष राशि।

प्रश्न-10. वृष राशि का वर्ण हैं? श्वेत वर्ण।

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. स्थिर राशि .... है। (मेष/वृष)

2. **तुला राशि का.....................अधिपति है।** (मंगल/शुक्र)

लघूत्तरीय प्रश्न-

1. राशियों की द्विपद् आदि का ज्ञान कैसे करते हैं?
2. केन्द्र, पणफर एवं आपोक्लिम स्थानों को लिखिए।
3. उपचय एवं अनुपचय भावों के नाम लिखिए।
4. ग्रहों की उच्च एवं नीच राशियों का वर्णन कीजिए।
5. मेष राशि के स्वरूप का वर्णन प्रस्तुत कीजिए।

दीर्घोत्तरीय प्रश्न -

1. कालपुरुष के अङ्गविभाग में मेषादि राशियों के अंगों को दर्शाइए।
2. राशियों के स्वरूप का वर्ण कीजिए।
3. पुरुष एवं स्त्री राशियों का प्रयोजन क्या है?
4. धातु मूलादि संज्ञाओं का चिन्तन कब करना चाहिए?
5. मेषादि राशियों के स्वामियों का सामान्य वर्णन कीजिए।

परियोजना-

1. आपके परिवार में स्थित सदस्यों की राशियों एवं उनके स्वरूप को दर्शाइए।

इकाई 4 (ग्रहभेदाध्याय)

प्रस्तावना-राशियों और भावों के महत्त्व को आपने पिछली इकाई में पढ़ा एवं उनके फल विचार को भी समझा। अब अग्रिम इकाई में, हम नौ ग्रहों के प्रभाव के बारे में जानेंगे कि उनकी क्या आवश्यकता है? और जगत पर उनका प्रभाव कैसे पड़ता है? तथा क्यों पडता है? ग्रह बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय हैं, जो एक राशि से दूसरी राशि में एवं भावों में जाने से विश्व की घटनाओं पर क्या प्रभाव डालते हैं? और लोगों के जीवन में उनके कारण क्या-क्या घटनाएँ आती हैं? ग्रह मेषादि राशियों में व तनु,धन आदि भावों में प्रवेश करते ही तथा अपनी दृष्टि से उन बारह राशियों एवं बारह भावों में अपने गुण का प्रभाव अवश्य छोड़ते हैं। उसी ग्रहों के गुण के कारण संसार में तथा उसमे निवास करने वाले लोगों के दैनन्दिन जीवन में अनेक प्रभाव देखने को मिलते हैं। जैसा कि इसका समाधान अपने ग्रन्थ **षट्पञ्चाशिका में पृथुयशसा** ने कहा है कि-

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्यास्ति वृद्धिः।

पापैरेवं तस्य भावस्य हानि-र्निर्देष्टव्या पृच्छतां जन्मतो वा ।। (3)

4.1. कालपुरुष के आत्मादि कारक ग्रह -

कालास्यात्मा भास्करश्चित्तमिन्दुःसत्त्वं भौमः स्याद्बुधश्चन्द्रसूनुः।

देवाचार्यः सौख्यविज्ञानसारः कामः शुक्रो दुःखमेवार्कसूनुः।।(जा.पा.2.1)

सूर्य आत्मा, चन्द्रमा चित्त (मन), मङ्गल पराक्रम, बुध वचन, बृहस्पति सुख तथा विज्ञान का कारक, शुक्र काम और शनि दुःख के कारक हैं। जन्मकुण्डली में बली ग्रह का अङ्ग पुष्ट, निर्बल का निर्बल समझना चाहिए।

4.2. सूर्यादि ग्रहों की राजा एवं कुमारादि संज्ञा-

दिनेशचन्द्रौ राजानौ सचिवौ जीवभार्गवौ।

कुमारो वित् कुजो नेता प्रेष्यस्तपननन्दनः।।(जा.पा.2.2)

सूर्य और चन्द्रमा राजा, बृहस्पति और शुक्र मन्त्री, बुध राजकुमार, मङ्गल नेता और शनि दूत हैं।

उपग्रहा भानुमुखग्रांशाःकालादयःकष्टफलप्रदायःस्युः।।5।।

क्रमशः कालपरिधिधूमार्द्धप्रहराह्वयाः।

यमकण्टककोदण्डमान्दिपातोपकेतवः।।(जा.पा.2.6)

सूर्य आदि ग्रहों के अंश कालादि कष्ट फल देने वाले उपग्रह हैं। काल ,परिधि, धूम, अर्ध प्रहर यमघण्ट कोदण्ड, मान्दि उपकेतु,पात, ये क्रम से सूर्यादि उपग्रहों के नाम हैं।

भानुः श्यामलल्लोहितद्युतितनुश्चन्द्रः सिताङ्गोयुवा ,

दूर्वाश्यामलकान्तिरिन्दुतनयः संरक्तगौरः कुजः।।

मन्त्रीगौरकालेवरःसिततनुःशुक्रोऽसिताङ्ग शनिः ,

चानिलाकृतिदेहवानहिपतिः केतुर्विचित्रद्युतिः।।

सूर्य-श्याम और लाल मिश्रित वर्ण है। चद्रमा सफेद रंग का युवा है। बुध दूर्वा के सदृश हरितवर्ण है। लाल और सफेद मिला हुआ वर्ण मंगल का है। बृहस्पति गौर वर्ण के शरीर वाला है। शुक्र का श्वेत शरीर है। शनि का कृष्ण, नीले रङ्ग का राहु और विचित्र वर्ण का केतु का शरीर होता है।

इसे भी समझे-

सूर्य के-हेलि, सूर्य, तपन, दिनकृत् ,भानु, पूषा, अरुण और अर्क नाम हैं।चन्द्रमा के-सोम शीतद्युति ,उडुपति, ग्लौ, मृगाङ्क, इन्दु और चन्द्र नाम हैं। मंगल के-आर, वक्र ,क्षितिज, रुधिर, अङ्गारक और क्रूर नेत्र नाम हैं।बुध के-सौम्य, तारातनय, बुध, विद्, बोधन और इन्दुपुत्र नाम हैं। बृहस्पति के मंत्री, वाचस्पति ,गुरु सुराचार्य, देवेज्य और जीव नाम हैं। शुक्र के-काव्य, सित,भृगुसुत, आच्छ ,आस्फुजित् और दानवेज्य नाम हैं। शनि के-छायासूनु, तरणितनय, कोंण ,शनि, आर्कि और मन्द नाम हैं।राहु के-सर्प, असुर, फणि, तम, सैहिकेय और अगु नाम हैं।केतु के-ध्वज ,शिखी, केतु, नाम हैं।गुलिक और मान्दि ये दो गुलिक (शनि के अंश) के नाम हैं। ये सभी नाम प्रसिद्ध हैं ।

4.3. ग्रहों से शुभाशुभ विचार-

प्रकाशकौ शीतकरप्रभाकरौ, ताराग्रहाःपञ्च धरासुतादयः।

तमः स्वरूपौ शिखिसिंहिकासुतौ, शुभाः शशिज्ञामरवन्द्यभार्गवाः।।

क्षीणोन्दुमन्दरविराहुशिखिक्ष्माजाःपापास्तु पापयुतचन्द्रसुतश्च पापः।

ते पामतीव शुभदौ गुरुदानवेज्यौ, क्रूरौ दिवाकरसुतक्षितिजौ भवेताम्।।

शुक्लदिरात्रिदशकेऽहनि मध्यवीर्यशली, द्वितीयदशकेऽतिशुभप्रदोऽसौ।

चन्द्रस्तृतीयदशके बलवजितस्तु सौम्ये क्षणादिसहितो यदि शोभनःस्यात्।।(जा.पा.2.8-10)

चन्द्रमा और सूर्य (प्रकाश) करने वाले हैं। मंगलादि पाँचों (मं.बु. बृ. शु.श.) तारा गृह हैं। केतु और राहु तम- (अन्धकार) स्वरूप हैं। चन्द्रमा , बुध, बृहस्पती और शुक्र शुभग्रह हैं। क्षीण चन्द्रमा शनि, सूर्य, राहु, केतु और मंगल पाप ग्रह हैं। पापग्रह से युक्त बुध भी पापग्रह हैं, इनमें बृहस्पति और

शुक्र विशेष शुभ हैं। शनि और मंगल क्रूर हैं। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से दश दिन चन्द्रमा मध्य बली रहते हैं। फिर दश दिन पूर्ण बली, तीसरे दशक में बलहीन रहते हैं। परन्तु यदि चन्द्रमाशुभ ग्रहों से दृष्टियुत हों तो शुभ होते हैं।

4.4. सूर्यादि ग्रहों का उदय विचार-

रव्याराराहुमन्दाश्च पृष्ठेनोद्यन्ति सर्वदा ।

शिरसा शक्रचन्द्रज्ञा जीवस्तूभयतो व्रजेत् ।।(जा.पा.2.11)

सूर्य, मङ्गल, राहु और शनि सदा पृष्ठ से उदित होते हैं। शुक्र ,चन्द्रमा और बुध शिर से उदित होते हैं। बृहस्पति पृष्ठ और शिर दोनों प्रकार से उदित होते हैं।

4.5. वेदों के अधिपति और धातुमूलादि संज्ञा-

शाखाधिपा जीवसितारबोधना धातुस्वरूपद्यपचरौ कुजारुणौ ।

मूलप्रधानौ तुहिनाकरार्कजौ जीवौ सितार्यौ तु विमिश्र इन्दुजः।।(जा.पा.2.15)

बृहस्पति, शुक्र, मङ्गल और बुध शाखाओं के स्वामी हैं। जैसे ऋग्वेद गुरु, यजुर्वेद का शुक्र, सामवेद का मङ्गल और अथर्ववेद का बुध है। मङ्गल और सूर्य धातु स्वरूप ग्रह हैं। मूल प्रधान चन्द्र और शनि हैं। शुक्र और बृहस्पति जीव हैं। बुध मिश्र संज्ञक हैं।

4.6. ग्रहों की अवस्था-

दीप्तिः प्रमुदितः स्वस्थः शान्तः शक्तः प्रपीडितः।

दीनः खलस्तु विफलो भीतोऽवस्था दश क्रमात् ।।(जा.पा.2.16)

1 दीप्त, 2 मुदित, 3 स्वस्थ, 4 शान्त, 5 शक्त, 6 प्रपीड़ित, 7 दीन, 8 खल, 9 विकल और 10 भीत ये क्रम से ग्रहों की दश अवस्थाएँ होती हैं।

स्थानविशेष दुस्थाविशेष-

स्वोच्चत्रिकोणपगतः प्रदीप्तः स्वस्थः स्वहेगे मुदितः सुहृद्भे।

शान्तस्तु सौम्यग्रहवर्गयातः शक्तोऽतिशुद्धः स्फुटरश्मिजालैः।।

ग्रहाभिभूतस्त्वतिपीडितः स्यादरातिराश्यंशगतोऽतिदीनः।

खलस्तु पापग्रहवर्गयोगान्नी वेऽतिभीतो विफलोऽस्तयातः।।(जा.पा.2.17-18)

अपनी उच्चराशि में त्रिकोंण में स्थित ग्रह प्रदीप्त होता है। अपने ग्रह में स्थित ग्रह स्वस्थ, मित्र के ग्रह में स्थित मुदित, शुभ ग्रह के वर्ग में स्थित ग्रह शान्त, स्फुटरश्मिमिजालों से अत्यन्त शुद्ध ग्रह शक्त ,ग्रहों से पराजित (हारा हुआ) अतिपीडित ,शत्रु की राशि और नवांश में प्राप्त ग्रह अतिदीन , पापग्रह के वर्ग योग से खल, नीच में अतिभीत और अस्त ग्रह विकल होता है।

ग्रहों के वर्णविशेष-

वर्णास्ताम्रसितारक्तहरितापीतकर्बुराः।

कृष्णकान्तिरिनादीनां नष्टादौ च प्रकीर्तिताः।।(जा.पा.2.19)

सूर्यादि ग्रहों के वर्ण ताम्र, सफेद , बहुत लाल, हरा, पीला, चित्र, और कृष्ण वर्ण हैं। ये नष्ट द्रव्यादि के ज्ञान में उपयोगी होते हैं।

4.7. रव्यादि ग्रहों के द्रव्य एवं अधिदेवता –

द्रव्याणि ताम्रमणिकाञ्चनशुक्तिरौप्यमुक्तान्ययश्च दिननाथमुखग्रहाणाम्।

वह्नयम्बुषण्मुखहरीन्द्रशचीविरञ्चिमुख्या दिवाकरमुखादधिदेवताः स्युः।।(जा.पा.2.20)

सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ताम्र, मणि, सुवर्ण, शुक्ति, रूपा, मोती और लोह द्रव्य हैं। सूर्यादि गृहों की क्रम से अग्नि, जल, कार्तिकेय, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी और ब्रह्मा अधिदेवता हैं।

4.8. रव्यादि ग्रहों के रत्न-

माणिक्यं दिननायकस्य, विमलं मुक्ताफलं शीतगोः

माहेयस्य च विद्रुमं मरकतं सौम्यस्य गारुत्मकम्।।

देवेज्यस्य च पुष्परागमसुराचार्यस्य वज्रं शनैः

नीलं निर्मलमन्ययोश्च गदिते गोमेदवैडुर्यके ।।(जा.पा.2.21)

सूर्य का माणिक्य,चन्द्रमा का स्वच्छ मोती, मंगल का विद्रुम, बुध का गारुत्मक, बृहस्पति का पुष्पराग शुक्र का हीरा, शनि का निर्मल नील, राहु का गोमेदमणि, केतु का वैदूर्य रत्न है।।

ग्रहों के वस्त्र-

स्थूलाम्बरं नूतनचारूचेलं क्रशानुतोयाहतमध्यमानि।।

दृढांशुकं जीर्णामिनादिकानां वस्त्राणि सर्वे मुनयो वदन्ति ।।(जा.पा.2.22)

मुनियों ने सूर्य का मोटा, चन्द्रमा का नया रमणीय, मंगल का जला, बुध का जलहत, गुरु का मध्यम ,शुक्र का दृढ, शनि का पुराना वस्त्र कहा है।

4.9. ग्रहों के प्रदेश विभाग

देवतोयतटवह्निविहाराहाः कोशगेहशयनोत्करदेशाः।

भानुपूर्वनिलयाः परिकल्प्या वेश्मकोणनिलयावहिकेतू ।।

सूर्य का देवालय, चन्द्रमा का जलाशय, मंगल की अग्निशाला, बुध का क्रीडाभूमि, बृहस्पति का भंडारगृह ,शुक्र का शयनागार, शनि की ऊसरभूमि, राहु और केतु का गृह और कोंण वासस्थल है ।

लङ्कादिकृष्णा सरिदन्तमारः सितस्ततो गौतमिकान्तभूमिः।।

विन्ध्यान्तमार्यः सुरनिम्नगान्तं बुधः शनिः स्यात्तुहिनाचलान्तः।।(जा.पा.2.25)

लङ्का से कृष्णा नदी पर्यन्त मङ्गल का प्रदेश है। कृष्णा नदी से गौतमी नदी पर्यन्त शुक्र का ,गौतमी से विन्ध्य पर्वत तक गुरु का, विन्ध्य से गङ्गा नदी तक बुध का और गङ्गा से हिमालय पर्वत शनि का प्रदेश है। यहाँ सूर्य और चन्द्रमा का प्रदेश नहीं कहा गया पीछे के श्लोक देवतोय तट के अनुसार सूर्य का देवभूमि (मेरु) और चन्द्रमा का जल (समुद्र) प्रदेश कहना चाहिए ।

4.10.ग्रहों की वर्ण विशेष एवं सत्त्वादि संज्ञा

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजार्कौ क्षत्रियौ द्विज।

शशिसौम्यौ वेश्यवर्णौ शनिः शूद्रो द्विजोत्तमः।। (बृ. पा.)

बृहस्पति और शुक्र ब्राह्मण हैं। सूर्य और मङ्गल क्षत्रिय हैं। वैश्य का स्वामी चन्द्रमा है। शूद्र का बुध और अंत्यजों का स्वामी शनि है।

आदित्यामरमन्त्रिशीतकिरणाः सत्त्वप्रधानग्रहाः

शुक्रज्ञौ सरजोगुणौ शनिधरापुत्रौ तमःस्वामिनौ ।।(जा.पा.2.26)

सूर्य , बृहस्पति और चन्द्रमा सत्त्वगुणी हैं। शुक्र और बुध रजोगुणी हैं। शनि और मङ्गल तमोगुणी हैं।

ग्रहों की नरादि संज्ञा, महाभूत, एवं अधिपति

4.11. ग्रहों की कक्षा का क्रम -

कक्षायां क्रमशो दिनेशतनयाज्ज्योतिर्भचक्राश्रिताः ।

छायासूनुगुरुक्षमाजदिनकृच्छुक्रेन्दुपुत्रेन्दवः।।(जा.पा.2.27)

अपनी – अपनी कक्षाओं में शनि आदि ग्रह ज्योतिषचक्र (नक्षत्र-राशि-मण्डल) में भ्रमण करते हैं। सबसे ऊपर शनि, उसके नीचे गुरु, उसके नीचे मङ्गल, फिर सूर्य, फिर शुक्र, फिर बुध, सबसे नीचे (पृथिवी के ऊपर) चन्द्रमा की कक्षा है।

वारेश ज्ञान- रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, एवं शनि सात वार होते हैं। इनके क्रम का निर्धारण उपर्युक्त ग्रहों की कक्षा के आधार पर किया जाता है। शनि से प्रारम्भ कर अधोऽधः क्रम से चौथी-चौथी कक्षा का ग्रह वार का स्वामी होता हैं। यथा शनि से चौथी कक्षा सूर्य की, अतः पहला वार रविवार, रवि से चौथी कक्षा चन्द्र की अतः दूसरा वार सोमवार आदि। **मन्दादधः क्रमेण स्युश्चतुर्था दिवसाधिपाः**।(सू.सि. 12.78)

सूर्य के निकट उसकी रश्मियों में आने पर प्रायः ग्रह अपनी स्वाभाविक गति को छोड़कर तेज या धीमा चलने लगता है। यह स्थिति बुध पर सामान्य रूप से लागू होती है। सूर्य से शनि पर्यन्त सातों ग्रहों का भ्रमण-क्रम राहु व केतु से भिन्न होता है। राहु एवं केतु सदा पीछे की ओर अर्थात् मीन, कुम्भ के क्रम से चलते हैं। अतः इन ग्रहों को वक्री ग्रह कहते हैं। पञ्च तारा ग्रह मंगल से शनि तक मार्गी (सीधी गति) या वक्री (उल्टी गति) से चलते हैं। सूर्य और चन्द्रमा कभी वक्रगति से नहीं चलते। शनि-गुरु-मंगल-सूर्य-शुक्र-बुध-चन्द्रमा के क्रम से ग्रह अपनी- अपनी कक्षा में संचरण करते हैं।

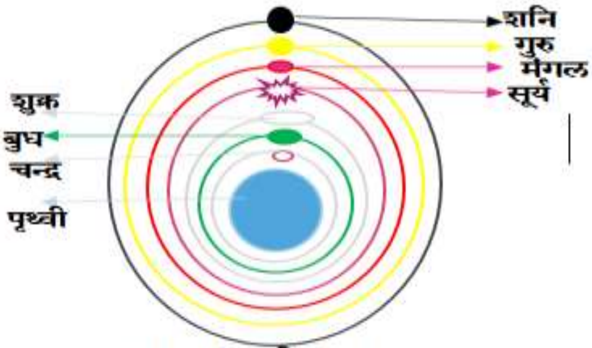

ग्रहकक्षा प्राचीन मत

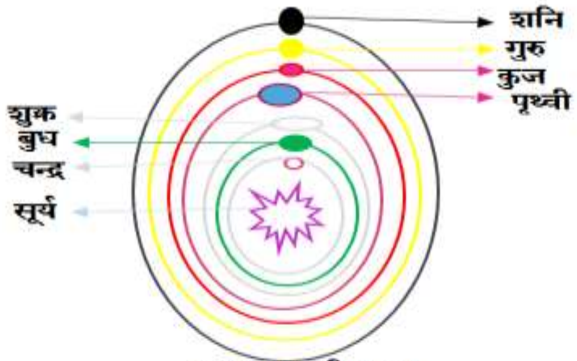

ग्रहकक्षा नवीन मत

अन्य मत से-

एवसाकादागोलास्ते पवनाख्या ग्रहाश्रयाः।

अधोऽधः क्रमतो ज्ञेयाः शनेश्चन्द्रावधिस्थिताः।।

आदौ शनिर्गुरुस्तस्मात्ततो भौमस्ततो रविः।

ततः शुक्रो बुधस्तस्मात् तत इन्दुरिति स्फुटम्॥

4.12.सूर्यादि ग्रहों के धातु -

मज्जास्नायुवसाऽस्थिरशुक्ररुधिरत्वग्धातुनाथाः क्रमाद्

आरार्कीज्यदिनेशशुक्रशशभृत्तारासुताः कीर्तिताः।।(जा.पा.2.28)

गुरु-वसा Fat	1 कुज- मज्जा pith	शुक्र -वीर्य	बुध-चर्म
शनि- स्नायु	**धातु विचार**		चन्द्र- रक्त
शनि- स्नायु			सूर्य- अस्थि
गुरु-वसा	8 कुज- मज्जा	शुक्र -वीर्य	बुध-चर्म

4.13. सूर्यादि ग्रहों के रस -

लवणकटुकषायस्वादुतिक्ताम्लमिश्राः शशिरविशनिजीवारासुरेज्यज्ञनाथाः।

अयनदिवसपक्षत्वर्त्वब्दमासक्षणेशा रविकुजसिसौम्या मन्दजीवेन्दवश्च।।(जा.पा.2.29)

रस	लवण	कटु	कषाय	मधुर	तिक्त	अम्ल	मिश्रित
ग्रह	चन्द्र	रवि	शनि	बृहस्पति	मङ्गल	शुक्र	बुध

4.14. अयन, दिन आदि के स्वामी-

अयन	दिन	पक्ष	ऋतु	वर्ष	मास	क्षण
सूर्य	कुज	शुक्र	बुध	शनि	बृहस्पति	चन्द्रमा

सूर्य का छः मास में, मंगल का दिन भर में, शुक्र का 15 दिन में,बुध का दो मास में,गुरु का एक मास में और चन्द्र का क्षण भर का फल होता हैं।) **प्रश्न के लग्न में जिस ग्रह का नवांश हो वह ग्रह उस नवांश पर हो, उतने अयन आदि काल पर वह ग्रह फल देता है**

4.15. रव्यादि ग्रहों की विशेष दृष्टि –

शनिरतिबलशाली पाददृग्वीर्ययोगे सुरकुलपतिमन्त्री कोणदृष्टौ शुभः स्यात्।

त्रितयचरणदृष्ट्या भूकुमारःसमर्थःसकलगगनवासाः सप्तमे दृग्बलाढ्याः।।(जा.पा.2.31)

एक चरण दृष्टिबल से शनि बली होता है, अर्थात् 3 रे और 10 वें भावों में शनि की पूर्ण दृष्टि होती है। बृहस्पति 5 ,9 भावों को पूर्ण देखता है। मङ्गल तीन चरण दृष्टि से बली होता है, यानि 4 वे और 8 वे

भावों को पूर्ण देखता है। सभी ग्रह 7 वें भाव में पूर्ण दृग्बली होते हैं। तथा भावों की गणना अपने – अपने स्थान से करना चाहिए ।

4.16. ग्रहों का स्थान बल-

स्वोच्चत्रिकोणस्वसुहृद्-दृगाणराश्यंशवैशेषिकवर्गवन्तः।

आरोहवीर्याधिकविन्दुकास्ते खेचारिणः स्थानबलाधिकाःस्युः।।

नीचापरिपापखगयोगनिरीक्ष्यमाणास्तद्वर्गसन्धिलघुबिन्दुदुरंशकाश्च।

आदित्यरश्मिपरिभूतपराजितास्ते दृष्ट्यादिशक्त्यसहिताश्च न शोभनाःस्युः।।(जा.पा.2.33-34)

अपने-अपने उच्च, त्रिकोण, मित्रगृह, द्रेष्काण, राशि, नवांश, परिजातादि नैशैषिकवर्ग, आरोहवीर्य (भावतुल्य और अधिकबिन्दु (अष्टवर्ग में 4 से अधिक शुभ चिह्न) वाले गृह स्थानबली होते हैं एवं नीच और शत्रुगृह में रहने वाले,पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट, पापवर्ग ,सन्धि तथा लघु बिन्दु (4से कम शुभ चिह्न), पापांश वाले, सूर्य के किरण में व्याप्त (अस्त) और दृष्टि वल से हीन ग्रह शुभ नहीं होते, अर्थात् ये अशुभ होते हैं।

4.17.ग्रहों के दिग्बल-

विलग्नपातालवधूनभोगा बुधामरेज्यौ भृगुसूनुचन्द्रौ।

मन्दो धरासूनुदिवाकरौ चेत् क्रमेण ते दिग्बलशालिनः स्युः।।

लग्न में बुध और बृहस्पति, सुख (चतुर्थ) में शुक्र और चन्द्र, दशम में मंगल और सूर्य दिग्बलशाली हैं।

जैत्रा वक्रसमागमोपगसितज्ञारामरेज्यासिताः

दिव्याशायनगेन्दुतिग्मकिरणौ चेष्टाबलांशाधिकाः ।।(जा.पा.2.36)

शुक्र, बुध, मङ्गल, गुरु और शनि ये ग्रह यदि युद्ध में विजयी हों या वक्री हों या चन्द्रमा से युक्त हों तो उसके चेष्टाबल पूर्ण होते हैं चन्द्र और सूर्य के उत्तरायन में चेष्टाबल अधिक होते हैं।

क्रमेण दृक्स्थाननिसर्गचेष्टादिक्कालवीर्याणि च षड्बलानि।

सुधाकरेष्विन्दुशरन्दुशैलभेदानि तानि प्रवदन्ति सन्तः।।(जा.पा.2.38)

दृष्टि, स्थान, निसर्ग, चेष्टा, दिग् और काल ये छः प्रकार के बल षड्बल कहलाते हैं। इनके क्रम से 1 ,5 ,1 ,5 ,1 और 7 भेद हैं।दृष्टिबल – 1, स्थानबल – 5, निसर्गिकबल – 1, चेष्टाबल -5 , दृग्बल – 1, कालबल – 7 होते हैं।

4.19. दिशाओं के स्वामी एवं शुभाशुभ ग्रह-

प्राच्यादीशा रविसितकुजराहुयमेन्दुसौम्यवाक्पतयः।

क्षीणेन्द्वर्कयमारा पापास्तैः संयुक्तः सौम्यः।। (ल.जा. ग्र. 4)

पूर्वादि आठ दिशाओं के स्वामी क्रमशः सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनि, चन्द्र, बुध एवं गुरु होते हैं।

ग्रह अ.	सूर्य	शुक्र	मंगल	राहु	शनि	चन्द्र	बुध	गुरु
दिशा	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान

4.20. ग्रहों के तात्कालिक –मैत्रीविचार-

अन्योन्यतः सोदरलाभमानपातालवित्तव्ययराशिसंस्थाः ।

तत्कालमित्राणि खगा भवन्ति तदन्ययाता यदि शत्रवस्ते।।(जा.पा.2.41)

ग्रह जिस स्थान में हो उससे तृतीय ,एकादश ,दशम ,चतुर्थ ,द्वितीय और द्वादश राशिस्थ ग्रह तात्कालिक मित्र होते हैं तथा (1 ,5 ,6 ,7 ,8 ,9) के शत्रु होते हैं।

सूर्यादि ग्रहों की नैसर्गिक शत्रुमित्र विचार-

सौम्यः समोऽर्कजसितावहितौ खरांशो-रिन्दोर्हितौ रविबुधावपरे समाः स्युः।

भौमस्य मन्दभृगुजौ तु समौ रिपुर्ज्ञः सौम्यस्य शीतगुररिः सुहृदौ सितार्कौ।।

सूरेर्द्विषौ कविबुधौ रविजः समः स्यान्मध्यौ कवेर्गुरुकुजौ सुहृदौ शनिज्ञौ।

जीवः समः सितविदौ रविजस्य मित्रे ज्ञेया अनुक्तखचरास्तु तदन्यथा स्युः।।(फ.दी.रा.भे.21.22)

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
मित्र	मंगल, गुरु,चन्द्र	सूर्य, बुध	सूर्य,चन्द्र, बृहस्पति	सूर्य,शुक्र	सूर्य,,कुज, चन्द्र	शनि, बुध	शुक्र, बुध
सम	बुध	गुरु,कुज, शुक्र,शनि	शुक्र,शनि	शनि,गुरु, मंगल	शनि	गुरु, कुज	गुरु
शत्रु	शुक्र, शनि		बुध	चन्द्र	शुक्र, बुध	चन्द्र,सूर्य	सूर्य,चन्द्र, कुज

पञ्चधा-मैत्री विचार-

तत्कालनैसर्गिकतश्च पञ्चधा पुनः प्रकल्प्यास्त्वतिमित्रशत्रवः।।

द्वयोःसुहृत्त्वं त्वतिमित्रता भवेद् द्विधाऽरयस्ते तु सदाऽतिशत्रवः।

सुहृत्समत्वं सुहृजेव केवलं रिपुः समारिस्त्वरिमित्रता समः ।।(जा.पा.2.46)

तात्कालिक मैत्री और नैसर्गिक (स्वाभाविक) मैत्री से अतिमित्र और अति शत्रु बढ़कर पाँच प्रकार की मैत्री होती है। तात्कालिक और नैसर्गिक जगह मित्र होने से वे अतिमित्र होते हैं। दोनों जगह शत्रुता होने से अतिशत्रु ग्रह होते हैं। एक में मित्र दूसरे में सम होने से मित्र होते हैं। एक में सम ,दूसरे में शत्रु होने से केवल शत्रु एवं एक में शत्रु और दूसरे में मित्र होने से सम होते हैं। जैसे – इस चक्र में सूर्य से तीसरे और चौथे में , गुरु और मङ्गल सूर्य के तात्कालिक मित्र हैं तथा नैसर्गिक भी मित्र हैं इसलिए ये दोनों अतिमित्र हुए। शुक्र 12 वे होने से तत्काल में मित्र हैं तथा निसर्ग में शत्रु हैं, इसलिए सूर्य का शुक्र सम हुआ। शनि 7 वें होने से तत्काल में शत्रु तथा निसर्ग में भी शत्रु है, इसलिए सूर्य का शनि अति शत्रु हुआ बुध 2 रे होने से तत्काल में मित्र ,एवं नैसर्गिक सम है अतः यह मित्र हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी जानना चाहिए ।

4.20. सूर्यादि ग्रहों से विचारीय फल विमर्श-

सूर्यादात्मपितृप्रभावनिरुजाशक्तिश्रियश्चिन्तयेत्

चेतोबुधिनृपप्रसादजननीसम्पत्करश्चन्द्रमाः ।।

सत्त्वं रोगगुणानुजावनिसुतज्ञातीर्धरासूनुना

विद्याबन्धुविवेकमातुलसुहृत्त्वक्कर्मकृद्बोधनः।।

प्रज्ञानित्यशरीरपुष्टितनयज्ञानानि वागीश्वरात्

पत्नीवाहनभूषणानि मदनव्यापारसौख्यं भृगोः।।

आयुर्जीवनमृत्युकारणविपत्सम्पत्प्रदाता शनिः

सर्पेणैव पितामहं तु शिखिना मातामहं चिन्तयेत् ।।(जा.पा.2.49-50)

(1) सूर्य से पिता, आत्मा, प्रताप, आरोग्य, आशक्ति और लक्ष्मी का विचार करना चाहिए।

(2) चन्द्रमा से मन, बुद्धि, राजा की प्रसन्नता, माता और धन का विचार करना चाहिए।

(3) मंगल से पराक्रम, रोग, गुण, भाई, भूमि शस्त्र और जाति का विचार करना चाहिए।

(4) बुध से विद्या, बन्धु , विवेक, मामा, मित्र और वाणी का विचार करना चाहिए।

(5) बृहस्पति से बुद्धि, शरीरपुष्टि, पुत्र एवं ज्ञान का विचार करना चाहिए।

(6) शुक्र से स्त्री, वाहन, भूषण, कामदेव, व्यापार तथा सुख का विचार करना चाहिए।

(7) शनि से आयु, जीवन, मृत्यु कारण, विपत् , और सम्पत्ति का विचार करना चाहिए।

(8) राहु से पितामह (पिता के पिता) विचार करना चाहिए।

(9) केतु से मातामह (नाना) का विचार करना चाहिए।

4.21. द्वादश भावों के कारक ग्रह -

द्युमणिरमरमन्त्री भूसुतः सोमसौम्यौ गुरुरिनतनयारौ भार्गवो भानुपुत्रः।।

दिनकरदिविजेज्यौ जीवभानुज्ञमन्दाः सुरगुरुरिनसूनुः कारकाः स्युर्विलग्नात्।।(जा.पा.2.51)

सूर्य लग्न का, बृहस्पति धनभाव का, मङ्गल सहज का, चन्द्र और बुध सुख का, बृहस्पति पुत्र का, शनि और मङ्गल शत्रु का, शुक्र जाया का, शनि मृत्यु का, सूर्य और बृहस्पति धर्म का, बृहस्पति –सूर्य बुध और शनि कर्म का , बृहस्पति लाभ का और शनि व्यय का कारक हैं।

ग्रह स्थान विशेष में शुभाशुभ-

कामावनीनन्दनराशियाताः सितेन्दुपुत्रामरन्घमानाः।

अरिष्टदास्तेऽखिलजातकेषु सदाऽष्टमस्थः शनिरिष्टदः स्यात्।(जा.पा.2.52)।

सातवें शुक्र, चौथे बुध और पाँचवें भाव स्थित बृहस्पति प्रत्येक जातक को अरिष्टकारक होते हैं। शनि अष्टम भाव में होने पर सर्वदा मनोरथ पूरा करता हैं।

सूर्यादि ग्रहों के स्वरूप-

प्रतापशाली चतुरस्रदेहः श्यामारुणाङ्गो मधुपिङ्गलाक्षः।

पित्तात्मकः स्वल्पकचाभिरामो दिवाकरः सत्वगुणप्रधानः।।(जा.पा.2.53)

सूर्य – प्रतापशाली, चतुरस्त्र, श्यामयुक्तलाल अङ्गवाला ,मधु के सदृश पीले नेत्रवाला, पित्त प्रकृति, अल्प बाल, सुन्दर और सत्त्वगुण – प्रधान हैं।

सञ्चारशीलो मृदुवाग्विवेकी शुभेक्षणश्चारुतरस्थिराङ्गः ।।

सदैव धीमांस्तनुवृत्तकायः कफानिलात्मा च सुधाकरः स्यात्।।(जा.पा.2.54)

चन्द्रमा – संचारशील, मृदुवाणीवाला, विवेकी , शुभदृष्टिवाला, रमणीय स्थिर अङ्गवाला सदा बुद्धिमान् , गोलशरीरवाला ,कफ और वात प्रकृति वाला है।

क्रूरेक्षणस्तरुणमूर्त्तिरुदारशीलः पित्तात्मकः सुचपलः कृशमध्यदेशः

संरक्तगौररुचिरावयवः प्रतापी कामी तमोगुणरतस्तु धराकुमारः।।(जा.पा.2.55)

मङ्गल – पापदृष्टि ,युवाशरीर ,उदारशील ,पित्त प्रकृतिवाला ,चञ्चल ,पतली कमर ,लाल से युक्त गौर रुचिर अङ्ग ,प्रतापी ,कामी और तमो गुणी हैं।

दूर्वादलद्युतितनुः स्फुटवाक् कृशाङ्गः स्वामी रजोगुणवतामतिहास्यलोलः।

हानिप्रियो विपुलपित्तकफानिलात्मा सद्यः प्रतापविभवः शशिजश्च विद्वान्।।(जा.पा.2.56)

बुध – दूर्वा के सदृश हरितवर्ण शरीरवाला ,स्पष्ट वक्ता ,पतला शरीर , रजो गुण वाले का स्वामी , हास्य में अत्यन्त प्रिय , हानि के प्रिय , सुन्दर शरीर, पित्त –कफ और वात प्रकृतिवाला,सद्यः प्रताप वैभवशाली और विद्वान हैं।

बृहदुदरशरीरः पीतवर्णः कफात्मा सकलगुणसमेतः सर्वशास्त्राधिकारी।

कपिलरुचिकचाक्षः सत्त्विकोऽतीव धीमान् अलघुनृपतिचिह्नः श्रीधरो देवमन्त्री।।(जा.पा.2.58)

बृहस्पति –लम्बा पेट और रशरीरवाला ,पीतवर्ण ,कफ प्रकृतिवाला , समस्त गुणों से युक्त ,समस्त शास्त्र के अधिकारी ,कपिल रङ्ग के वाल तथा नेत्रवाला, सात्विक,अत्यन्त बुद्धिमान्, बडे राजचिह्नों से सम्पन्न, और लक्ष्मी को धारण करने वाला है।

असितकुटिलकेशः श्यामससौन्दर्यशाली समततरुचिराङ्गः सौम्दृक् कामशीलः ।

अतिपवनकफात्मा राजसः श्रीनिधानः सुखबलसुगुणानामाकरश्चासुरेज्यः।।(जा.पा.2.58)

शुक्र – काले और टेढे बालवाला, श्यामवर्ण, सुन्दरता युक्त,समरुचिर अङ्गवाला, शुभ दृष्टि ,कामी ,विषेश वात – कफ प्रक्रतिवालाराजस्वभावलक्ष्मी का स्थान, सुख, बलों और गुणों का समूह है।

काठिन्यरोमावयवः कृशात्मा दूर्वासिताङ्गः कफमारुतात्मा।

पीनद्विजश्चारुपिशङ्गदृष्टिः सौरिस्तमो बुद्धिरतोऽलसःस्यात् ।।(जा.पा.2.59)

कठिन रोमावलीवाला ,कृशङ्ग दुर्वा के सदृश श्यामवर्ण ,कफ और वात प्रकृतिवाला ,मोटे दांत ,सुन्दर पीले आंखोंवाला,तामस बुद्धि और आलसी है।

अर्क्रेण मन्दः, शनिना महीसुतः, कुजेन जीवो गुरुणा निशाकरः।।

सोमेन शुक्रोऽसुरमन्त्रिणा बुधौ बुधेन चन्द्र खलु वर्द्धते सदा ।।(जा.पा.2.60)

सूर्य के साथ शनि का बल बढ़ता है। शनि के साथ मङ्गल का बल बढ़ता है एवं मङ्गल के साथ गुरु का, गुरु के द्वारा चन्द्रमा का, चन्द्रमा के द्वारा शुक्र का, शुक्र के द्वारा बुध का और बुध के द्वारा चन्द्रमा का बल बढ़ता है।

4.23. ग्रहों का स्थान बल विशेष-

स्वोच्चस्वकीयभवनस्वदृगाणहोरावारांशकोदगयनेषु दिनस्य मध्ये।

राशि प्रवेशसमये सुहृदंशकादौ मेषूरणे दिनमणिर्बलवानजलस्त्रम्।।(जा.पा.2.61)

सूर्य – अपने उच्च राशि, द्रेष्काण, होरा, रविवार, नवांश में, उत्तरायण में, दोपहर दिन में ,राशि के आदि में मित्र के नवांशादि में और लग्न के दशवें भाव में बलवान् होता है।

चन्द्रः कर्किणि गोपतौ निजदिनद्रेक्काणहोरांशके

राश्यन्ते शुभवीक्षणे निशि सुखे याम्यायने वीर्यवान्।।

इन्दुः सर्वकलाधरो यदि बली सर्वत्र सन्धि विना

सर्वव्योमचरेक्षितस्तु कुरुते भूपालयोगं नृणाम्।।(जा.पा.2.62)

चन्द्रमा – कर्क राशि में, वृष राशि में, अपने दिन-द्रेष्काण-होरा-नवांश में , राशि के अंत में शुभ ग्रहों से देखे जाने पर ,रात्रि में ,चौथे भाग में, दक्षिणायन में ,बली होता है। ऋक्षिसन्धि को छोड़ कर हर जगह पूर्ण – बिम्ब और बली चन्द्रमा यदि प्रत्येक ग्रह से देखा जाता हो तो वह चन्द्रमा मनुष्यों का राजयोग करता है अर्थात इस योग में जन्म लेने वाला राजा होता है।

आरः स्ववारनवभागदृगाणवर्गे मीनालिकुम्भमृगतुम्बुरुयामिनीषु ।

वक्रे च याम्यदिशि राशिमुखे बलाढ्यो मीने कुलीरभवने च सुखं ददाति।।(जा.पा.2.63)

मङ्गल – अपने वार में, नवांश में द्रेष्काण – वर्ग में, मीन, वृश्चिक, कुम्भ, मकर और मेष गाशि की रात्रि में, वक्रपात्र पर, दक्षिण दिशा में राशि के आदि में बली है और दशम भाग में कर्क में रहने पर सुख देता है।

कन्यानृयुग्मभवने निजवारवर्गे चापे विना रविमहर्निशमिन्दुसूनुः।

सौम्यायने च बलवानऽपि राशिमध्ये लग्ने सदा यदि यशोबलवृद्धिदः स्यात् ।।(जा.पा.2.64)

बुध – कन्या और मिथुन राशि में, अपने वर्ग में, धनु राशि में, रविवार के अतिरिक्त दिन रात (सर्वदा) और उत्तरायण में, बली होता है। यदि राशि के मध्य का होकर लग्न में प्राप्त हो तो सदा यश और बल की वृद्धि करता है।

मीना लिचापकटके निजवर्गवारे मध्यन्दिनोदगयने यदि राशिमध्ये।

कुम्भे च नीचभवनेऽपि बली सुरेज्यो लग्ने सुखे च दशमे बहुवित्तदः स्यात्।।(जा.पा.2.65)

बृहस्पति – मीन – वृश्चिक – धनु और कर्क राशि में प्राप्त होने पर, अपने वर्ग और वार में , मध्य दिन में ,उत्तरायण में, राशि के मध्य में, कुम्भ में, बली होता है। नीच में भी यदि लग्न, चतुर्थ और दशम भाव में प्राप्त हो तो बहुत धन देता है।

स्वोच्चस्ववर्गदिवसे यदि राशिमध्ये शत्रुव्ययानुजग्रहे हिबुकेपराह्णे।

युद्धे च शीतकरसङ्गमवक्रचारे शुक्रोऽरुणस्य पुरतो यदि शोभनः स्यात्।।(जा.पा.2.66)

शुक्र – उच्चराशि (मीन) ,अपने वर्ग तथा वार में, राशि के मध्य में, षष्ठ – द्वादश – तृतीय और चतुर्थ स्थान में अपराह्ण में युद्ध के समय, चद्रमा के साथ रहने पर और वक्री होने पर यदि सूर्य के आगे रहे तो शुभ (बली) है।

मन्दस्तुलामकरकुम्भग्रहे कलत्रे याम्यायने निजदृगाणदिने दशायम्।

अन्ते ग्रहस्य समरे यदि कृष्णपक्षे वक्रः समस्त भवनेषु बलाधिकः स्यात्।।

शनि –तुला –मकर – और कुम्भ गृह में, सप्तम भाव में, दक्षिणायन में, अपने द्रेष्काण तथा अपने दिन (शनिवार) में, दशा में, राशि के अन्त्य में संग्राम में , बली हैं और यदि कृष्णपक्ष में वक्री हो तो समस्त राशि में बलवान् होता हैं।

मेषालिकुम्भतरुणीवृषकर्कटेशु मेशूरणे च बलबानुर स्यात्।।

कन्यावसान वृषचापधरे निशायामुत्तपातकेतुजनने च शिखी बली स्यात्।।(जा.पा.2.67)

राहु – मेष, वृश्चिक, कुम्भ, कन्या, वृष और कर्क राशि में, दशम स्थान में बलवान हैं। केतु-मीन, वृष तथा धनु में, रात्रि में, उत्पात में, केतु-उदय में वली है।

प्रोक्तप्रकारप्रबलान्विता ये मूलं गतास्ते विबला भवन्ति।

भावेषु योगेषु दशाफलेषु न सम्यगुक्तानि फलानि सन्ति।।

कहे हुए प्रकार से ये प्रबल ग्रह है वे भाव के मूल में प्राप्त होने पर विफल होते हैं। अतएव भाव में योग तथा दशाफल में, उनके सभी फल प्राप्त नहीं होते।

4.24. ग्रहों की अधोमुख एवं ऊर्ध्वमुख संज्ञा-

अधोमुखा दिनेशस्य पूर्वषट्कस्थिता ग्रहाः।

अपरार्द्धस्थिताः भानोरूर्ध्वास्याः सुखवित्तदा।।(जा.पा.2.70)

सूर्य के प्रथम छः राशि में स्थित ग्रह अधोमुख हैं और सूर्य के द्वितीय छः राशि में रहने वाले ग्रह उर्धमुख हैं, यह सुख, वित्त देते हैं।

भानामवस्थानगताः क्रमेण मन्दार्यभौमार्किसितज्ञचन्द्राः।

तेषामधः स्थानगतो बलीयान् राहुर्महीमण्डलमूर्ध्नि संस्थः।।(जा.पा.2.71)

अपने –अपने राशिचक्र (कक्षा) में गत क्रम से शनि गुरु , मंगल, सूर्य, शुक्र , बुध,और चन्द्रमा वर्तमान हो इनमें सबसे नीचे रहने वाला (चन्द्रमा) अधिक बली होता है, इसको कक्षा बल कहना संगत होगा। राहु पृथ्वी बिम्ब के शिर पर (छाया में रहता है)।

4.25. स्थान विशेष में ग्रहों की विफलता –

सभानुरिन्दुः शशिजश्चतुर्थे गुरुः सुते भूमिसुतः कुटुम्बे।

भृगुः सपत्ने रविजः कलत्रे विलग्नतस्ते विफला भवन्ति।।(जा.पा.2.72)

सूर्य के साथ चद्र, लग्न से चौथे भाव में बुध, पाँचवें भाव में बृहस्पति, दूसरे में मङ्गल, छठे में शुक्र और सातवें में शनि हो तो विफल होते हैं।

4.26. ग्रहों के अनुसार रोग प्रकार ज्ञान-

सदाऽग्निरोगज्वरवृद्धिदीपनक्षयातिसारादिकरोगसङ्कुलम् ।

नृपालदेवावनिदेवकिङ्करैः करोति चित्तव्यसनं दिवाकरः।।(जा.पा.2.75)

सूर्य – अशुभ हो तो सदा अग्नि रोग, ज्वरवृद्धि, जलन, क्षय, अतिसार, आदि रोग से एवं राजा, देव, ब्राह्मण, और नौकरों से चित्त में व्यसन उत्पन्न करता है।

पाण्डुदोषजलदोषकामलापीनसादिरमणीकृतामयैः।

कालिकासुरसुवासिगणैराकुलं च कुरूते चन्द्रमाः।।(जा.पा.2.78)

इसे भी समझे- **दोष परिहार**

राहु का दोष बुध नाश करता है। इन दोनों के दोष को शनि नाश करता है। इन तीनों के दोषों को मंगल नाश करता है। इन चारों के दोषों का शुक्र नाश करता है। इन पाँचों के दोषों का नाश बृहस्पति करता है। इन सभी के दोषों के काल का संहार चन्द्रमा करता है। सात दोषों का हनन सूर्य करता है। सूर्य यदि उत्तरायण में हो तो विशेष रुप से दोषों का नाश करता है।

चन्द्रमा – अशुभ हो तो पाण्डुदोष, जलदोष, कामला, पीनस, आदि रोग, स्त्री से उत्पन्न रोंगों से और कालिका, असुर और स्त्रीगण से चिन्तित करता है।

पीनबीजकफशास्त्रपावकग्रन्थिरूग्गणव्रणदरिद्रजामयैः।

वीरशैवगणभैरवादिभिर्भीतिमाशु कुरुते धरासुतः।। (जा.पा.2.77)

मंगल –अशुभ हो तो पीनबीज, कफ, शस्त्र, अग्नि, गृन्थिरोग, घाव, दरिद्रज रोगों से वीर, शैवगण और भैरवादिक से शीघ्र भय देता है।

गुह्योदराद्दश्यसमीरकुष्ठमन्दाग्निशलग्रहणीरुगाद्यैः।

बुधादिविष्णुप्रियदासभूतैरतीव दुःखं शशिजःकरोति।।(जा.पा.2.78)

बुध – अशुभ हो तो गुह्म, उदर, नेत्र, वायु, कुष्ठ, मदाग्नि, शूल, ग्रहणी रोगों से पीडित, विष्णुप्रियदासों से विशेष दुःख देता है।

आचार्यदेवगुरुभूसुरशापदोषैः शोकं च गुल्मरुजमिन्द्रगुरुःकरोति ।

कान्ताविकारजनिमेहरुजा सुराद्यैःस्वेष्टाङ्गनाजनकृतैर्भयमासुरेज्यः।।(जा.पा.2.79)

बृहस्पति – दूषित हो तो आचार्य, देवता, गुरु और ब्राह्मण के शाप दोष से शोक और गुल्म रोग करता है। शुक्र – अनिष्ट हो तो स्त्री के विकार से प्रमेह रोग हो। असुरों से तथा अपनी खास स्त्री जन से भय होता है।

दारिद्यदोषनिजकर्मपिशाचचौरैः क्लेशं करोति रविजः सह सन्धिरोगैः।

कण्डूमसूरिरिपुकृत्रिमकर्मरोगैः स्वाचारहीनलघुजातिगणैश्च केतुः।।(जा.पा.2.80)

शनि – अशुभ हो तो दरिद्रता के दोष, निजकर्म, पिशाच और चोरों से क्लेश उत्पन्न करता है। केतु – दूषित हो तो संधि रोग, खुजली, शीतला, दाद, शत्रुकृत रोगों से अपने आचार से रहित होने से तथा लघु जातियों से क्लेश देता है।

करोत्यपस्मारमसूरिरज्जुक्षुद्दक्रुमिप्रेतपिशाचभूतैः।

उद्बन्धनेनारुचिकुष्ठरोगैर्विधुन्तुदश्चातिभयं नराणाम्।।(जा.पा.2.81)

राहु – अनिष्ट हो तो मनुष्यों को मृगी, शीतला, फांसी, संक्रामकरोग, नेत्ररोग, कृमिरोग, प्रेत एवं पिशाचों से भय होता है और कारागार से, अरुचि से, कुष्ठ रोग से भय देता है।

4.27. राशियों का ग्रहानुसार फल काल-

आद्यन्तमध्यभवनोपगता नभोगाश्चादित्यभूमितनयौ शनिशीतरश्मी।

जीवासुरेन्द्रसचिवौ फलदाः क्रमेण तारासुतः सकलकालफलप्रदः स्यात्।।(जा.पा.2.82)

सूर्य और मंगल राशि के आदि में, शनि और चन्द्रमा मध्य में, बृहस्पति और शुक्र अंत में फल देते हैं और बुध सम्पूर्ण राशि में फल देता है।

इसे भी समझे - धातुनाथ की उपासना एवं धातुओं से रोगोपचार- जिस धातु के कोप से रोग होते हैं, उसकी शान्ति के निमित्त उसके स्वामी के प्रसन्नार्थ शीघ्र जप, तर्पण, होम, दानों से अच्छी तरह पूजा कर सब मनुष्य रोग, शोक, भय और चिन्ता से रहित होकर सुख यश और बल को प्राप्त करते हैं।

ग्रहों की बाल्याद्यवस्था –

बालः कुमारोऽथ युवा च वृद्धो मृतश्च राशावयुजि क्रमेण।

त्रिंशल्लवैर्ध्यत्ययतः समे स्युरेकैकशोऽशाः पुनरेव कार्याः।।(जा.पा.2.84)

विषम राशि में ग्रह क्रम से बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत अवस्था तीस अंशों में होते हैं। अर्थात 6 अंश तक बाल, 6 के बाद 12 अंश पर्यन्त कुमार, 12 के बाद 18 अंश तक युवा, 18 अंश बाद 24 अंश तक वृद्ध, इसके बाद मृत अवस्था में प्राप्त होते हैं और सम राशि में ग्रहों की पहले मृत, तब युवा ,बाद में कुमार, फिर बाल अवस्था छः छः अंश तक रहती है।

ग्रहों की जाग्रत आदि अवस्था–

उच्चांशे स्वनवांशे च जागरूकं वदन्ति हि।

सुहृन्नवांशकं स्वप्नं सुप्तं नाचारिभांशकम्।।(जा.पा.2.85)

उच्चांश में तथा अपने नवांश में ग्रह जाग्रत होता हैं ऐसा विद्धान लोग कहते हैं। मित्र के नवांश में रहने वाले ग्रह स्वप्न अवस्था के होते हैं।नीच और शत्रु के नवांश में ग्रह सुप्त कहलाते हैं।

ग्रहों का फल दान काल–

शीर्षोदयगतः खेटः पाकादौ फलदो भवेत्।

पृष्ठोदयस्थः पाकान्ते सदा चोभयराशिगः।।(जा.पा.2.86)

शीर्षोदय राशि में प्राप्त ग्रह दशा के आदि में फल देते हैं। पृष्ठोदय राशि में प्राप्त ग्रह दशा के अंत में फल देते हैं। उभयराशि वाले सदैव फल देते हैं।

4.28. पुरुष और स्त्री

सूर्य मंगल और गुरु पुरुषग्रह हैं। शुक्र और चन्द्रमा स्त्रीग्रह हैं। शनि और बुध नपुंसक हैं। गुरु आकाश तत्त्व का स्वामी, बुध पृथ्वी का, मंगल तेज का, शनि वायु का और शुक्र जल तत्त्व का स्वामी है।

इकाई का सारांश- शुभ और अशुभ ग्रह अपने -अपने नाम के अनुरूप जातक को शुभ एवं अशुभ परिणाम देते हैं। अर्थात् शुभ ग्रह अपने स्वगृह, उच्च राशि, मित्र राशि, भाव, अपने मित्रों से दृष्ट और शुभ ग्रहों से संयुक्त होने पर शुभ फल देते हैं। अशुभ ग्रह अपनी नीच राशि और शत्रु राशियों से युत होगा तो यह अच्छे परिणाम नहीं देंगे। यह भी ध्यान में रखें कि अशुभ ग्रह हमेशा अशुभ फल नहीं देता है। पुन: ग्रहों का शुभ और अशुभ प्रभाव उनके अनेक कारकों पर निर्भर करता है कि कौन किसका मित्र और शत्रु है? किसी ग्रह का सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव इस बात पर भी निर्भर करता है कि जो ग्रह भाव में है, वह शत्रु और मित्र राशि ग्रह के साथ है या फिर नहीं। जैसा कि कुज सूर्य का मित्र है तथा सूर्य भी मंगल, चंद्रमा और बृहस्पति का मित्र है। अतः जब भी किसी भाव में सूर्य इन राशियों में आएगा, तो जातक के लिए शुभ परिणाम ही देगा। लेकिन सूर्य अपनी शत्रु राशि या नीच राशि तुला में युति करेगा तो जातक के लिए शुभ नहीं होगा।सम्पूर्ण होरा फल के सार तत्त्व ग्रहों की क्रिया - रूप – गुण के भेदों से युत, ग्रह नाम स्वरूपगुण का इस इकाई में वर्णन किया गया है।

।। चतुर्थ इकाई समाप्त ।।

1. शनि की मूलत्रिकोण राशि कौनसी है? **कुम्भ।**
2. राजा कौनसा ग्रह है? **सूर्य।**
3. ईशान कोण का स्वामी कौन है? **गुरु।**
4. ग्रहों के कितने प्रकार के बल होते हैं? **सात।**
5. दशमभाव में कौनसे ग्रह दिग्बलशाली होते हैं। **मंगल और सूर्य।**

बोध प्रश्न

1. जन्मकुण्डली द्वारा शिशु के स्वास्थ्य का चिन्तन कैसे करते हैं?
2. ग्रहों की दस अवस्था के प्रयोजन क्या-क्या हैं?
3. सूर्यादि ग्रहों के लिए कौनसे-कौनसे रत्न धारण करने चाहिए?

4. मानव शरीर में सप्तधातुओं एवं ग्रहों के प्रभाव के बारे में वर्णन कीजिए।
5. सूर्य और मङ्गल राशि में कब फल देते हैं?
6. भावों के कारक ग्रहों को लिखिए।
7. सूर्यादि ग्रहों से विचारीय विषयों के फल विमर्श की व्याख्या कीजिए।
8. सूर्यादि ग्रहों की नैसर्गिक शत्रुमित्र विचार को लिखिए।
9. ग्रहों के दिग्बल का वर्णन कीजिए।

परियोजना कार्य-

1. आकाश में स्थित ग्रहों के वर्णों और ग्रहकक्षा क्रम को चित्र में दर्शाइये।

।।श्री।।

इकाईः 5 (पञ्चाङ्गविधान)

प्रस्तावना- पञ्चाङ्ग हमें सम्पूर्ण वैदिक ज्ञान का ज्ञानवर्धन करता है। यही काल का पथप्रदर्शक एवं ज्योतिषशास्त्र का मेरुदण्ड है। काल ही मानव के जीवन-मरण, इहलोक- परलोक, सुख- दुःख का नियामक है। अतः मनुष्य के जीवन को नियमित एवं सुव्यवस्थित मानक प्रदान करने के लिए आचार्यों ने पञ्चाङ्ग का निर्धारण किया, जिसमें समय के (पञ्च + अङ्ग) मानकों का वर्णन है यथा-वार, तिथि, नक्षत्र, योग एवं करण इन पाँच अङ्गों का उपयोग मुख्य रूप से अर्थात् ज्योतिषशास्त्र का काल-विवेचनात्मक स्वरूप ही है, इसमें सोलह संस्कारों का मुहूर्त्त , त्यौहारों, और प्राकृतिक के काल का शुभाशुभ निर्णय किया जाता है। गणना के आधार पर इसकी तीन धाराएँ हैं- पहली चन्द्र आधारित, दूसरी नक्षत्र आधारित और तीसरी सूर्य आधारित पञ्चाङ्ग पद्धति। विक्रम संवत के अनुसार एक वर्ष में 12 महीने होते हैं। प्रत्येक महीने में 15दिन -15 दिन के दो पक्ष होते हैं- शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष। इसी प्रकार प्रत्येक साल में दो अयन होते हैं। इन दो अयनों की राशियों में 27 नक्षत्र भ्रमण करते रहते हैं। 12 मास का एक वर्ष और 7 दिन का एक सप्ताह होता है। मास सूर्य व चन्द्र की गतिमान पर निर्भर है। भचक्र- भ्रमण में 12 राशियों के अनुसार बारह सौर अर्थात् जिस दिन सूर्य जिस राशि में प्रवेश करता है उसी दिन संक्रान्ति होती है। पूर्णिमा के दिन चन्द्र जिस नक्षत्र में होता है उसी आधार पर मासों का नामकरण होता है। सौर वर्ष से चन्द्र वर्ष 11 दिन 3 घड़ी 48 पल छोटा है। अतः प्रत्येक तीसरे वर्ष में एक मास के काल का मान अधिक हो जाता है, उसे अधिक मास कहते हैं। इसी आधार पर एक साल को बारह महीनों में विभाजित किया गया है। मास को चंद्रमा की कलाओं के घटने और बढ़ने के आधार पर दो पक्षों शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष में विभाजित किया गया है। एक पक्ष में लगभग पन्द्रह दिन एवं दो सप्ताह होते हैं।

दिन को चौबीस(24) घण्टों के साथ-साथ आठ(8) पहरों में भी विभाजित किया गया है। एक प्रहर लगभग तीन घंटे का होता है। एक घण्टे में लगभग दो घड़ी होती हैं, एक पल लगभग आधा मिनट के बराबर होता है तथा एक पल में चौबीस क्षण होते हैं। पहर के अनुसार विचार करें तो चार पहर का दिन और चार पहर की एक रात होती है।

सभी सनातन पञ्चाङ्ग सूर्यसिद्धान्त, ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त, आर्यभट्टीयम्, ग्रहलाघव, केतकीग्रहगणित मानक से एवं चान्द्रसौर प्रकृति पर आधारित हैं। ये पञ्चाङ्ग, कालगणना के एक समान सिद्धांतों और विधियों पर आधारित होते हैं किन्तु मासों के नाम, वर्ष का आरम्भ वर्षप्रतिपदा आदि की दृष्टि से चन्द्र व सौर पर आधारित होते हैं लेकिन विशेष रूप से दो प्रकार के ही हैं- सायन- निरयण पञ्चाङ्ग।

एक सूर्यादय से दूसरे सूर्योदय तक का समय दिवस है, एक दिवस में एक दिन और एक रात होती हैं। दिवस के समय को 60 भागों में विभाजित किया गया है। इस प्रकार एक दिवस में 3600 पल होते हैं। एक दिवस में जब पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है तो उसी कारण सूर्य विपरीत दिशा में घूमता प्रतीत होता है। 3600 पलों में सूर्य एक चक्कर पूरा करता है और इस प्रकार 3600 पलों में 360 अंश 10 पल में सूर्य का जितना कोण बदलता है उसे 1 अंश कहते है। पंचांगों में मास चन्द्रमा के अनुसार होता है।

चन्द्रमा की एक कला को तिथि माना जाता है जो उन्नीस घण्टे से 24 घण्टे की हो सकती है। अमावस्या के पश्चात् प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा पर्यन्त की तिथियों को शुक्लपक्ष तथा पूर्णिमा से अमावस्या तक की तिथियों को कृष्ण पक्ष कहते हैं।

5.1.तिथि - सूर्य-चन्द्रमा के भ्रमण से जब अन्तर द्वादशांश (12) होता तब एक तिथि होती है। मास में शुक्लपक्ष व कृष्णपक्ष दो पक्ष होते हैं तथा प्रत्येक पक्ष में 15 तिथि होती हैं। एक राशि में 30 अंश होते हैं। **विकलानां कला षष्ठ्या तष्षष्ठ्या भाग उच्यते।**

तत्त्रिंशता भवेद्राशिर्भगणो द्वादशैव ते।।(सू.सि.1.28)

इस प्रकार अमावस्या से अमावस्या या पूर्णिमा से पूर्णिमा तक चक्कर लगाने के लिए चन्द्रमा को 30x12=360 अंश गति करनी पड़ेगी। इन 360 अंशों को 30 तिथियों में विभाजित करने पर एक तिथि में प्रायः 12 अंश होते हैं। इस प्रकार सूर्य से चन्द्रमा को 12 अंश आगे जाने की गति को ही एक तिथि कहते हैं। सूर्य एवं चन्द्र के अमावस्या में समागम के बाद दोनों ग्रहों में उत्तरोत्तर दूरी में अन्तर आता जाता है। जब शीघ्र गतिमान चन्द्र 12 अंश तक जाता है, उस अन्तर को प्रतिपदा तिथि कहते हैं। इसी प्रकार 12-24 अंशान्तर को द्वितीया। उसी प्रकार क्रमशः 12-12 अंशों की वृद्धि से तिथियों का वृद्धि क्रम भी चलता रहता है और 168 से अन्ततोगत्वा, पूर्णिमा को सूर्य-चन्द्र में 180 अंश का अन्तर हो जाने पर पूर्ण चन्द्र दिखाई देता है और इसी के साथ शुक्ल पक्ष समाप्त हो जाता है। कृष्णपक्ष को चन्द्र के 180 से अंश 12 अंश न्यून करने पर 168 पर प्रतिपदा तथा प्रतिदिन 12 अंश क्षीण होने से द्वितीयादि तिथियों का निर्माण होने लगता है। इस प्रकार क्रमशः चन्द्र अपनी गति करते हुए चन्द्र 0 अंश पर पहुँच कर अमावस्या तिथि के साथ कृष्णपक्ष की समाप्ति होती है। यथा-

अर्कात् विनिस्सृतः प्राचीं यद्यात्यहरहः शशी।

तच्चान्द्रमानमंशैस्तु ज्ञेया द्वादशभिस्तिथिः।।(सू.सि.14.12)

तिथियों के नाम – पूर्णिमा प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और अमावस्या।

इसे भी समझे- क्षेत्रीय भाषा में तिथियों के नाम - परिवा, दूज, तीज, चौथ, पंचमी, छठ, सातें, आठें, नौमी, दसमी, ग्यारस, द्वाशि, तेरस, चौदस, पौर्णमासी और अमावस।

5.2. प्रतिपदादि तिथियों के स्वामी-

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः ।

शिवो दुर्गान्तिको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ।। (मु.चि. शु.अ. प्र.3)

अग्नि, ब्रह्मा, गौरी, गणेश, सर्प, कार्तिकेय, सूर्य, शिव, दुर्गा, यम, विश्वेदेव, विष्णु, कामदेव, शिव और चन्द्रमा ये क्रम से प्रतिपदादि तिथियों के स्वामी हैं।

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णेति तिथ्योऽशुभमध्यशस्ताः ।

सितेऽसिते शस्तसमाधमाःः स्युः सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धाः ।। (मु.चि. शु.अ. प्र.4)

5.3. तिथि संज्ञा- शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष की सभी तिथियों को नन्द्रा, भद्रा आदि संज्ञा दी गई हैं। यहाँ पूर्ण में पूर्णिमा और अमावस्या दोनों का ग्रहण करना चाहिए। ये तिथियाँ शुक्लपक्ष में पहले अशुभ,फिर मध्यम और फिर शुभ होती हैं। कृष्णपक्ष में पहले शुभ फिर मध्यम, अन्तिम अशुभ हैं।

तिथि संज्ञा संज्ञा बोधक चक्र-

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
प्रतिपदा,	द्वितीया	तृतीया	चतुर्थी	पंचमी
षष्ठी	सप्तमी	अष्टमी	नवमी	दशमी
एकादशी	द्वादशी	त्रयोदशी	चतुर्दशी	पूर्णिमा /अमावस्या

नन्दादि तिथियों के कर्तव्य कर्म-

नन्दा तिथियाँ- कृषि, गृह सम्बन्धित कार्य, उत्सव, वस्त्र और शिल्प सम्बन्धित कार्य करना चाहिए।

भद्रा तिथियाँ – कला, वाहन सवारी, यात्रा, उपनयन, विवाह और आभूषण निर्माणादि कार्य करने चाहिए।

जया तिथियाँ – यात्रा, उत्सव, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, व्यापार, औषधि सेवन, सैन्य संगठन, सैनिक प्रशिक्षण, शस्त्र निर्माण और युद्ध सम्बन्धित कार्य करने चाहिए।

रिक्ता तिथियाँ – अग्नि सम्बन्धित कार्य, शल्यक्रिया, शस्त्र प्रयोग, शत्रु दमन और शत्रुओं को गिरफ्तार करना आदि कार्य करने चाहिए।

पूर्णा तिथियाँ – यज्ञोपवीत, विवाह, यात्रा, नृपाभिषेक तथा पौष्टिक कर्म करने चाहिए।

इसे भी समझे- यदि तिथि द्वितीय सूर्योदय को स्पर्श करे तो तिथि वृद्धि परन्तु तिथि आरम्भ होकर द्वितीय सूर्योदय से पहले ही समाप्त हो जाए तथा सूर्योदय से पहले दूसरी तिथि लग जाए तो तिथि क्षय समझे।

तिथि विचार- सूर्योदय के समय जो तिथि हो, उसमें ही पठन-पाठन, व्रतोपवास, देवकर्म, दान, प्रतिष्ठा, विवाहादि मांगलिक कार्य करने चाहिए। शरीर पर तैल- उवटन, जन्म-मरण तथा श्राद्ध में तात्कालिक तिथि ही ग्रहण करनी चाहिए।

कुछ स्थानों पर पूर्णिमा से मास समाप्त होता है तो कुछ स्थानों पर अमावस्या से। पूर्णिमा से समाप्त होने वाला मास पूर्णिमान्त कहलाता है और अमावस्या से समाप्त होने वाला मास अमावस्यान्त कहलाता है। अतः अधिकांश स्थानों पर पूर्णिमान्त मास का ही प्रचलन है।

इस प्रकार चन्द्र मास में 30 तिथियाँ होती हैं। जो शुक्लपक्ष में प्रतिपदा से पूर्णिमा पर्यन्त पन्द्रह तिथि हैं। कृष्णपक्ष में प्रतिपदा से अमावस्या तक पन्द्रह तिथि हैं।

प्रदोषकाल- चतुर्थी का प्रथम प्रहर, सप्तमी का प्रथम डेढ़ प्रहर एवं त्रयोदशी के प्रथम दो प्रहर का समय प्रदोष संज्ञक है जो शुभ कर्मों में वर्जित हैं।

ब्रह्मपुराण के अनुसार- षष्ठी एवं द्वादशी अर्द्ध रात्रि के एक घटी पूर्व तक हो तथा नौ घटी रात्रि तक तृतीया हो तो उसमे अध्ययन नहीं करना चाहिए।

निर्णयामृत के अनुसार - रात्रि में तीन प्रहर से पहले सप्तमी व त्रयोदशी हो तो प्रदोष होता है।

स्कन्दपुराण के अनुसार- सूर्यास्त के बाद छः घटी प्रदोषकाल होता है।

प्रतिपदादि तिथियों करने योग्य कार्य-

प्रतिपदा कृष्णपक्ष-गृहारम्भ, गृहप्रवेश, सीमन्तोन्नयन,चौलकर्म, उपनयन,यात्रा, विवाह, प्रतिष्ठा, शान्तिक तथा पौष्टिक कार्य शुभ हैं।

द्वितीया- उपनयन,वास्तुकर्म, प्रतिष्ठा, यात्रा,विवाह मुहूर्त, आभूषण खरीदना, संगीत विद्या के लिए, देश व राज्य सम्बन्धी कार्य तथा वित्तीय कार्य आदि कार्य करना शुभ माना गया है। इस तिथि में तेल लगाना वर्जित है।

तृतीया- सीमन्तोन्नयन, चूड़ाकर्म, अन्नप्राशन, उपनयन, सगीत विद्या, शिल्पकला, गृह प्रवेश, विवाह, यात्रा, राजकार्य आदि शुभ कार्य करना चाहिए।

चतुर्थी- बिजली कार्य, शत्रु सम्बन्धित कार्य, अग्नि सम्बन्धी कार्य, शस्त्रों का प्रयोग करना आदि क्रूर कार्य शुभ माने जाते है।

पञ्चमी-समस्त शुभ कार्य, ऋण देना वर्जित है एवं चरस्थिरादि कार्य किए जा सकते हैं।

षष्ठी-युद्ध सम्बन्धित कार्य, शिल्प कार्य, वास्तुकर्म, गृहारम्भ, नवीन वस्त्र , तैलाभ्यंग, अभ्यंग, पितृकर्म, दातुन, आवागमन, काष्ठकर्म तथा पितृ कार्य वर्जित हैं।

सप्तमी- चूड़ाकर्म, अन्नप्राशन, उपनयन, विवाह, संगीत, आभूषणों का निर्माण और नवीन आभूषणों को धारण किया जा सकता है. यात्रा, वधुप्रवेश, गृहप्रवेश, राज्य संबंधी कार्य, वास्तुकर्म, संस्कार, आदि सभी शुभ तथा द्वितीया, तृतीया और पंचमी तिथियों में निर्दिष्ट कार्यों को करना चाहिए।

अष्टमी- युद्ध , अस्त्र-शस्त्र धारण, लेखन कार्य, वास्तुकार्य, शिल्प संबंधित कार्य, रत्नों से संबंधित कार्य, आमोद-प्रमोद तथा मनोरंजन सम्बन्धित कार्य करने चाहिए परन्तु मांस सेवन नहीं करना चाहिए।

नवमी- आखेट, शस्त्र निर्माण, झगड़ा करना, जुआ खेलना, मद्यपान एवं निर्माण कार्य तथा चतुर्थी तिथि में किए जाने वाले कार्य भी किए जाने चाहिए।

> क्षय-वृद्धि तिथि विचार-क्षय-वृद्धि तिथियों में किए गए कार्य निष्फल हो जाते हैं।

दशमी -समस्त राजकार्य ,हाथी, घोड़ों तथा वाहनों संबंधित कार्य, विवाह, संगीत, वस्त्र, आभूषण, यात्रा ,गृह-प्रवेश, वधु-प्रवेश, शिल्प, अन्न प्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन संस्कार आदि कार्य ,द्वित्तीया, तृतीया, पंचमी तथा सप्तमी को किए जाने वाले कार्य कार्य शुभ है।

एकादशी- व्रतोपवास धार्मिक कार्य, देव उत्सव, वास्तुकर्म, युद्ध सम्बन्धित, शिल्प, यज्ञोपवीत, गृहारम्भ, यात्रा संबंधी, मद्यनिर्माण आदि शुभ कार्य किए जा सकते हैं।

द्वादशी- समस्त चर-स्थिर कार्य, उपनयन, विवाह, गाड़ी चलाना, सड़क निर्माण आदि शुभ कार्य किए जा सकते हैं लेकिन तैलमर्दन, नूतन गृह निर्माण-प्रवेश तथा यात्रा वर्जित हैं।

शुक्ल -त्रयोदशी- युद्ध कार्य, सेना, अस्त्र-शस्त्र, ध्वज निर्माण, राजकार्य, वास्तु कार्य, संगीत, किए जा सकते हैं लेकिन इस तिथि में यात्रा, गृह प्रवेश, नवीन वस्त्राभूषण तथा यज्ञोपवीत आदि कार्य वर्ज्य है। द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी तथा दशमी वर्णित कार्य किए जा सकते हैं।

चतुर्दशी- विष प्रयोग, शस्त्र धारण, क्रूर तथा उग्र कर्म करने चाहिए तथा चतुर्थी तिथि में किए जाने वाले कार्य किए जा सकते हैं लेकिन क्षौर तथा यात्रा करना वर्जित है।

पूर्णिमा- विवाह, यज्ञ, शिल्प, आभूषणों से संबंधित कार्य, वास्तुकर्म, संग्राम, जलाशय, यात्रा, शांतिक तथा पौष्टिक जैसे सभी मंगल कार्य किए जा सकते हैं।

अमावस्या- पितृकर्म, महादान करने चाहिए परन्तु अन्य शुभ कर्म नहीं करना चाहिए।

अमावस्या और पूर्णिमा का विशेष विचार - अमावस्या तिथि तीन प्रकार की होती है- सिनीवाली, दर्श और कुहू। प्रातःकाल से प्रारंभ होकर रात्रि पर्यन्त व्यापिनी अमावस्या **सिनीवाली** , चतुर्दशी से विद्धा **दर्श** तथा प्रतिपदा से युक्ता **कुहू** संज्ञक होती है।

इसी प्रकार पूर्णिमा की भी दो संज्ञाएँ होती है- अनुमति और राका। रात्रि को एक कलाहीन और दिन में पूर्णचन्द्र से सम्पन्न **अनुमति** संज्ञक चतुर्दशी से युक्त होती है और रात्रि में पूर्ण चन्द्र सहित पूर्णिमा प्रतिपदा से युक्त **राका** होती है।

5.4. **वार विचार-** वारदोष , परिहार, भारतीय पञ्चाङ्ग विधान में सौर दिन को सावन दिन कहा जाता है। एक सूर्योदय से द्वितीय सूर्योदय होने के पूर्व समय को वार माना जाता है। सृष्टि का शुभारम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा एवं रविवार से हुई अतः सप्ताह का आरम्भ सूर्य, चन्द्र,मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि आदि प्रमुख ग्रहों पर आधारित हैं जैसा कि पिछले **ग्रहभेदाध्याय** में आपने वार क्रम पढा।

वारों की ध्रुव, स्थिरादि संज्ञा- रविवार- चर और स्थिर संज्ञक है। अतः इस दिन नवीन वस्त्र धारण, यज्ञ, मन्त्रोपदेश, राज्याभिषेक, गीत, राज्यसेवा, औषधि क्रय, पशुओं का क्रय- विक्रय, सुवर्ण, रजत और ताम्र सम्बन्धित कार्य करना चाहिए।

सोमवार- चर और चल संज्ञक हैं। इस दिन ग्रहारम्भ, कृषि कार्य, उद्यान, गाय- भैंस का क्रय- विक्रय, आभूषण निर्माण और गीत इत्यादि कार्य करने चाहिए।

इसे भी समझे- जो कार्य जिस वार में सम्पन्न नहीं हो सकें तो उस कार्य को उस वार की काल होरा में करना चाहिए।

कुजवार- उग्र और क्रूर संज्ञक है। इस दिन सन्धि- विच्छेद, सैन्य एवं युद्ध सामग्री का संग्रह, छल-कपट, सुवर्ण, मूंगा आदि से सम्बन्धित कार्य करना चाहिए।

पूर्वाह्न में देवता पूजन, संस्कारादि एवं मांगलिक कर्म, मध्यान काल में अतिथि सत्कार व व्यावहारिक कार्य तथा अपराह्न में श्राद्धादि पितृ कार्य करने चाहिए।

बुधवार- मिश्र और साधरण संज्ञक है। इसमें अध्ययनारम्भ, साहित्य, सगीत, कला,पाणिग्रहण, धान्यसंग्रह और प्रतिमा निर्माण का कार्य करना चाहिए।

गुरुवार- यह लघु और क्षिप्र संज्ञक हैं। इस दिन यज्ञ, विद्यारम्भ, धार्मिक कृत्य, वाहन क्रय- विक्रय, पौष्टिक कर्म, औषधि कार्य, प्रवास- आरम्भ और आभूषण धारण करने चाहिए।

शुक्रवार- मृदु और मैत्री संज्ञक है। इस वार में कृषि कार्य, वाणिज्य कार्य, मैत्री, ऐश्वर्यवर्द्धक कार्य, नूतन वस्त्र- आभूषणों का धारण, स्त्रीविषयक कार्य, नृत्य, गीतादि कार्य प्रारम्भ करना चाहिए।

शनिवार- दारुण और तीक्ष्ण संज्ञक है। इस वार में यज्ञ के लिए काष्ठ संग्रह, नवीन वाहन क्रय- विक्रय, अस्त्र- शस्त्र कार्य, असत्य भाषण, छल-कपट, तस्करी आदि कार्य करना चाहिए।

5.3. वार दोषों का सामान्य उपाय- यदि कार्य उस वार में आवश्यक हो तो रविवार को ताम्बूल भक्षण एवं दान, सोमवार को चन्द्र लगाना व दान, कुजवार को भोजन एवं पुष्प दान, बुधवार को बुध मंत्र का जप, गुरुवार को शिवाराधना एवं भोजन दान, शुक्रवार को श्वेत वस्त्र दान व धारण, शनिवार को ब्राह्मण सेवा एव तैलस्नान करने के बाद कार्य प्रारम्भ करना चाहिए।

नक्षत्र -आकाश में स्थित तारा समूह को नक्षत्र कहते हैं। अर्थात् आकाश में स्थित तारा समूह ही नक्षत्र हैं और ये चन्द्रमा के पथ से जुडे हैं। आकाश का मान 360 अंश माना जाता है। इस भचक्र को 27 भागों मे विभाजित करने पर 13 अंश 20 कला का एक नक्षत्र का मान प्राप्त होता है तथा किसी समय पृथ्वी के जिस नक्षत्रपुञ्ज में चन्द्रमा दिखे उस समय वही नक्षत्र होता है। मूलत: 27 नक्षत्र होते हैं। 28 वां अभिजित (उत्तराषाढ़ा के चतुर्थ चरण की अन्तिम 15 घटी एवं श्रवण नक्षत्र का प्रथम पाद की 4 घटी) नक्षत्र का मान होता है। चन्द्र उक्त सत्ताईस नक्षत्रों में भ्रमण करता है तथा एक नक्षत्र में चार चरण होते हैं, प्रति चरण 3 अंश 20 कला का होता है।जैसा कि अथर्ववेद के 19वें काण्ड के 7वें सूक्त में 28 नक्षत्रों का वर्णन हैं।

सुहवमग्ने कृत्तिका रोहिणी चास्तु भद्रं मृगशिरः शमार्द्रा।
पुनर्वसू सूनृता चारु पुष्यो भानुराश्लेषा अयनं मघा मे ॥
पुण्यं पूर्वा फल्गुन्यौ चात्र हस्तश्चित्रा शिवा स्वाति सुखो मे अस्तु।
राधे विशाखे सुहवानुराधा ज्येष्ठा सुनक्षत्रमरिष्ट मूलम् ॥
अन्नं पूर्वा रासतां मे अषाढा ऊर्जं देव्युत्तरा आ वहन्तु।
अभिजिन्मे रासतां पुण्यमेव श्रवणः श्रविष्ठाः कुर्वतां सुपुष्टिम् ॥
आ मे महच्छतभिषग्वरीय आ मे द्वया प्रोष्ठपदा सुशर्म।
आ रेवती चाश्वयुजौ भगं म आ मे रयिं भरण्य आ वहन्तु ॥ (अथर्ववेद.19.7.2,3.4.5)

1. कृत्तिका, 2. रोहिणी, 3. मृगशिरा, 4. आर्द्रा, 5. पुनर्वसु, 6. पुष्य, 7. आश्लेषा, 8. मघा, 9.पूर्वा-फल्गुनी, 10. उत्तरा फल्गुनी, 11. हस्त, 12. चित्रा, 13. स्वाति, 14. विशाखा, 15. अनुराधा, 16. ज्येष्ठा, 17. मूल, 18. पूर्वाषाढा, 19. उत्तराषाढा, 20. अभिजित्, 21. श्रवण, 22. श्रविष्ठा (धनिष्ठा), 23. शतभिषज् (शतभिषा), 25. दोनों प्रोष्ठपदा (पूर्वा भाद्रपद और उत्तरा भाद्रपद), 26 रेवती, 27. दो अश्वयुज् (अश्विनी) तथा 28. भरणी।

5.7. **नक्षत्रसंज्ञा**- स्वभाव के अनुसार नक्षत्रों के ध्रुव, चर, उग्र, मिश्र, लघु, मृदु और तीक्ष्ण ये सात भेद हैं।

	नक्षत्र संज्ञा	नक्षत्रों के नाम	वार
1	ध्रुव	रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद	रविवार
2	चर	स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतिभिषा	सोमवार
3	उग्र	भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद	मंगलवार
4	**मिश्र (साधारण)**	कृत्तिका, विशाखा	बुधवार
5	**क्षिप्र (लघु)**	अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित	गुरुवार
6	**मृदु – मैत्र नक्षत्र**	मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती	शुक्रवार
7	**तीक्ष्ण(दारुण) नक्षत्र**	रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तरभाद्रपद	शनिवार

ध्रुव एवं स्थिर नक्षत्र- रविवार के दिन रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद होने से बीजवपन, गृहप्रवेश, उद्यान, नगर प्रवेश, गायन आरम्भ, वस्त्र धारण, आभूषण निर्माण एवं धारण, शुभकार्य, नृत्य एवं मैत्री आदि कार्य उत्तम माने जाते हैं।

चर - चल नक्षत्र- सोमवार को पुनर्वसु, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा आदि नक्षत्रों में वाहन क्रय-विक्रय और प्रशिक्षण,यात्रा, कला, दुकान खोलना इत्यादि कार्यों का प्रारंभ करना श्रेष्ठ है।

जन्म नक्षत्र में अन्नप्राशन, उपनयन और राज्याभिषेक आदि कार्य प्रशस्त हैं परन्तु सीमन्तोनयन, चूड़ाकरण, यात्रा, विवाह, औषधि सेवन एवं वादविवाद इन नक्षत्रों में वर्ज्य है।

उग्र एवं क्रूर नक्षत्र- मंगलवार को भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, और पूर्वाभाद्रपद यदि हो तो अग्नि कार्य, छल-कपट, यन्त्र- तंत्र का प्रयोग, पशु वशीकरण इत्यादि निन्दित कार्य उत्तम माने जाते हैं।

मिश्र एवं साधारण नक्षत्र- बुधवार को कृतिका, विशाखा यदि हो तो व्यापार, अग्नि कार्य, अपहरण,शस्त्र, विषघात और अग्निहोत्र कार्य उत्तम माने जाते हैं।

क्षिप्र एवं लघु नक्षत्र- गुरुवार को अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित, इत्यादि नक्षत्रों में से हो तो वस्तुओं का क्रय- विक्रय, साहित्य, संगीत, कला, चित्रकला, शास्त्राध्ययन-ज्ञानार्जन एवं वाहन कार्य, औषधि दान आदि कार्य श्रेष्ठ हैं।

मृदु – मैत्र नक्षत्र- मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती यदि शुक्रवार को हो तो गीत- वाद्य कार्य, गृह सम्बन्धी कार्य, बीजवपन, आभूषण निर्माण व धारण, क्रीडा, मित्रता और शपथ ग्रहण आदि कार्य कल्याणकारी माने जाते हैं।

तीक्ष्ण एवं दारुण नक्षत्र – आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, और मूल नक्षत्र अभिचार कर्म, मारण, उच्चाटन के लिए अनुष्ठान हाथी घोडों का व वाहन प्रशिक्षण,बीजवपन, पौष्टिक कर्म, विद्यारम्भ, मनोरंजक कार्य करने चाहिए।

अब इसका वर्गीकरण मुख ज्ञान के आधार पर तीन श्रेणियों में करेंगे-

ऊर्ध्व मुख नक्षत्र -रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तरभाद्रपद ऊर्ध्वमुख नक्षत्र कहलाते हैं। इसमें देवालय निर्माण, गृह निर्माण, ध्वजारोहण, बगीचा निर्माण, यात्रा, राज्याभिषेक, और समस्त मांगलिक कार्य अभीष्ट फल देते हैं।

अधोमुख नक्षत्र -भरणी, कृतिका, आश्लेषा, मघा, पूर्वफाल्गुनी, विशाखा, मूल, पूर्वाषाढ़ा एवं पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र अधोमुख हैं। इसमें गणित, ज्योतिष, शिल्पकला का अध्ययन, रेलगाडी सुरंग, कूप, तालाब, खान, नलकूप, नींव का खनन, गड़े द्रव्य का निष्कासन पशुओं का क्रय- विक्रय, वाहन क्रय- विक्रय तथा प्रशिक्षण आदि कार्य उत्तम माने जाते हैं।

तिर्यङ्-पार्श्वमुख नक्षत्र -अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा और रेवती पार्श्वमुख नक्षत्र हैं, इसमें पशुओं का क्रय-विक्रय, वाहन क्रय- विक्रय व निर्माण तथा प्रशिक्षण, खेत में हल चलाना, यात्रा व पत्र व्यवहार के कार्य में उत्तम माने जाते हैं।

> **पञ्चक विचार-** धनिष्ठा, शतभिषक, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और रेवती आदि पाँच नक्षत्र अनेक कार्यों में वर्ज्य हैं। इन नक्षत्रों में दक्षिण दिशा की यात्रा, प्रेतकार्य, काष्ठक्षेदन- काष्ठसंचय, पलंग निर्माण, ताम्बा एवं पीतल का संचय सर्वदा वर्ज्य है।

5.8. नक्षत्र जन्म पाद ज्ञान-

सुवर्णपाद नक्षत्र -रेवती, अश्विनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा, सुवर्णपाद नक्षत्र हैं, इनका फल सर्व सौख्यप्रद है।

रजतपाद नक्षत्र -आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्लेषा, मघा, पू. फाल्गुनी, उ. फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, ये रजतपाद नक्षत्र कहलाते हैं। इनका फल सौभाग्यदायक है।

लौहपाद नक्षत्र -विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, लौहपाद नक्षत्र हैं, इनका फल धनहानि है।

ताम्रपाद नक्षत्र- उ.षा., पू.षा., श्रवण, धनिष्ठा, शतमिषा, पू.भा., उ.भा. ताम्रपाद कहलाते हैं। इनका फल शुभ है।

5.9.चोरी गत वस्तुओं का लाभालाभ विचार-

अन्धाक्ष नक्षत्र	मध्याक्ष नक्षत्र	मन्दाक्ष नक्षत्र	सुलोचन नक्षत्र
रोहिणी, पुष्य, उ.फाल्गुनी, विशाखा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा, रेवती	भरणी, आर्द्रा, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित, पूर्वाभाद्रपद	अश्वनी, मृगशिरा, आश्लेषा, हस्त, अनुराधा, उत्तराषाढा, शतभिषा	कृतिका, पुनर्वसु, पूर्वा फा. स्वाती, मूल, श्रवण, उत्तराभाद्रपद
पूर्व दिशा में शीघ्र लाभ।	पश्चिम दिशा में ज्ञात होने पर भी प्राप्ति नहीं।	दक्षिण दिशा में प्रयास से मिले	उत्तर दिशा में तथा प्राप्ति नहीं होती।

जैसा कि मुहूर्तचिन्तामणि में कहा गया है-

अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं

मन्दाक्षं रविविश्वमित्रजलपाश्लेषाश्विचान्द्रं भवेत् ।

मध्याक्षं शिवपित्रजैकचरणात्वष्ट्रेन्द्रविध्यन्तक

स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षो भगम् ।।(न.प्र.22)

यदि आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल शनिवार को हो तो निन्दित कार्य उत्तम माना जाता है।

5.10. **योग-** सूर्य-चन्द्रमा की गति-योग ही 'योग' होता है। योग 27 प्रकार के होते हैं। चन्द्रमा और सूर्य दोनों मिलकर जितने समय में एक नक्षत्र के बराबर दूरी तय करते हैं उसे योग कहते हैं, क्योंकि चन्द्रमा और सूर्य की दूरी ही योग है। ग्रहों की विशेष स्थितियों को भी योग कहा जाता है। तारामण्डल में चन्द्रमा के पथ को 27 भागों में विभाजित किया गया है, प्रत्येक भाग को नक्षत्र कहा गया है।जब सूर्य और चन्द्रमा की गति में 13° 20′ का अन्तर होने से एक योग बनता है। इस प्रकार तारामण्डल का 13° अंश 20' का एक भाग नक्षत्र है। इस प्रकार दूरियों के आधार पर बनने वाले 27 योगों के नाम क्रमश: निम्नलिखित हैं- विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, इन्द्र और वैधृति। इन 27 योगों में से कुल 9 योगों को अशुभ माना जाता है और उनमें सभी प्रकार के शुभ कार्यों को नहीं करना चाहिए। यथा- विष्कुम्भ, अतिगण्ड, शूल, गण्ड, व्याघात, वज्र, व्यतीपात, परिघ और वैधृति। - **विष्कुम्भादि, शुभाशुभ विचार एवं अपवाद।**

करण विचार- तिथि का आधा करण होता है अर्थात् एक तिथि में दो करण होते हैं- एक पूर्वार्ध में तथा एक उत्तरार्ध में। कृष्णपक्ष चतुर्दशी के उत्तरार्ध से करणों की प्रवृत्ति होती है।

5.12.**करण के प्रकार**- दो प्रकार के करण होते हैं- (1) चर करण (2) स्थिर करण ।

स्थिर करण- स्थिर करण 4 होते हैं- शकुनि, चतुष्पाद, नाग और किंस्तुघ्न। कृष्ण पक्ष चतुर्दशी के उत्तरार्ध में शकुनि, अमावस्या के पूर्वार्ध में चतुष्पाद, अमावस्या के उत्तरार्ध में नाग और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्ध में किंस्तुघ्न करण होता है।

बव करण में पौष्टिक, बालव में पठन, पाठन, यज्ञ एवं दानादि कर्म कौलव-तैतिल में मैत्री व स्त्रीविषयक, गर में बीजारोपण व हलप्रवहण, वणिज में व्यापारिक, विष्टि में युद्ध व क्रूर कर्म, शकुनि में औषधि निर्माण, उपयोग व सिद्धि, चतुष्पद में राज्य कार्य व अन्य शुभ कर्म और किंस्तुघ्न करण में शुभ कार्य प्रशस्त होते हैं।

चर करण - चर करण 7 होते हैं- यथा- बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के उत्तरार्ध से बव आदि चर करण होते हैं। प्रतिपदा के उत्तरार्ध में बव, द्वितीया के पूर्वार्ध में बालव तथा उत्तरार्ध में कौलव इस प्रकार बव, बालव, कौलव,तैतिल, गर, वाणिज और विष्टि सात करणों की प्रवृत्ति होती है। यथा सूर्यसिद्धान्त में-

ध्रुवाणि शकुनिर्नागं तृतीय तु चतुष्पदम् ।

किंस्तुघ्नतु चतुर्दश्या: कृष्णायाश्चापरार्धत: ॥

बवादीनि तत: सप्त चराख्यकरणानि च।

मासेऽष्टकृत्व एकेकं करणानां प्रवर्तते ॥

तिथ्यर्धभोगं सर्वेषां करणानां प्रकल्पयेत् ।

एषा स्फूटगति: प्रोक्ता सूर्यादीनां खचारिणाम् ॥ (सू.सि. स्पष्टाधिकार.67-69)

5.13.**भद्राविचार-** विष्टि करण को भद्रा कहते हैं। भद्रा में शुभ कार्य वर्जित माने गए हैं। मास के कुल आठ तिथियों में भद्रा करण का वास होता है। शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि तथा पूर्णिमा का पूर्वार्द्ध, चतुर्थी तिथि एवं एकादशी का उत्तरार्द्ध, कृष्ण पक्ष की तृतीया तिथि एवं दशमी का उत्तरार्द्ध, सप्तमी तिथि और चतुर्दशी के पूर्वार्ध में भद्रा का वास माना जाता है। इन आठ तिथियों में वास करने वाली भद्रा का अलग-अलग नामकरण किया गया है तथा ये क्रमशः कराली, नन्दिनी, रौद्री, सुमुखी, दुर्मुखी, त्रिशिरा, वैष्णवी तथा हंसी संज्ञा से जानी जाती हैं। तिथि के पूर्वार्द्ध में जो भद्रा होती है उसे दिवा भद्रा कहा गया है, जबकि तिथि के उत्तरार्द्ध में भद्रा हो तो वह रात्रि भद्रा कही जाती है। दिवा भद्रा दिन में तथा रात्रि भद्रा रात्रि में हो तो क्रमशः कही जाएगी और दिवा भद्रा दिन में तथा रात्रि भद्रा दिन में होने पर विपरीत क्रम से होती

है। पक्ष के आधार पर भी 'भद्रा का विशेष नामकरण किया गया है, कृष्ण पक्ष की भद्रा वृश्चिकी संज्ञा एवं शुक्ल पक्ष की तिथियों वाली भद्रा 'सर्पिणी से जानी जाती है। वृश्चिकी भद्रा की पुच्छ और सर्पिणि भद्रा के मुख में शुभ कार्य नहीं करने चाहिए।

भद्रा करण का अंग विभाग-

भद्रा की अन्तिम 3 घटियों में आवश्यक कार्य हो तो शुभ कार्य कर सकते हैं।

घटी	5	1	11	4	6	3
अंग	मुख	कण्ठ	हृदय	नाभि	कटि	पुच्छ
फल	कार्यनाश	मृत्यु	द्रव्यनाश	द्वन्द्व	बुद्धिनाश	कार्यसिद्धि

भद्रा काल को उसके अंगों मुख, कण्ठ, हृदय, नाभि, कटि प्रदेश तथा पुच्छ में निवास करती है।

5.14. शुभाशुभ – बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज आदि चर करण मांगलिक कार्यों के लिए प्रशस्त हैं। भद्रा पुच्छ की घ़डियाँ शुभ तथा शुभ कार्यों के लिए श्रेष्ठ होती हैं। अतः युद्धादि क्रूर कार्यों को इसके काल में कर सकते हैं। स्थिर चार करणों में पितृ सम्बन्धित कार्य शुभ होते हैं।

5.15. पक्ष ज्ञान - शुक्लपक्ष एवं कृष्णपक्ष। प्रत्येक मास में प्रायः तीस दिन होते हैं। तीस दिनों को चंद्रमा की कलाओं के घटने और बढ़ने के आधार पर चन्द्रमा के चक्र के दो भाग होते हैं। दो भाग यानी शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष में विभाजित किया गया है। एक पक्ष में पन्द्रह दिन होते हैं। शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की कलाएँ अमावस्या के उपरांत 12 डिग्री हर दिन बढ़ने लगती हैं। इसलिए यह पक्ष रात में रोशनी से जगमगाता दिखाई पड़ता है। कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा पूर्णिमा के उपरांत प्रतिदिन क्रमशः 12 डिग्री अमावस्या तक घटता रहता है। अतः इस पक्ष में रात में चाँदनी नहीं होती है। ऋग्वेद के 10.85.19 वें मन्त्र में (नवो नवो भवति जायमानो....। लगध मुनि का "वेदांग ज्योतिष" और इस ग्रन्थ के षष्ठ श्लोक (माघ शुक्ल प्रपन्नस्य...वर्णन है।

अमावस्यान्त पञ्चाङ्ग मुख्य रूप से दक्षिणी और पूर्वी भारत में उपयोग करते हैं, इसमें सर्वप्रथम 15 दिन का शुक्ल पक्ष और अग्रिम 15 दिन का कृष्ण पक्ष होता हैं और मास अमावस्या से अमावस्या तक होता है, अतः इसे 'अमान्त पञ्चाङ्ग' कहते है। पूर्णिमान्त पञ्चाङ्ग में प्रथम पन्द्रह दिन का कृष्ण पक्ष और अग्रिम 15 दिन का शुक्ल पक्ष होता हैं एवं मास भी पूर्णिमा से प्रारम्भ होकर पूर्णिमा को समाप्त होता है। यह पञ्चाङ्ग उत्तरभारत में प्रयुक्त होता है।

मास विचार – दो पक्षों से मिलकर एक मास का निर्माण होता है। मास की गणना सूर्य और चन्द्र के आधार पर की जाती है। सूर्य के आधार पर गणना करने पर उसे सौर मास और चन्द्रमा से गणना करने पर चान्द्रमास की संज्ञा दी जाती है। चान्द्रमास की गणना शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि से और सौर मास की गणना मेष संक्रान्ति से चैत्रादि 12 मास प्रारंभ होते हैं।

नक्षत्रों के अनुसार चन्द्रमास -

हमारे भारतीय बारह मासों के नाम गगन मण्डल के नक्षत्रों के नामों पर रखे गये हैं। जिस मास में जो नक्षत्र आकाश में प्रायः रात्रि के आरम्भ से अन्त तक दिखाई देता है या जिस मास की पूर्णिमा को चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है, उसी के नाम पर उस मास का नाम रखा गया है। यथा-चैत्र -चित्रा, स्वाति। वैशाख- विशाखा, अनुराधा। ज्येष्ठ- ज्येष्ठा, मूल। आषाढ़- पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़। श्रावण- श्रवण, धनिष्ठा। शतभिषा, भाद्रपद- पूर्वभाद्र, उत्तरभाद्रपद। आश्विन- रेवती, अश्विनी, भरणी। कार्तिक- कृतिका, रोहिणी। मार्गशीर्ष- मृगशिरा, आर्द्रा। पौष- पुनवर्सु, पुष्य। माघ-अश्लेषा, मघा। फाल्गुन-पूर्व फाल्गुनी, उत्तर फाल्गुनी, हस्त।

सौरमास- स्पष्ट सूर्य की एक दिन सम्बन्धी गति तुल्य काल को सौर दिन कहते हैं। मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन ये बारह राशियों को ही बारह सौरमास माना जाता है। जिस दिन सूर्य जिस राशि में प्रवेश करता है उसी दिन संक्रान्ति होती है और इस राशि प्रवेश से ही सौरमास का दूसरा मास प्रारंभ हो जाता है सूर्य के प्रवेशानुसार मेषादि 12 सौरमास हैं। सूर्य की एक संक्रान्ति से दूसरी संक्रान्ति का समय सौरमास कहलाता है अर्थात् सूर्य जितने समय तक एक राशि में रहता है, उसे सौर मास कहा जाता है। एक सौरमास में 30 दिन एवं 10 घण्टे होते हैं। इन्हीं बारह सौरमासों का एक सौर वर्ष होता है और सौरवर्ष में 365 दिन होते हैं। जैसा कि सूर्यसिद्धान्त में वर्णन है यथा-

इसे भी समझे- दिन-रात्रि मान, षडशीतिमुख संक्रान्तियों का मान, अयन, विषुव तथा संक्रान्तियों का पुण्यकाल, यज्ञ, उपनयनादि षोडश संस्कार, ऋण का आदान-प्रदान सौरमास द्वारा ही किए जाते हैं।

ऐन्दवस्तिथिभिस्तद्वत् संक्रान्त्या सौर उच्यते।

मासैर्द्वादशभिर्वर्षं दिव्यं तदह उच्यते।।(सू.सि.म. अ.13)

इन 12 संक्रान्तियों के अतिरिक्त मेष (विषुव)2 संक्रान्ति, 2 अयन संक्रान्ति और 4 विष्णुपदी संक्रान्तियाँ भी होती हैं। विषुव संक्रान्ति (मेष, तुला), अयन संक्रान्ति (कर्क, मकर), षडशीतिमुख संक्रान्ति (मिथुन 18 अंश, कन्या 14 अंश, धनु 6 अंश तथा मीन 22 अंश) तथा विष्णुपदी संक्रान्ति (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ) का तथा सूर्य के मकर में संक्रमण काल से मिथुन राशि छःमास तक सूर्य उत्तरायण होते हैं एवं कर्क संक्रान्ति से धनु राशि तक सूर्य दक्षिणायन होते हैं। ये समस्त कालमान सौरमान पर ही आधारित है।

मेषादि देवभागस्थे देवानां याति दर्शनम् ।

असुराणां तुलादौ तु सूर्यस्तद्भागसञ्चरः ॥ (भू.अ.45)

मेषादि छः राशियों में स्थित रहने पर सूर्य का दर्शन देव भाग में और तुलादि छः राशियों में स्थित रहने पर सूर्य का दर्शन असुरों के भाग में होता है । मेषादि से कन्यान्त पर्यन्त छः राशियों में भ्रमण करता हुआ सूर्य विषवुत (नाडी) वृत्त से उत्तर में ही रहता है अतः लगभग 6 मास पर्यन्त सूर्य का दर्शन उत्तर गोल में होता है । इसी प्रकार तुलादि से मीनान्त पर्यन्त 6 शशियों में सूर्य नाड़ी वृत्त से दक्षिण में रहता है अतः 6 मास पर्यन्त सूर्य का दर्शन दक्षिण गोल में ही होता है। सूर्य की गति के अनुसार अहोरात्रादि सौरमान होते हैं। सूर्य का एक चक्र भ्रमण एक सौर वर्ष होता है ।

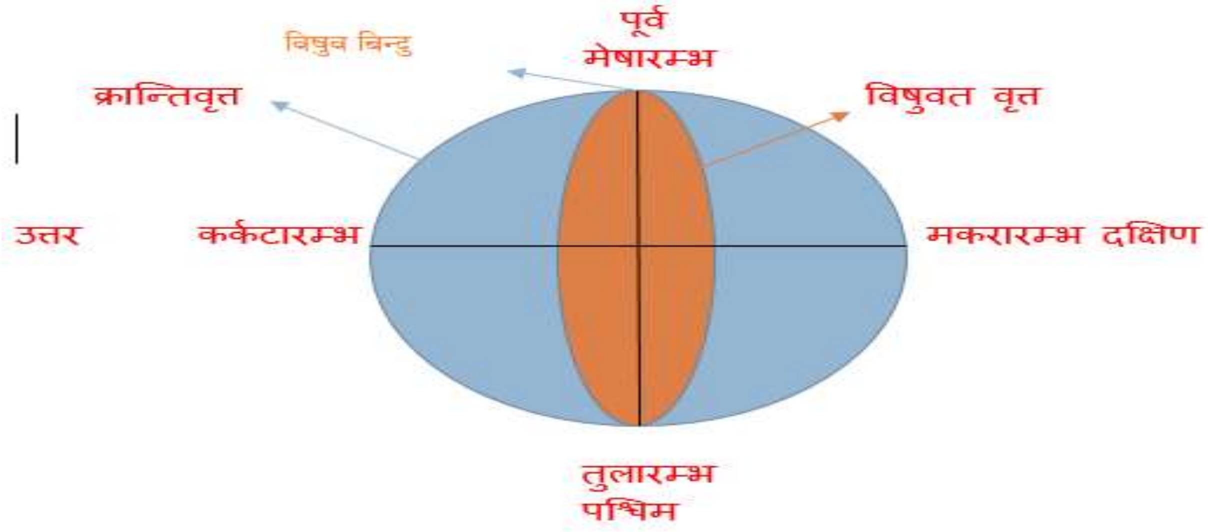

चान्द्रमास- अमात्ताद् मातं तु चान्द्रमासः। शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की कलाएँ अमावस्या के पश्चात् शुक्ल पक्ष प्रतिपदा को चन्द्र नक्षत्र विशेष में एक कला हर दिन बढ़ते हुए पूर्ण चन्द्र दिखाई पड़ता है। पुनः कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा पूर्णिमा के उपरांत प्रतिदिन क्रमशः एक कला अमावस्या तक घटता रहता और दृष्टिगोचर नहीं होता है। पञ्चाङ्ग में मासों की गणना चान्द्रमास से 12 चन्द्र मासों का एक वर्ष सौर वर्ष से लगभग दश दिन छोटा होता है। इस प्रकार 3 वर्षों में यह अन्तर एक चन्द्रमास के बराबर हो जाता है। अतः प्रति 3 वर्ष में एक चान्द्र मास अधिक हो जाता है। और उस बढ़े हुए मास को तेरहवां मास, अधिक मास, मलमास, पुरुषोत्तम मास आदि नामों से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार जिस मास में सूर्य संक्रान्ति नहीं होती है। उसे मलमास या फिर अधिक मास कहा जाता है।तथा चन्द्र मास में दो संक्रांतियाँ पड़ जाएँ तो वह क्षय कहलाता है। और जिस वर्ष क्षयमास आता है उस वर्ष दो अधिक मास आते हैं। क्षय मास के 3 महीने पहले एक अधिक मास और 3 माह बाद दूसरा अधिक मास

तिथि, करण, विवाह, व्रत- उपवास, यात्रा मुण्डन एवं जातकर्म आदि संस्कार चान्द्रमास मास के अनुसार करने करने चाहिए।

आता है। 19 वर्षों के अंतराल में क्षय मास आने की संभावना होती है। चान्द्रमास 354 दिनों का होता है। मास संवत्सर द्वारा जाने जाते हैं। यदि मास वृद्धि हो तो इसमें तेरह मास अन्यथा सामान्यतया बारह मास होते हैं। धर्म-कर्म, तीज-त्योहार और लोक-व्यवहार में इस मास की ही मान्यता अधिक है।

अर्काद् विनिस्सृतः प्राचीं यद्यात्यहरहः शशी।(मा. अ.12)

सावन मास- "उदयादुदयं भानोः सावनं तत् प्रकीर्तितम्।" (मा. अ.18) आर्ष वचन" अर्थात् सावन मान सूर्योदय पर आधारित होता है। दो सूर्योदयों के मध्य का काल सावन दिन होता है।

भारतीयकालः	**पाश्चात्यकालः**
1प्राणः = 10 विपलानि =	4 सेकेण्ड
6 प्राणाः = 1 विनाडी = 1 पलम् =	24 सेकेण्ड = $\frac{5}{2}$ मिनट
60 विनाडिकाः = 1 नाडी = 1 दण्डः =	24 मिनट
60 नाडिका = एकं नाक्षत्रदिनम् = 60 दण्डाः =	24 घण्टाः
$\frac{5}{2}$ नाड्यः = $\frac{5}{2}$ दण्डाः =	1 घण्टा = 60 मिनट
30 नाक्षत्राहोरात्र = 1मासः =	1 मास
12 मासाः = 1वर्षम् =	1 वर्ष

इस प्रकार एक अहोरात्र में 24 घण्टे (60 घटी) मानकर 30 अहोरात्र का एक सावन मास होता है तथा 12 सावन मासों का एक सावन वर्ष होता है। यह सावन वर्ष 360 दिनों का होती है। यथा- आर्ष वचन-**"तत् त्रिंशता भवेन्मास: सावनोऽर्कोदियैस्तथा"** (सू. सि.म.अ.12)

यज्ञ, आयु, सूतकादि विचार, दिन,मास, वर्षादि स्वामियों का निर्धारण, प्रायश्चित कर्म और सम्पत्ति विभाजन आदि सावन मास के अनुसार करने करने चाहिए।

नाक्षत्र मास में नक्षत्र शान्ति, जलपूजन आदि कार्य करने चाहिए।

नाक्षत्रमास- नक्षत्रमण्डल के दैनिक भ्रमण का कालमान एक नाक्षत्र दिन होता है।**भचक्रभ्रमणं नित्यं नाक्षत्रं दिनमुच्यते।**(मा.अ.15) वसन्त सम्पात बिन्दु जिस क्षण याम्योत्तर वृत्त पर आता है, उस समय से वह पुनः याम्योत्तर वृत्त पर आता है उस समय को नाक्षत्र दिन कहते हैं अर्थात् चन्द्रमा अश्विनी से लेकर रेवती पर्यन्त के नक्षत्र में विचरण करता है वह काल नक्षत्रमास

कहलाता है। (एक नक्षत्र का भोग एक दिन) यह लगभग 27 दिनों का होता है इसीलिए 27 दिनों का एक नाक्षत्रमास कहलाता है। सूर्यसिद्धान्त में आर्ष वचन- **"नाडीषष्ठ्या तु नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम् ।"**

क्षय- अधिमास- सौरवर्ष का मान 365 दिन, 15 घटी, 30 पल, व 31 विपल होता हैं और चान्दवर्ष का मान 354 दिन, 22 घटी, 1 पल, व 23 विपल होता है। अतः चन्द्रवर्ष सौर वर्ष से 10 दिन, 53 घटी, 20 पल, 7 व विपल कम होता है। अतः इस अन्तर की पूर्ति के लिए तथा चन्द्र वर्ष व सौर वर्ष में सामंजस्य स्थापित करने के लिए प्रति 3 वर्ष में एक अधिक चान्द्रमास का तथा एक बार 141 वर्षो के बाद और दूसरी बार 19 वर्षों के बाद क्षयमास की व्यवस्था की गई है। इस प्रकार जिस मास में चन्द्रमास में सूर्य की संक्रान्ति नहीं होती है, वह अधिमास कहलाता है तथा जिस चान्द्रमास में सूर्य की दो संक्रान्तियाँ होती हैं, वह क्षय मास कहलाता है। क्षयमास व अधिकमास को मलमास और पुरुषोत्तम मास कहते है। यथा-**"असङ्क्रान्तिमासोऽधिमासः"**।

> अधिकमास में यज्ञोपवीत, विवाह, वधुप्रवेश, ग्रहारम्भ, गृहप्रवेश, मुंडन, कूप निर्माण, प्रतिष्ठा आदि मांगलिक वर्जित हैं लेकिन सन्ध्या, मंत्र, यज्ञ- हवन, श्रीमद् देवीभागवत, श्री भागवत पुराण, गीता पारायण, नृसिंह भगवान की कथा आदि के करने एवं श्रवण के लिए बहुत ही प्रशस्त माना जाता है।

5.17. संवत्सर विचार-

बारह महीने के कालविशेष को ही संवत्सर कहते हैं। भारतीय वर्ष गणना प्रणालियों में प्रत्येक वर्ष को संवत् कहा जाता है। हिन्दू , बौद्ध , और जैन परम्पराओं में कई संवत् प्रचलित हैं जिसमे विक्रमी संवत एवं शक संवत् प्रसिद्ध हैं। ब्राह्म, दैव, पित्र्य, सौर, सावन, चान्द्र, और ब्राहस्पत्यादि काल हैं परन्तु **बार्हस्पत्य एवं चान्द्र मान से संवत्सर की गणना की जाती** है। प्रभवादि संवत्सरों का फल उनके नामानुगण होता है। शालिवाहन शक और विक्रम संवत् में 135 का अन्तर होता है तथा वर्तमान शक संवत् में 135 जोड़ने पर विक्रम संवत्सर प्राप्त होता है।

यथा- 1945+135=2080 विक्रम संवत्सर।

यथा- संवत् 2023+9= 2032 प्राप्त संख्या को 60 से विभाजित करने पर 33 लब्धि तथा शेष 52। इस प्रकार 52 संवत्सर समाप्त हो गए और शुभकृत संवत्सर वर्तमान में है।

वर्तमान संवत् में 9 जोड़कर लब्ध संख्या को 60 से विभाजित करने पर गत संवत्सर प्राप्त होता है।

विश्व में प्रचलित ईस्वी संवत् का ये 2023 वर्ष है। पंचांगों में संवत् प्रचलित हैं, तथा भारत के बहुत से क्षेत्रों में विक्रम संवत् प्रचलित है। विक्रम संवत् का आरम्भ मार्च एव अप्रैल से होता है। यथा- मार्च व अप्रैल 2023 से विक्रमी संवत् 2080 है।

संवत् या तो कार्तिक कृष्ण पक्ष से आरम्भ होते हैं या चैत्र कृष्ण पक्ष से तथा कार्तिक से आरम्भ होने वाले संवत् को कर्तक संवत् कहते हैं। संवत् में अमावस्या को अंत होने वाले मास (अमावस्यान्त मास) या पूर्णिमा को अन्त होने वाले मास (पूर्णिमान्त) मास कहा जाता है। किसी संवत् में पूर्णिमान्त मास का और किसी में अमावस्यान्त मास का प्रयोग होता है । भारत के अलग अलग स्थानों पर एक ही नाम की संवत् परम्परा में पूर्णिमांत या अमावस्यांत मास का प्रयोग हो सकता है। विक्रम संवत् का आरम्भ चैत्र मास के कृष्ण पक्ष से होता है। कार्तिक कृष्ण पक्ष दिवाली से आरम्भ होता है , इस दिन से वर्ष का आरंभ होने वाले संवत् को विक्रम संवत् (कर्तक) कहा जाता है। संवत् के अनुसार एक वर्ष की अवधि को भी संवत् कहा जा सकता है।

युगों के अधिपति-

12 युग	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
स्वामी	विष्णु	बृहस्पति	इन्द्र	अग्नि	विश्वकर्मा	अहिर्बुध्न्य	पितर	विश्वेदेवा	चन्द्र	इन्द्राग्नि	अश्विनी	भग

ऋतुज्ञान चक्र-

मेषादि दो-दो राशियों का भोगकाल ऋतु कहलाता है। इस प्रकार कालगणना में एक वर्ष को छः ऋतुओं में विभाजित किया गया है। शिशिरादि ऋतुएँ मकर राशि से प्रारम्भ होती हैं अर्थात् मकर-कुम्भ में सूर्य रहने पर शिशिर तथा मीन-मेष राशिमें वसन्त ऋतु। जैसा कि सूर्य सिद्धान्त(14.10) में कहा गया है - **"द्विराशिनाथा ऋतवस्ततोऽपि शिशिरादयः"** सौर गणना के अनुसार दो संक्रान्तियों तथा दो चान्द्र मासों की एक ऋतु होती है। यथा-

सूर्य एवं चान्द्र मास के अनुसार वसंतादि ऋतु चक्र-

ऋतुएँ	वसन्त	ग्रीष्म	वर्षा	शरद	हेमंत	शिशिर

सौरमास	मीन,मेष	वृषभ, मिथुन	कर्क, सिंह	कन्या, तुला	वृश्चिक, धनु	मकर, कुंभ
चान्द्रमास	चैत्र	ज्येष्ठ	श्रावण	आश्विन	मार्गशीर्ष	माघ
मास	वैशाख	आषाढ	भाद्रपद	कार्तिक	पौष	फाल्गुन

अयन ज्ञान – उत्तरायण और दक्षिणायन।

अयन का शाब्दिक अर्थ चलना। अर्थात् सूर्य कर्कादि छः राशियों में दक्षिण दिशा की ओर गमन दक्षिणायन तथा मकर आदि छः राशियों में उत्तर दिशा की ओर गमन उतरायण काल कहलाता है।

यथा- **भानोर्मकरसङ्क्रान्तेः षण्मासा उत्तरायणम्।**

कर्कादिस्तु तथैव स्यात् षण्मासा दक्षिणायनम्।। (सू.सि.14.9)

क्रान्तिवृत्त का उत्तर एव दक्षिण गोल विभाजन ही उत्तरायण और दक्षिणायन कहलाता है। सौर-वर्ष के दो भाग हैं- उत्तरायण छः मास का और दक्षिणायन भी छः मास का। इस प्रकार दो अयन उत्तरायण और दक्षिणायन होते हैं। उत्तरायण में देवताओं का दिन एवं दक्षिणायन में देवताओं की रात्रि होती है। श्रविष्ठादि (धनिष्ठा के आरम्भ) में सूर्य व चन्द्रमा उत्तर की ओर गमन (उत्तरायण) करते हैं तथा सार्पार्ध (आश्लेषा के आधे) में दक्षिण की ओर प्रवृत्ति (दक्षिणायन) होते हैं। सर्वदा सूर्य माघ और श्रावण मासों में क्रमशः उत्तर एवं दक्षिण की ओर भ्रमण करता है।

उत्तरायण तीर्थ यात्रा, प्रतिष्ठा, यज्ञोपवीत, ग्रहप्रवेश, कूप निर्माण, नूतन गृहप्रवेश और विवाह संस्कारादि कार्यों के लिए शुभ समय है।

स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ।

स्यात् तदादियुगं माधस्तपः शुक्लोऽयनं ह्युदक्।। (याजुष. ज्यो. 6)

उत्तरायण - मकर से मिथुन पर्यन्त सूर्य उत्तरायण होता है।(माघ से आषाढ) यह समय देवताओं का दिन माना जाता है। शिशिर वसन्त और ग्रीष्म ऋतुएँ उत्तरायण को सुशोभित करती हैं।

दक्षिणायन- सूर्य कर्क से धनु राशि पर्यन्त दक्षिणायन में रहता है।(श्रावण से पौष) सूर्य कर्क राशि में प्रवेश करता है तब सूर्य दक्षिणायन होता है। वर्षा, शरद और हेमन्त तीन ऋतुएँ इस समय अपनी सुषमा विखेरती हैं। इस अयन के अधिपति पितृ हैं। दक्षिणायन में उग्र देवताओं की प्रतिष्ठा, व्रत और उपवास का समय होता है। इस समय व्रत और उपासना करने से रोग और कष्ट समाप्त होते हैं।

इस समय विवाह और उपनयन आदि संस्कार वर्जित है, परन्तु **यदि सूर्य वृश्चिक राशि में हो तो मार्गशीर्ष मास में ये सब किया जा सकता है। उत्तरायण में मीन राशि में विवाह वर्जित है।**

भचक्रभ्रमणं नित्यं नाक्षत्रं दिनमुच्यते।

नक्षत्रनाम्ना मासास्तु ज्ञेयाः पर्वान्तयोगतः।।

कार्तिक्यादिषु संयोगे कृत्तिकादि द्वयं द्वयम्

अन्त्यापान्यौ पञ्चमश्च त्रिधा मासत्रयं स्मृतम्।।(मा.अ.15.16)

5.20. नक्षत्रों के अनुसार मासों के नाम-

पूर्णिमा के दिन जिस नक्षत्र का योग होता है उसी नक्षत्र के नाम से मास का नाम रहता है:

- चैत्र : पूर्णिमा- चित्रा, स्वाति।
- वैशाख : विशाखा, अनुराधा।
- ज्येष्ठ : ज्येष्ठा, मूल।
- आषाढ़ : पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, शतभिषा।
- श्रावण : श्रवण, धनिष्ठा।
- भाद्रपद : पूर्वभाद्र, उत्तरभाद्र।
- आश्विन : अश्विन, रेवती, भरणी।
- कार्तिक : कृतिका, रोहणी।
- मार्गशीर्ष : मृगशिरा, उत्तरा।
- पौष : पुनर्वसु, पुष्य।
- माघ : मघा, अश्लेषा।
- फाल्गुन : पूर्वाफाल्गुन, उत्तराफाल्गुन, हस्त।

अधिवर्ष में, चैत्र में 31 दिन होते हैं और इसकी शुरुआत 21 मार्च को होती है। वर्ष की पहली छमाही के सभी महीने 31 दिन के होते हैं, जिसका कारण इस समय कांतिवृत्त में सूरज की धीमी गति है। महीनों के नाम पुराने, हिन्दू चन्द्र-सौर पंचांग से लिए गये हैं इसलिए वर्तनी भिन्न रूपों में मौजूद है और कौन सी तिथि किस कैलेंडर से संबंधित है इसके सन्दर्भ में भ्रम बना रहता है।

शक् युग, का पहला वर्ष सामान्य युग के 78 वें वर्ष से प्रारम्भ होता है, अधिवर्ष निर्धारित करने के शक् वर्ष में 78 जोड़ दें- यदि ग्रेगोरियन कैलेण्डर में परिणाम एक अधिवर्ष है, तो शक् वर्ष भी एक अधिवर्ष ही होगा।

वर्ष को संवत्सर कहा जाता है। जैसे प्रत्येक माह के नाम होते हैं उसी तरह प्रत्येक वर्ष के नाम अलग अलग होते हैं। जैसे बारह माह होते हैं उसी तरह 60 संवत्सर होते हैं। संवत्सर अर्थात बारह महीने के कालविशेष को ही संवत्सर कहते हैं। भारतीय संवत्सर पाँच प्रकार के होते हैं। इनमें से मुख्यतः तीन हैं- सावन, चान्द्र तथा सौर।

5.21. संवत्सरों के नाम

60 संवत्सरों के नाम तथा क्रम इस प्रकार हैं-

(1) प्रभव, (2) विभव, (3) शुक्ल, (4) प्रमोद, (5) प्रजापति, (6) अंगिरा, (7) श्रीमुख, (8) भाव, (9) युवा, (10) धाता, (11) ईश्वर, (12) बहुधान्य, (13) प्रमाथी, (14) विक्रम, (15) विषु, (16) चित्रभानु, (17) स्वभानु, (18) तारण, (19) पार्थिव, (20) व्यय, (21) सर्वजित्, (22) सर्वधारी, (23) विरोधी, (24) विकृति, (25) खर, (26) नन्दन, (27) विजय, (28) जय, (29) मन्मथ, (30) दुर्मुख, (31) हेमलम्ब, (32) विलम्ब, (33) विकारी, (34) शर्वरी, (35) प्लव, (36) शुभकृत, (37) शोभन, (38) क्रोधी, (39) विश्वावसु, (40) पराभव, (41) प्लवङ्ग, (42) कीलक, (43) सौम्य, (44) साधारण, (45) विरोधकृत, (46) परिधावी, (47) प्रमादी, (48) आनन्द, (49) राक्षस, (50) नल, (51) पिंगल, (52) काल, (53) सिद्धार्थ, (54) रौद्रि, (55) दुर्मति, (56) दुन्दुभि, (57) रुधिरोद्गारी, (58) रक्ताक्ष, (59) क्रोधन (60) क्षय।

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः।
अङ्गिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथैव च ।।
ईश्वरो बहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः।
चित्रभानुः सुभानुश्चतारणः पार्थिवो व्ययः ।।
सर्वजित्सर्वधारी च विरोधीविकृतिः खरः।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ ।।
हेमलम्बी विलम्बी च विकारी शार्वरी प्लवः।
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसुपराभवौ ।।
प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत्।
परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसोऽनलः ।।
पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मती ।
दुन्दुभी रुधिरोगारी रक्ताक्षी क्रोधनः क्षयः ।।

5.21. गण्डान्त विचार-

गण्डान्त नाम सन्धिविशेष। किसकी सन्धि तिथि-नक्षत्र-लग्नादि का संन्धिकाल। ये सन्धि तीन प्रकार की होती हैं। इन गण्डान्तों की शान्ति भी करनी चाहिए यथा अथर्ववेद-

मा ज्येष्ठं वधीदयमग्न एषां मूलबर्हणात्परि पाह्येनम्।

स ग्राह्याः पाशान्वि चृत प्रजानन्तुभ्यं देवा अनु जानन्तु विश्वे॥ (अथर्ववेद.6.112.1)

तिथिगण्डान्त- तिथिगण्डान्त नाम तिथि का सन्धिकाल। इस सन्दर्भ में पूर्णा (पञ्चमी, दशमी, पञ्चदशी) नन्दा (प्रतिपत्, षष्ठी, एकादशी) इनका विचार करते हैं। पूर्णातिथियों की अन्तिम एक घटी, नन्दा तिथियों की आद्य एक घटी दोनों मिलकर दो घटी गण्डान्त काल होता है।

तिथि	अघ.		आ.घ.	तिथि	कुल घटी
पञ्चमी	1	+	1	षष्ठी	2
दशमी	1	+	1	एकादशी	2
पञ्चदशी	1	+	1	प्रतिपत्	2

नन्दा तिथेश्च नामादौ पूर्णायाश्च तथान्तिके।

घटिकैका शुभे त्याज्या तिथिगण्डा घटि द्वयम्।।

नक्षत्र गण्डान्त- ज्येष्ठा-रेवती-आश्लेषा नक्षत्रों की अन्त्य दो घटी एवं मूला-अश्वनी-मघा नक्षत्रों की आद्य (प्रथम) दो घटी गण्डान्त संज्ञक होती हैं।

नक्षत्र	अ. घ.		आघ.	नक्षत्रम्	कुल घटी
रेवती	2	+	2	अश्विनी	4
आश्लेशा	2	+	2	मघा	4
ज्येष्ठा	2	+	2	मूला	4

ज्येष्ठा श्लेषा रेवतीनां नक्षत्रान्ते घटीद्वयम्।

आदौ मूलमघाश्विन्या भगण्डे घटिका द्वयम् ।।

लग्नगण्डान्त- कर्क-वृश्चिक-मीन-की अन्त्य अर्ध घटी और सिंह-धनु-मेष राशि के आद्य की अर्ध घटी गण्डान्त संज्ञक होती हैं।

लग्न	अ.घ.	आघ.	लग्न	स.घ.

कर्क	½	+	½	सिंह	1
वृश्चिक	½	+	½	धनु	1
मीन	½	+	½	मेष	1

यथा- मीन वृश्चिक कर्कान्ते घटिकार्द्ध परित्यजेत्।

आदौ मेषस्य चापस्य सिंहस्य घटिकार्द्धकम्।।

इस इकाई में पञ्चाङ्ग के घटकों को उदाहरण सहित विस्तृत रूप से समझाया गया हैं। जिससे छात्र सरल रूप से समझ सकें और पञ्चाङ्ग का उपयोग कर सकें।

5.23. **भचक्र परिचय**-भचक्र (राशि चक्र) का अर्थ राशि अथवा नक्षत्र होता है। इसी कारण राशियों के समूह को "भचक्र या राशिचक्र कहा जाता है। यह भचक एक कल्पित वृत्त है। इसी वृत्त के बीच से सूर्य का संक्रमण पथ गुजरता है। इसी कारण इसे क्रान्तिवृत्त कहा जाता है। इस वृत्त का विस्तार 360 अंश है। इसके 12 समान भाग करने पर प्रत्येक का मान 30 अंश होता है। भचक्र के इसी 30 अंश वाले एक भाग को राशि कहते हैं। 12 राशियाँ खचक्र की परिधि पर स्थित हैं। यह खचक्र अपनी धुरी पर दिन में एक बार पूर्व से पश्चिम की तरफ घूमता है। इसी भ्रमण के कारण राशियों का उदय व अस्त होता है। राशि भचक्र के 30 अंशात्मक एक भाग को राशि कहते हैं, इन राशियों की संख्या 12 हैं यथा-मेष /Aries, वृष/ Taurus, मिथुन /Gemini, कर्क/ Cancer, सिंह /Leo, कन्या/ Virgo, तुला/ Libra,वृश्चिक/ Scorpio, घनु/ Sagittarius, मकर/ Caprice , कुम्भ/ Aquarius, मीन/ Pisces.

मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाऽथवृश्चाककः।धन्वी मकरः कुम्भो मीनास्विति राशिनामानि ।।

12 मीन	1 मेष	2 वृष	3 मिथुन
11कुम्भ			4 कर्क
10 मकर			5 सिंह
9 धनु	8 वृश्चिक	7 तुला	6 कन्या

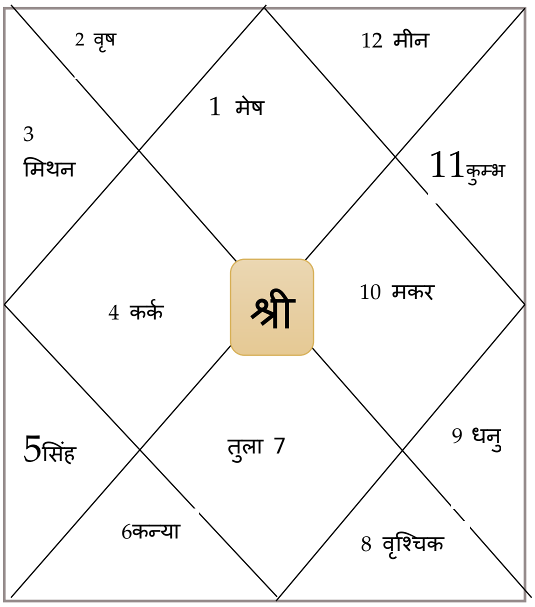

जैसा कि भचक्र में आपने राशियों का ज्ञान प्राप्त किया इसी प्रकार भचक्र में 27 नक्षत्रों की स्थिति होती है।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥ (ऋ. 10.190.3)

नक्षत्र-

क्र. सं.	तैत्तिरीय संहिता व तैत्तिरीय ब्राह्मण	अथर्ववेद	काठक संहिता	अधिपति / देवता
1.	कृत्तिका	कृत्तिका	कृत्तिका	अग्नि
2.	रोहिणी	रोहिणी	रोहिणी	प्रजापति
3.	मृगशिहर्ष	मृगशिरा	इन्वका	सोम
4.	आर्द्रा	आर्द्रा	बाहु	रुद्र
5.	पुनर्वसू	पुनर्वसु	पुनर्वसु	अदिति
6.	तिष्य	पुष्य	तिष्य	बृहस्पति
7.	आश्लेषा	आश्लेषा	आश्लेषा	सर्प
8.	मघा	मघा	मघा	पितर
9.	फाल्गुनी	पूर्वाफल्गुनी	नीः	भग
10.	फाल्गुनी	उत्तराफल्गुनी	उत्तराफाल्गुनी	अर्यमा

11.	हस्त	हस्त	हस्त	सविता
12.	चित्रा	चित्रा	चित्रा	त्वषा
13.	स्वाति	स्वाति	निष्ट्या	वायु
14.	विशाखा	विशाखा	विशाखा	इन्द्राग्नि
15.	अनुराधा	अनुराधा	अनुराधा	मित्र
16.	ज्येष्ठा	ज्येष्ठा	ज्येष्ठा	इन्द्र
17.	मूल	मूल	मूल	निऋति
18.	अषाढा	पूर्वाषाढा	अषाढा	आप
19.	आषाढा	उत्तराषाढा	आषाढा	विश्वेदेव
20.	-	अभिजित्	-	विष्णु
21.	श्रोणा	श्रवण	अश्वत्थ	वसु
22.	श्रविष्ठा	श्रविष्ठा (धनिष्ठा)	श्रविष्ठा	इन्द्र
23.	शतभिषक् (शतभिषा)	शतभिषज् (शतभिषा)	शतभिषक् (शतभिषा)	अज

24.	प्रोष्ठपदा (पूर्वा भाद्रपद)	प्रोष्ठपदा (पूर्वा भाद्रपद)	प्रोष्ठपदा (पूर्वा भाद्रपद)	वरुण
25.	प्रोष्ठपदा (उत्तरा भाद्रपद)	उत्तरा भाद्रपद	उत्तरप्रोष्ठपदा (उत्तरा भाद्रपद)	अहिर्बुध्न्य
26.	रेवती	रेवती	रेवती	पूषा
27.	अश्वयुजौ (अश्विनी)	अश्वयुज् (अश्विनी)	अश्वयुजौ (अश्विनी)	अश्विन्
28.	अपभरणी	भरणी	अपभरणी	यम

सोम व सूर्य के नक्षत्रों में संचरण के गतागत विज्ञान को जो जानता है वह लोक में सन्तति, मन वाञ्छित सफलता प्राप्त करते हुए, स्वर्गलोक में सुशोभित होता है। जैसा कि यजुर्वेद में कहा गया है-

सोमसूर्यस्तृचरितं विद्वान् वेद विदश्नुते।

सोमसूर्यस्तृचरितं लोकं लोके च सन्ततिम्।। याजुष ज्यो.43।।

लेकिन राशियों के अनुसार हम नक्षत्रों का अध्ययन करें तो मेष राशि के आरम्भ में अश्विनी तथा अन्तिम मीन राशि के अन्त में अन्तिम नक्षत्र रेवती स्थित है। प्रत्येक नक्षत्र का विस्तार 13 अंश व 20 कला होता है। इसके चार समान भाग होते हैं। इन्हें चरण या पाद कहते हैं। नौ चरणों अर्थात् सवा दो (2.1/2) नक्षत्रों से एक राशि बनती है। इन नक्षत्रों के प्रत्येक चरण के प्रतिनिधि के रूप में वर्णमाला के मात्रा सहित चार-चार अक्षर माने जाते हैं। जन्म के समय जिस नक्षत्र का जो चरण वर्तमान में होता है, उस चरण के अक्षर से शुरू होने वाला नाम शिशु का जन्म नाम माना जाता है। जैसा कि यजुर्वेद में कहा गया है-

नक्षत्रदेवता एता एताभिर्यज्ञकर्मणि।

यजमानस्य शास्त्रज्ञैर्नाम नक्षत्रजं स्मृतम्।। याजुष ज्यो.35।।

नक्षत्रों के नाम व उनके चरणाक्षर-

क्र.सं.	नक्षत्र	चरण	क्र.सं.	नक्षत्र	चरण
1.	अश्विनी	चू, चे, चो, ल	16	विशाखा	ति तु ते तो

2.	भरणी	लि लु ले लो	17	अनुराधा	न नी नु ने
3.	कृत्तिका	अ ई उ ए	18	ज्येष्ठा	नो या यि यु
4.	रोहिणी	ओ व वी वु	19	मूल	ये यो भा भी
5.	मृगशिरा	वे वो का की	20	पूर्वाषाढ़ा	भु थ भ ढ
6.	आर्द्रा	कु घ ङ छ	21	उत्तराषाढ़ा	भे भो ज जि
7.	पुनर्वसु	के को ह ही	22	अभिजित	जु जे जो श
8.	पुष्य	हु हे हो ड	23	श्रवण	शि शु शे शो
9.	आश्लेषा	डी डू डे डो	24	धनिष्ठा	ग गि गु गे
10.	मघा	म मी मु मे	25	शतभिषा	गो स सि सु
11.	पूर्वफाल्गुनी	मो टा टि टू	26	पूर्वभाद्रपद	से सो द दि
12.	उत्तरफल्गुनी	टे टो पा पी	27	उत्तरभाद्रपद	दु ख झ ध
13.	हस्त	पु ष ड ठ	28	रेवती	दे दो च चि
14.	चित्रा	पे पो र री			
15.	स्वाति	रू रे रो त			

इस प्रकार हमने भचक्र का सामान्य परिचय प्राप्त किया।

इकाई समाप्त

प्रश्न-1. पंचाग के कितने अङ्ग होते है? पाँच ।

प्रश्न-2. कितनी तिथियाँ होती हैं? तीस (30)।

प्रश्न-3. स्थिर करण कितने प्रकार के होते हैं ? **चार** (4)।

प्रश्न-4. ऋतुएँ कितने प्रकार की होती हैं? **छः प्रकार** (6)।

प्रश्न-5. तिथियों को संज्ञा दी गई है? **नन्दा-भद्रा - जया – रिक्ता- पूर्णा** ।

प्रश्न-6.गण्डान्त कितने प्रकार के होते हैं? **तीन** (3)।**तिथि- नक्षत्र- लग्न।**

प्रश्न-7. संवत्सर कितने होते हैं? 60 **संवत्सर**।

प्रश्न-8. तिथि, करण, विवाह, मुण्डन, जातकर्म व्रत-उपवास, यात्रा की क्रियाएँ तथा अन्य सभी कार्य, किस मान के अनुसार होते हैं? **चान्द्रमान से।**

प्रश्न-9. संक्रान्तियों का पुण्यकाल किस मान से ज्ञात किया जाता है? **सौरमान से** ।

प्रश्न-10. एक तिथि में कितने अंश होते हैं? **30 अंश।**

निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-

प्रश्न-1. तिथि का आधा ....होता है । **करण** ।

प्रश्न-2.सूर्य से चन्द्रमा के ....आगे जाने पर 1 तिथि होती है।**12 अंश**

प्रश्न-3. चैत्रादि............ होते हैं। 12 मास ।

प्रश्न-4. सूर्य कर्कादि छः राशियों में दक्षिण दिशा की ओर गमन ....तथा मकर आदि छः राशियों में उत्तर दिशा की ओर गमन ....काल कहलाता है। दक्षिणायन - उतरायण

बोध प्रश्न-

1. पंचाङ्ग का सामान्य परिचय दीजिए।
2. गण्डान्त की विस्तार पूर्वक व्याख्या कीजिए।
3. उत्तरायण तथा दक्षिणायन में करने योग्य कार्यों की व्याख्या कीजिए।
4. चोरी गत (नष्ट द्रव्य) वस्तुओं का लाभालाभ विचार नक्षत्रों के आधार विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
5. पञ्चकों का विचार कैसे किया जाता है वर्णन कीजिए?
6. जन्म के समय नक्षत्र पादों का कैसे विचार किया जाता है?
7. तिथियों के अधिपतियों का तिथि सहित नाम लिखिए।

।।श्री।।

इकाईः 6 (मुहूर्त्तविधान)

प्रस्तावना- इस इकाई के द्वारा ज्योतिष के काल विभाजन के आधार पर मुहूर्त्त की प्रत्यक्ष विधि का अध्ययन करते हुए मुहूर्त्त के विषय में जानेंगे कि मुहूर्त क्या है? मुहूर्त्त का प्रयोजन क्या है? मुहूर्त्त का निर्णय कैसे करते हैं?

6.1. मुहूर्त- यज्ञ निर्वहन से लेकर समान्य कार्य के लिए मुहूर्त्त निश्चित होते हैं। दिनमान एवं रात्रिमान का पन्द्रह वां भाग एक मुहूर्त्त व क्षण होता है। अर्थात् मुहूर्त्त नाम कालविशेष वाचक है। यह प्रायः दो घटी (48 मिनट) का समय होता है। शुभ कार्य निर्वहण योग्य काल को ही मुहूर्त कहते हैं। अर्थात् तिथि-वार-नक्षत्र-योग-करणादि का पञ्चाङ्ग के द्वारा आदेशित शुभकाल। इस प्रकार एक अहोरात्र में त्रिंशत्(30) मुहूर्त्त होते हैं। यथा मुहूर्तविधान-

अथातस्संप्रवक्ष्यामि मुहूर्तान्नित्यसंयुतान् ।
अहोरात्रे च ते त्रिंशद्दिवा पञ्चदशस्मृताः ।।
तावन्ति रात्रौ विज्ञेयोस्तेभ्यः पञ्चदशांशुजाः ।
अह्नि रात्रौ तदंशास्स्युस्तेषां नामानि वक्ष्यते ।।
रौद्रस्सार्पस्तथा मैत्रः पैत्रो वासव एव च ।
आप्यो विश्वस्तथा ब्रह्मा प्राज्ञोऽन्यं द्रोण उच्यते।।
ऐन्द्रोऽथ नैऋतिश्चैव वार्य्यर्यम्णस्तथैव च ।
भगश्चैवेति विज्ञेया क्षणा पञ्चदशादिव।।
आर्द्रा प्रोष्ठपदश्चैवाहिर्बुध्निः पौष्ण एव च ।
गन्धर्वो राक्षसाश्चैव प्राजाप्यैग्नेन्द्वा स्मृता।।
अदितिर्गुरुदैवत्यं वैष्णवं च तथैव च ।
सावित्रत्वाष्ट्रवायव्याः क्षणरात्रौ विदुर्बुधाः।।

दिन एवं रात्रि के मुहूर्त्त-

गिरिशभुजगमित्राः पित्र्यवस्वम्बुविश्वेऽभिजिदथ च विधाताऽपीन्द्र इन्द्रानलौ च।
निर्ऋतिरुदकनाथोऽप्यर्यमाथो भगः स्युः क्रमश इह, मुहूर्त्ता वासरे बाणचन्द्राः ॥

एक दिन तथा एक रात्रि में 15 मुहूर्त्त होते हैं जैसा कि मुहूर्त्तचिन्तामणि में भी कहा गया है-

क्र.सं.	दिन के मुहूर्त्त व अधिप	क्र.सं.	रात्रि के मुहूर्त्त व अधिप
1.	गिरिश- आर्द्रा	1	शिव- आर्द्रा

2.	भुजग-आश्लेषा	2	अजपाद्- पूर्वाभाद्रपद
3.	मित्र- अनुराधा	3	उत्तरभाद्रपद्- अहिर्बुध्न्य
4.	पित्र्य- मघा	4	रेवती- पूषा
5.	वसु-धनिष्ठा	5	अश्विनी- अश्विनीकुमार
6.	अम्बु- पूर्वाषाढा	6	भरणी- यम
7.	विश्व- उत्तराषाढा	7	कृतिका- वह्नि
8.	अभिजित्- ब्रह्म	8	रोहिणी- विधाता
9.	विधाता-रोहिणी	9	मृगशिरा- चन्द्र
10.	इन्द्र- ज्येष्ठा	10	अदिति- पुनर्वसु
11.	इन्द्रानलौ- विशाखा	11	जीवक- पुष्य
12.	निर्ऋति- मूल	12	विष्णु- श्रवण
13.	उदकनाथ- शतभिषा	13	अर्क- हस्त
14.	अर्यमा- उत्तरफाल्गुनी	14	त्वाष्ट- चित्रा
15.	भग- पूर्वाफाल्गुनी	15	मरुत- स्वाती

रात्रि के मुहूर्त्त-

शिवोऽजपादादष्टौ स्युर्भेशा अदितिजीवको ।

विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रमरुतो मुहूर्ता निशि कीर्तिताः ॥

मुहूर्तों के स्वामी- शिव,अजपाद्, अहिर्बुध्न्य, पूषा, अश्विनीकुमार, यम, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्र, अदिति, जीव, विष्णु, अर्क, त्वाष्ट्र एवं वायु इन 15 मुहूर्तों के स्वामी होते हैं। इनका प्रयोग यह है कि, जो कार्य जिस नक्षत्र में कहा है वह उसके स्वामी के मुहूर्त्त में कर लेना उचित है। जैसा कि **महर्षि नारद** ने कहा है कि- जिन नक्षत्रों में जो शुभ कार्य कर सकते हैं वह कार्य उनके देवता, तिथि एवं करणों में भी करना चाहिए।

यत्कार्यं नक्षत्रे तद्दैवत्यासु तिथिषु तत्कार्यम्।

करणमुहूर्तेष्वपि तत्सिद्धिकर देवता सदृशम्।।

जैसे- विवाह के लिए रोहिणी नक्षत्र का निर्देश है। इसके स्वामी ब्रह्मा है। यह रोहिणी नक्षत्र का देवता है। यह दिन का नौवा मुहूर्त्त है और इसके स्वामी ब्रह्मा है। अतः विवाह के लिए श्रेष्ठ है। इस प्रकार आचार्यों द्वारा नक्षत्र में निर्देशित शुभ कार्य तथा उसके स्वामी के आधार पर मुहूर्त का निर्णय करना चाहिए।

इस प्रकार दिन- रात्रि के 15-15 मुहूर्त्त होते हैं लेकिन इन मुहूर्त्तों में दिनमान और रात्रिमान को विभाजित करके वारों के अनुसार कुछ दुर्मुहूर्त्त भी होते हैं। जैसा कि मुहूर्त्तचिन्तामणि में कहा गया है-

रवावर्यमा ब्रह्मरक्षश्च सोमे कुजे वह्निपित्ये बुधे चाभिजित्स्यात्।

गुरौ तोयरक्षो भृगौ ब्राह्मपित्र्ये शनावीशसार्पौ मुहूर्ता निषिद्धाः।।

रविवार को अर्यमा, सोमवार को ब्रह्मा और राक्षश, मंगलवार को अग्नि एवं पितृ, बुधवार को अभिजित् , गुरुवार को तोय और राक्षस, शुक्रवार को ब्रह्म और पितृ एवं शनिवार को शिव सर्प मुहूर्त निषिद्ध होते हैं।

निषिद्ध मुहूर्त्त

वार	दिन के निषिद्ध मु.	रात्रि के निषिद्ध मु.	मुहूर्तों के नाम	नक्षत्र
रविवार	14	-	अर्यमा	उत्तराफाल्गुनी
सोमवार	9,12	8	ब्रह्म, राक्षस	रोहिणी. मूल
मंगलवार	4	7	वह्नि, पित्र्य	कृत्तिका, मघा
बुधवार	8	-	अभिजित्	अभिजित्
गुरुवार	6,12	-	जल. राक्षस	पू. षा. मूल
शुक्रवार	4,9	8	ब्रह्म, पित्र्य	रोहिणी, मघा
शनिवार	1, 2	1	ईश, सार्प	आर्द्रा, श्लेषा

मुहूर्त्त का प्रयोजन-

जब कोई भी व्यक्ति शुभ मुहूर्त या दुर्मुहूर्त्त में जो कुछ भी कार्य करता है, उसका फल न केवल इस जन्म में अपितु जन्मान्तर में भी भोगना पड़ता है। यह अंश आचार्य बृहस्पति विरचित मुहूर्त्तविधान ग्रन्थ में तथा वराहमिहिर की लघुजातक में वर्णित है -

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मणः पङ्क्तिम् ।

व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव ।।

पुनः गर्भाधानादि संस्कार-प्रवास-कृषि आदि कार्य तथा अनेक व्यावहारिक कार्य योग्यकाल अर्थात् शुभकाल में करने से भाग्यहीन जातक भी भाग्यवान होकर शुभफल प्राप्त करता है। अतः इन से सम्बन्धित बहुत नियम हैं, उन नियमों का अनुसार निश्चित शुभ समय ही मुहूर्त्त है। मुहूर्त्तलोक व्यवहार के मध्य में निकटतमः सम्बन्ध है। प्रायः आज भी विवाहादि संस्कार विना मुहूर्त्त के सम्भव नहीं हैं। क्योंकि मानव सदैव सुखानुभूति ही चाहता है, दुःख का कभी अनुभव करना नहीं चाहता। अतः प्राचीन काल से ही मानव शुभ समय, लग्न, मुहूर्त्तादि में ही अपने धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि कार्यों का शुभारम्भ करता है ताकि भविष्य में उसमें कोई समस्या उत्पन्न न हो तथा ऐसी सभी समस्याओं का समाधान ज्योतिषशास्त्र द्वारा ही संभव है। ज्योतिष शास्त्र को वेद का नेत्र कहा गया है। इसके बिना श्रुति-स्मृति-पुराणोक्त प्रतिपादित कोई भी क्रिया सम्पन्न नहीं होती है। मधुर विचार और शिष्टाचार, धर्म, अर्थ और काम का आचरण यह सब स्त्री के लग्न पर निर्भर करता है। इसी कारण विवाह समय में मुहूर्त्त का विचार अवश्य किया जाता है क्योंकि पुत्र का स्वभाव, आचरण और धर्म ये सब विवाह समय की लग्न पर ही निर्भर करते हैं। जैसा कि मुहूर्तचिन्तामणि का वचन है-

भार्या त्रिवर्गकरणं शुभशीलयुक्ता

शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्याः।

तस्माद् विवाहसमयः परिचिन्त्यते हि

तन्निघ्नतामुपगताः सुतशीलधर्माः ।।

6.2. गृहारम्भ मुहूर्त्त-

कालशुद्धि-

गृहेशतत्स्त्रीसुतवित्तनाशोऽर्केन्द्वीज्यशुक्रे विबलेऽस्तनीचे।

कर्तुः स्थितिर्नो विधुवास्तुनोर्भे पुरःस्थिते पृष्ठगते खनिः स्यात्।।

सूर्य	**चन्द्र**	**गुरु**	**शुक्र**	ग्रह की स्थिति
गृहस्वामी	पत्नी	सुख	धन	निर्बल,अस्त,नीचराशि
	नाश	नाश	नाश	परिणाम

गृह का मुख्य द्वार जिस दिशा में हो उसी दिशा में गृहारम्भ दिन का नक्षत्र भी हो तो गृहपति के लिए हानिकारक होता है और यदि मुख्य द्वार के विपरीत दिशा में दोनों नक्षत्र हों तो पृष्ठ नक्षत्र होते हैं। पृष्ठ

नक्षत्रों में चोर भय होता है। गृहद्वार से वाम एवं दक्षिण दिशा में दैनिक व वास्तु नक्षत्र होने पर गृहारम्भ शुभ होता है।

गृह की आयु के योग-

जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु लग्नारिजामित्रसुखत्रिगेषु ।

स्थितिः शतं स्याच्छरदां शिताकरिज्ये तनुत्र्यङ्गसुते शते द्वे ।।

गृहारम्भ समय में यदि बृहस्पति, सूर्य, बुध, शुक्र और शनि ये क्रम से लग्न 6,7,4,3 भावों में हो तो उस घर की आयु 100 सौ वर्ष होती है तथा लग्न में शुक्र, तृतीय भाव में शुक्र, षष्ठ में मंगल और पञ्चम में और षष्ठ में गुरु तो 200 दो सौ वर्ष उस घर की आयु होती है।

गृह की आएँ-

लग्नाम्बरायेषु भृगुज्ञभानुभिः केन्द्रे गुरौ वर्षशतायुरालयः ।

बन्धौ गुरुर्व्योम्नि शशी कुजार्कजौ लाभे तदाऽशीतिसमायुरालयः ।।

गृह निर्माण के समय यदि लग्न में शुक्र, दसम में बुध एवं ग्यारहवें भाव में शुक्र, तथा (1,4 7, 10) भावों में केन्द्र में गुरु हों तो गृह की सौ वर्ष की आयु होती है। चतुर्थ में गुरु, दशम भाव में चन्द्रमा और एकादश में शनि या मङ्गल हो तो 80 वर्ष गृह की आयु होती है।

चिरायु गृहयोग-

स्वोच्चे शुक्रे लग्नगे वा गुरौ वेश्मगतेऽथवा ।

शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम् ।।

यदि अपनी उच्चराशि (मीन) का शुक्र लग्न में हो, या स्वोच (कर्क) का गुरु चतुर्थ भाव में, या स्वोच (तुला) में स्थित शनि एकादश (लाभ) भाव में हो तो ऐसे योग में गृह आरम्भ किया जाए तो वह चिरकाल पर्यन्त लक्ष्मी से युक्त रहता है।

गृह का हस्तान्तरण योग-

द्यूनाम्बरे यदैकोऽपि परांशस्थो ग्रहो गृहम् ।

अब्दान्तः परहस्तस्थं कुर्याच्चिद्वर्णपोऽबलः ।।

यदि गृहारम्भ समय में लग्न से 7 या 10वें भाव में शत्रु के नवमांश में कोई ग्रह हो तो वर्ण स्वामी ग्रह निर्बल हो तो वर्ष के अन्दर ही वह घर दूसरों के अधिकार में चला जाता है, यदि गृहपति का अर्थात् ग्रह यदि अपने नवमांश में हो या वर्ण स्वामी सबल हो तो शुभ फल देता है।

गृहारम्भ में नक्षत्र एवं वारों की महत्ता-

पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलेः सजीवैस्तदासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात्।

द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैः सशुक्रैः वारि सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात्।।

गृहारम्भ समय में बृहस्पति से युत पुष्य, ध्रुवसंज्ञक (तीनों उत्तरा, रोहिणी) मृगशिरा श्रवण, आश्लेषा व पूर्वाषाढ़ा में से कोई नक्षत्र हो तथा बृहस्पतिवार भी हो तो वह घर पुत्र और राज्य सुख देने वाला होता है। शुक्र से युत विशाखा, अश्विनी, चित्रा,धनिष्ठा, शतभिषा एवं आर्द्रा नक्षत्र हों तथा शुक्रवार भी हो तो वह घर धन- धान्य की वृद्धि करने वाला होता है।

सारैः करज्यान्त्यमधाम्बुमूलैः कौजेऽह्नि वेश्माग्निसुतार्तिदं स्यात्।

सज्ञैः कदास्त्रार्यमतक्षहस्तैर्ज्ञस्यैव वारे सुखपुत्रदं स्यात्।।

कुज से युक्त हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पूर्वाषाढ़ा या मूल नक्षत्र हों और मंगलवार में गृहारम्भ तो वह घर अग्नि और सन्तान को पीड़ा देने वाला होता है। बुध से युत रोहिणी, अश्विनी, उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, हस्त नक्षत्र हों तथा बुधवार में निर्मित घर सुख और सन्तान की वृद्धि करने वाला होता है।

अशुभ योग-

अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकैः।

समन्दैर्मन्दवारे स्याद्रक्षोभूतयुतं गृहम्।।

यदि शनि से युत पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद, ज्येष्ठा, अनुराधा, स्वाती एवं भरणी नक्षत्र हों तथा शनिवार भी हो तो ऐसे समय निर्मित गृह में राक्षस और भूत प्रेतों का वास होता है।

द्वार स्थापन चक्र-

सूर्यर्क्षाद्युगभै शिरस्यथ फलं लक्ष्मीस्ततः कोणभै-

र्नागरुद्वसनं ततो गजमितैः शाखासु सौख्यं भवेत्।

देहल्यां गुणभैर्मृतिर्गृहपतर्मध्यस्थितैर्वेदभैः

सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वारं विधेयं शुभम्।।

नूतन गृह में द्वार स्थापन के समय सूर्य नक्षत्र से 4 नक्षत्र द्वारचक्र के शिर पर होते हैं। इनमें द्वार स्थापन लक्ष्मी की वृद्धि कराता है। तत्पश्चात् आगे के 8 नक्षत्र कोण में स्थित होते हैं, उसमें द्वार स्थापित करने से उद्वेग होता है। उसके बाद के 8 नक्षत्र द्वार शाखा के होते हैं, उसमें द्वार निर्माण करने से सुख प्राप्त होता है। उसके अनन्तर 3 नक्षत्र देहली (चौखट) के होते हैं, उनमें द्वार स्थापित करने से गृहपति के लिए मृत्यु कारक होते हैं। अन्तिम 4 नक्षत्र मध्यभाग के होते हैं, उसमें द्वार का निर्माण करने से सुख की प्राप्ति होती है।

सूर्य नक्षत्र से चौखट बोधक चक्र-

सौर नक्षत्र सं.	4	8	8	3	4
स्थान	सिर	कोण	शाखा	चौखट	मध्य
परिणाम	लक्ष्मीकारक	उद्वेग कारक	सुखकारक	मृत्युकारक	सुखकारक

6.3. गृहप्रवेश मुहूर्त्त-

सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे ।

स्याद्वेशनं दाःस्थमृदुध्रुवोडुभिर्जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे ।।

उत्तरायण समय में (मकर संक्रान्ति से मिथुन संक्रान्ति तक) ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख मासों में गृह मुख्य द्वार का दिशा वाले नक्षत्र (कृत्तिकादि 7,7 जो पूर्वादि दिशा में कहे गए हैं) उनमें तथा मृदुसंज्ञक(मृगशिरा, रेवती, चित्रा,अनुराधा) और ध्रुवसंज्ञक (उत्तराफाल्गुनि, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी नक्षत्रों में, जन्म लग्न और जन्म राशि से उपचय (2,6,10,11) राशि व स्थिर लग्न में प्रवेश करना चाहिए।

जीर्णगृहप्रवेश मुहूर्त-

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेऽपि मार्गोर्जयोः श्रावणिकेऽपि सन् स्यात् ।

वेशोऽम्बुपेज्यानिलवासवेषु नावश्यमस्तादिविचारणाऽत्र ।।

पुराने गृह अथवा अग्नि आदि से नष्ट होने पर नवनिर्मित घर में भी मार्गशीर्ष, कार्तिक और श्रावण मासों में भी तथा शतभिषा, पुष्य, स्वाती एवं धनिष्ठा में भी नवीन गृह प्रवेश करना शुभ होता है। अपूर्व-प्रवेश, यात्रा से लौटने पर सपूर्वप्रवेश और जीर्णगृहप्रवेश को द्वन्द्वप्रवेश कहते हैं।

अपूर्वः प्रथमः प्रवेशो यात्रावसाने तु सपूर्वसंज्ञः ।

द्वन्वाभयः त्वग्निभयादिजातः त्वेवं प्रवेशस्त्रिविधः प्रदिष्टः ॥

वास्तु पूजन और गृहप्रवेश विधि-

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतबलिश्च कारयेत् ।

त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभैर्लग्ने त्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः ।।

शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यार्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे ।

अग्रेऽम्बुपूर्णं कलशं द्विजांश्च कृत्वा विशेद्वेशम भकूटशुद्धम् ।।

मुदुसंज्ञक(मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) ध्रुवसंज्ञक (तोनों उत्तरा, रोहिणी) क्षिप्रसंज्ञक (विशाखा, कृत्तिका) चरसंज्ञक(स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा और मूल नक्षत्रों में वास्तुपूजन और भूतबलि करना चाहिए और लग्न से त्रिकोण (5,9) केन्द्र (1,4 , 7,10) तथा 11 व 3 भाव में शुभग्रह स्थित हों और पापग्रह 3, 6, 11 भावों में पापग्रह, लग्न से 4 ,8 भाव ग्रह रहित हों,

गृह स्वामी की जन्म राशि से लग्न 8 राशि लग्न को त्याग कर अन्य राशि लग्न हो, रविवार, मंगलवार, रिक्ता तिथि, (4, 8, 12) चर लग्न, अमावस्या और चैत्र मास को छोड़कर अन्य दिन, तिथि, लग्न, मासों में आगे पूर्ण कलश और ब्राह्मणों को लेकर भकूटादि से शुद्ध देखते हुए गृह में प्रवेश करना चाहिए।

गृह प्रवेश लग्न से वाम रवि विचार-

वामो रविर्मृत्युसुतार्थलाभतोऽर्के पञ्चमे प्राग्वदनादिमन्दिरे ।

पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे शुभो नन्दादिके याम्यजलोत्तराननें ।।

गृहप्रवेश कालिक लग्न से 8,9,10,11,12 इन भावों में सूर्य हो तो पूर्व मुखवाले घर में करने में वाम रवि होता है तथा 5,6,7,8,9 भावों में सूर्य हो तो दक्षिण मुख के घर में प्रवेश करने मे वाम होता है। 2, 3,4, 5, 6 इन भावों में सूर्य हो तो पश्चिम मुख के घर मे प्रवेश करने से वाम रवि होता है, तथा 11,12 ,1,2, 3 इन भावों में रवि हो तो उत्तर द्वार वाले घर में प्रवेश करने वाले को वाम रवि होता है। पूर्व मुख के घर में पूर्णा तिथियों में, दक्षिण मुख के गृह में भद्रा तिथियों में, पश्चिम मुख के घर में, जया तिथियों और उत्तर मुख के गृह में प्रवेश शुभ होता है।

गृहप्रवेश में कुम्भ चक्र-

वक्त्रे भूरविभात्प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृताः

प्राच्यामुद्वसनं कृता यमगता लाभः कृताः पश्चिमे ।

श्रीर्वेदाः कलिरुत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे

रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाः कण्ठे भवेत्सर्वदा ।।

गृह प्रवेश समय में सूर्य जिस नक्षत्र में हो वह नक्षत्र के मुख में होता है। इससे 1 नक्षत्र कलश के मुख का होता है, उसमें प्रवेश करने से अग्निभय, उसके आगे के 4 नक्षत्र- पूर्व दिशा के होते हैं, उनमें प्रवेश करने से उद्वासता। तत्पश्चात् 4 नक्षत्र दक्षिण दिशा के होते हैं, उनमें प्रवेश करने से लाभ एवं सौख्य होता है। उससे आगे के 4 नक्षत्र पश्चिम दिशा के होते हैं, उनमें प्रवेश करने से सम्पत्ति लाभ होता है। उसके बाद के 4 नक्षत्र उत्तर दिशा के होते हैं, उनमें गृह प्रवेश करने से कलह होता है। तदनन्तर 4 नक्षत्र गर्भ के होते हैं, उनमें प्रवेश से विनाश। अनन्तर 3 नक्षत्र गुदा के होते हैं, उनमें प्रवेश करने से स्थिरता और उसके आगे के 3 नक्षत्र कण्ठ के होते हैं, उनमें भी गृहप्रवेश करने से स्थिरता प्राप्त होती है।

एवं सुलग्ने स्वगृहं प्रविश्य वितानपुष्पश्रुतिघोषयुक्तम् ।

शिल्पज्ञदैवज्ञविधिज्ञपौरान् राजाऽर्चयेद् भूमिहिरण्यवस्त्रैः ।।

इस प्रकार शुभ लग्न में मण्डप,पुष्प तथा मालाओं से सज्जित तथा वेदों के ध्वनि से युक्त अपने नवीन गृह में गृहपति को शिल्पज्ञ, ज्योतिषी, पुरोहित तथा पुरवासियों को यथाशक्ति भूमि, सुवर्ण एवं वस्त्रादि से सत्कार कर गृह में प्रवेश करना चाहिए।

गृहप्रवेशादि में त्याज्य शुभयोग-

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम् ।

भौमाश्विनीं शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं विवर्जयेत् ।।

गृहप्रवेश में, यात्रा में तथा विवाह में यथाक्रम मंगलवार में अश्विनी नक्षत्र, शनिवार में रोहिणी नक्षत्र, गुरुवार में पुष्य नक्षत्र को त्याग देना चाहिए।

6.4. अक्षरारम्भ का मुहूर्त्त-

गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी का विधिवत् पूजन कर पाँचवे वर्ष में, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पञ्चमी, तृतीया इन तिथियों में, सूर्य के उत्तरायण में होने पर, लघुसंज्ञक (हस्त, अश्वनी, पुष्य, अभिजित) श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा, अनुराधा नक्षत्रों में, चर लग्न को छोड़कर शुभवारों व शुभ लग्नों में बालक का अक्षरारम्भ कराना चाहिए।

गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके

तिथौ शिवार्कदिग्द्विषटशरत्रिके रवावुदक् ।

लघुश्रवोऽनिलान्त्यमादितीशतक्षमित्रभे

चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ।।(मु.चि.सं.प्र.37)

6.5. विद्यारम्भ मुहूर्त्त-

मृगशिरा, हस्त एवं श्रवण से तीन-तीन नक्षत्र, (मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा शतभिषा) अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य से दो पुष्य, और आश्लेषा तथा रविवार, गुरुवार, बुधवार और शुक्रवार के दिनों में, षष्ठी, पञ्चमी, तृतीया, एकादशी, द्वादशी, दशमी तथा द्वितीया तिथियों में तथा शुभग्रहों के केन्द्र त्रिकोण में होने पर विद्यारम्भ शुभ है। अन्य आचार्यों के अनुसार ध्रुवसंज्ञक(तीनों उत्तरा रोहिणी) रेवती और अनुराधा नक्षत्रों में विद्यारम्भ प्रशस्त होता है।

मुगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये

गुरुद्वयेऽर्कजीववित्सितेऽह्नि षड्शरत्रिके।

शिवार्कदिग्दिके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः

शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगैः स्मृताः ।।(मु.चि.सं.प्र.38)

6.6. यज्ञोपवीत(उपनयन, व्रतबन्ध) मुहूर्त्त-

नवम संस्कार गर्भाधान समय से वा जन्म समय से पाँचवें अथवा आठवें वर्ष में ब्राह्मण का, छठे या ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रियों का, आठवें अथवा बारहवें वर्ष में वैश्यों का यज्ञोपवीत संस्कार श्रेष्ठ है। उपर्युक्त समय से द्विगुणित वर्ष तक उपनयन मध्यम अर्थात् गौण होता है।

विप्राणां व्रतवन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाष्टिमे

वर्षे वाप्यथ पञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे ।

वैश्यानां पुनरष्मेऽप्यथ पुनः स्याद् द्वादशे वत्सरे

कालेऽथ द्विगुणे गते निगदिते गौणं तदाहुर्बुधाः ।।(मु.चि.सं.प्र.39)

व्रतबन्ध का मुहूर्त-

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वा- रौद्रेऽर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत् ।

द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ।।40।।

क्षिप्रसंज्ञक(हस्त, अश्वनी, पुष्य), ध्रुवसंज्ञक(तीनों उत्तरा, रोहिणी), आश्लेषा, चरसंज्ञक, मूल, मुदुसंज्ञक (मृगशिरा, रेवती, चित्रा) तीनों पूर्वा(पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद) और आर्द्रा इन नक्षत्रों में, रवि, बुध, गुरु, शुक्र, सोम आदि वारों में, द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, एकादशी, द्वादशी, दशमी इन तिथियों में, शुक्ल पक्ष तथा कृष्ण पक्ष की पञ्चमी तक दोपहर के पहले उपनयन करना शुभ है।

यज्ञोपवीत में निन्द्य वार-

शुक्र, गुरु, चन्द्र और लग्नेश छठें और आठवें स्थानों में, 12वें में चन्द्र और शुक्र हो तथा लग्न, आठवें में और पाँचवें स्थान में पाप ग्रह हो तो अशुभ है। जैसा कि मुहूर्त्तचिन्तामणी में कहा गया है-

कवीज्य-चन्द्र-लग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः ।

व्ययेऽब्ज-भार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ।।(मु.चि.सं.प्र.41)

व्रतबन्ध में लग्नशुद्धि- व्रतबन्ध काल में लग्न से 6, 8, 12 भावों को त्यागकर इनसे भिन्न स्थान में शुभग्रह, तथा 3, 6, 11 इनमें पापग्रह हों और पूर्ण चन्द्रमा वृष कर्क राशि के लग्न में हो तो उपनयन में शुभ होता है।

व्रतबन्धेऽएषड्रिःफवर्जिताः शोभनाः शुभाः ।

त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ।।(मु.चि.सं.प्र.42)

ब्राह्मणादि वर्ण तथा वेदों के स्वामी-

ब्राह्मणों के गुरु और शुक्र, मंगल सूर्य क्षत्रियों के, चन्द्रमा वैश्यों के, बुध शूद्रों के, शनि अन्त्यजों (चाण्डालों) के स्वामी हैं। अर्थात् -ऋग्वेद के गुरु, यजुर्वेद के शुक्र, सामवेद के मङ्गल, अथर्ववेद के बुध स्वामी हैं।

वर्णेश और शाखेश का प्रयोजन-

उपर्युक्त वेदों के स्वामी का दिन हो, उसी का लग्न हो तथा वे बलवान् हों तो उपनयन अति शुभदायक होता है। शाखेश और सूर्य, चन्द्रमा एवं गुरु बली हों तो भी उपनयन शुभ होता है। गुरु शुक्र शत्रु के ग्रह की राशि में या किसी ग्रह से पराजित हों या फिर नीच में हों तो इस समय में उपनयन संस्कार करने से वेदशास्त्र की विद्याओं से अनभिज्ञ होता है।।44।।

शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं

शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत् ।

जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे

स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन ।।(मु.चि.सं.प्र.44)

यज्ञोपवीत में जन्ममासादि विचार-

ब्राह्मण के ज्येष्ठ बालक और क्षत्रिय, वैश्य के दूसरे गर्भ के बालक का जन्म दिन, जन्म नक्षत्र, जन्म मास, जन्म लग्न और जन्म तिथि में भी उपनयन संस्कार करने पर वह बालक प्रसिद्ध विद्वान् होता है।

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती ।

आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे ।।(मु.चि.सं.प्र.45)

गुरुशुद्धि विचार-

बालक और बालिका की जन्म राशि से 5, 9, 11, 2, 7 स्थानों में गुरु श्रेष्ठ होते हैं। 10, 6, 3, 1 आदि स्थानों में पूजा द्वारा शुभ होते हैं और 4, 8, 12 में स्थित गुरु अशुभ ही होते हैं, अर्थात् निन्दित होते है।

बटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः ।

श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयाऽन्यत्र निन्दितः ।।(मु.चि.सं.प्र.46)

गुरु दोष का अपवाद विचार-

अपनी राशि का, अपने उच्च का, अपने मित्र के घर का, अपने नवांश का और वर्गोत्तम नवांश का गुरु यदि 4, 8, 1, 2 दुष्ट स्थान में हो तो भी शुभ है और नीच या शत्रु का हो तो शुभ भी अशुभ है।

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः ।

रिष्फाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसन् ।।(मु.चि.सं.प्र.47)

यज्ञोपवीत में निषिद्ध काल-

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके ।

प्राक्सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे ।।(मु.चि.सं.प्र.48)

कृष्णपक्ष (कृष्णपक्ष के प्रथम तृतीयांश प्रतिपदा से पञ्चमी तक त्याग कर) अर्थात् षष्ठी से अमावस्या तक प्रदोशकाल (तृतीया, सप्तमी एवं द्वादशी का सन्धिकाल) अनध्याय(निषिद्ध है। शनिवार , रात्रि, मध्याह्न के बाद, तथा प्रातः और सायंकाल में, मेघ गर्जन पर, एवं गलग्रह (1, 4, 7, 8, 9, 13,14, 15,) तिथियाँ गलग्रह कही जाती हैं। इनमें उपनयन संस्कार शुभ नहीं होता है।

यज्ञोपवीत के समय ग्रहों का नवमांश फल-

यज्ञोपवीत के समय लग्न में सूर्य का नवांश क्रूर, चन्द्र का जड़, मंगल का पापी, बुध चतुर, बृहस्पति का हो तो यज्ञ- करना, कराना, अध्ययन, अध्यापन, दान देना एवं लेना आदि छः कर्मों का कर्ता, शुक्र का हो तो यज्ञ करने वाला और धनी तथा शनि का नवांश हो तो मूर्ख होता है।

क्ररो जड़ो भवेत् पापः. पटुः षड्कर्मकृद्वटुः ।

यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खो रव्याद्यंशे तनौ क्रमात् ।।(मु.चि.सं.प्र.49)

चन्द्र नवमांश फल एवं अपवाद-

चन्द्रमा उपनयन काल में शुभग्रहों की राशियों के नवांश में हो तो वह बटुक विद्याभ्यास करने वाला तथा पाप राशि के नवांश में चन्द्रमा हो तो दरिद्र होता है। चन्द्रमा अपने नवांश में हो तो बहुत दुःखी और चन्द् श्रवण और पुनर्वसु नक्षत्र में हो तो बहुत धनी होता है।

विद्यानिरतः शुभराशिलवे पापांशगते हि दरिद्रतरः ।

चन्द्रे स्वलवे बहुदुःखयुतः कर्णादितिभे धनवान्स्वलवे ।।(मु.चि.सं.प्र.50)

केन्द्रस्थ सूर्यादि ग्रहों का फल-

यज्ञोपवीत संस्कार के समय यदि सूर्य ग्रह केन्द्र में हो तो राजा का सेवक, चन्द्र हो तो व्यापारी, मंगल होतो शस्त्र द्वारा जीविका चलानेवाला, बुध हो तो शिक्षक, गुरु हो तो पण्डित, धनवान् और शनि यवनादि का सेवक होता है।

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः ।

प्राज्ञोऽर्थवान् म्लेच्छसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः ।।(मु.चि.सं.प्र.51)

अन्य ग्रहों के फल-

शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमाऽर्किसंयुते ।

निर्गुणः क्रूरचेष्टः स्यान्निर्घणः सद्युते पटुः ।।(मु.चि.सं.प्र.52)

उपनयन समय में गुरु, शुक्र व चन्द्रमा (साथ-साथ या पृथक-पृथक) कोई भी ग्रह सूर्य के साथ युत हो तो गुणहीन, मङ्गल से युत हो तो निर्दयी, शनि से युत हो तो निर्लज्ज होता है और शुभ ग्रह से युत हो तो बटुक चतुर होता है।

चद्र नवांश का फल-

उपनयन काल में चन्द्रमा शुक्र के नवांश में हो व शुक्र त्रिकोण 9, 5 भावों में हो तथा गुरु लग्न में हो तो जातक समस्त शास्त्रों का ज्ञाता और यदि शनि के नवांश में हो तथा शुक्र एवं गुरु लग्न में हो तो बटुक अत्यन्त निर्लज्ज व दयाहीन होता है।

विधौ सितांशगे सिते त्रिकोणगे तनौ गुरौ ।

समस्तवेदविद् व्रती यमांशगेतिऽनिर्घृणः ।।(मु.चि.सं.प्र.53)

यज्ञोपवीत में अनध्याय-

शुचिशुक्रपौषतपसां दिगश्विरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः ।

भूतादित्रियाष्टमी सङ्क्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ।।(मु.चि.सं.प्र.54)

आषाढ़, ज्येष्ठ, पौष और माघ मासों के शुक्लपक्ष को क्रम से 10, 2, 11, 12 ये तिथियाँ अर्थात् आषाढ़ शुक्ल पक्ष दशमी, ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी एवं माघ शुक्ल द्वादशी और सभी मासों के दोनों पक्षों की चतुर्दशी से 14, 15, 30, 1, 8 तिथियाँ तथा संक्रान्ति ये अनध्याय हैं। इनमें उपनयन नहीं करना चाहिए।

प्रदोष का लक्षण-

द्वादशी तिथि में अर्ध रात्रि से पूर्व त्रयोदशी हो जाए, षष्ठी के दिन डेढ़ पहर रात से पूर्व सप्तमी हो तथा तृतीया में प्रथम प्रहर के मध्य में चतुर्थी लगने पर प्रदोष होता है।

अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।

रात्र्यर्धे सार्धप्रहरयाममध्यस्थितैः क्रमात् ।।(मु.चि.सं.प्र.55)

ब्रह्मौदन संस्कार-

व्रतबन्ध के बाद उसी दिन सायंकाल होने वाले ब्रह्मौदन पाक से पूर्व यदि कोई उत्पात (अकाल, वृष्टि, उल्कापातादि) या अनध्याय आ जाय तो उसकी शान्ति करके ब्रह्मौदन पाक कर्म करें।

प्राग्ब्रह्मौदनपाकाद् व्रतबन्धनानन्तरं यदि चेत् ।

उत्पातानध्ययनोत्पत्तावपि शान्तिपूर्वकं तत्स्यात् ।।(मु.चि.सं.प्र.56)

वेद क्रम से यज्ञोपवीत के नक्षत्र-

वेदक्रमाच्छशिशिवाहिकरत्रिमूलपूर्वासु पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये ।

ध्रौवेषु चाश्विवसुपुष्यकरोत्तरेशकर्णे मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ सत् ।।(मु.चि.सं.प्र.57)

मृगशिरा, आर्द्रा, आश्लेषा हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल और तीनों पूर्वा नक्षत्र ऋग्वेदियों के लिए, रेवती, हस्त, अनुराधा, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य एवं ध्रुवसंज्ञक यजुर्वेदियों के लिए, अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, आर्द्रा, श्रवण ये सामवेदियों के लिए तथा मृगशिरा, रेवती, लघुसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य), धनिष्ठा और पुनर्वसु नक्षत्र अथर्ववेदियों के लिए उपनयन में शुभ हैं।

6.7. दोषनाशक रवियोग-

सूर्यभाद्वेदगोतर्कदिग्विश्वनखसम्मिते ।

चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसङ्घविनाशकाः ।।(मु.चि.शु.27)

सूर्य अधिष्ठित नक्षत्र से गणना कर उससे 4,9,6,10, 13 ,20 पर यदि चन्द्र हो अर्थात् दिन के नक्षत्र तक नक्षत्र की संख्या आए तो रवियोग दोषों के समूह का नाश कर देता है।

उदाहरण- आश्लेषा नक्षत्र पर यदि सूर्य हो और चन्द्रमा उत्तराफाल्गुनि में रवियोग हुआ।

6.8. **सिद्धयोग-** यदि शुक्रवार में नन्दा, बुधवार में भद्रा, मंगलवार में जया, शनिवार में रिक्ता, गुरुवार में पूर्णा तिथियाँ हों तो सिद्धयोग होता है।

यथा- रामदैवज्ञ वचन- **सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धाः ।। (मु.चि.शु.4)**

6.8. **सर्वार्थसिद्धि योग-** रविवार को हस्त, मूल, तीनों उत्तरा (उत्तराफाल्गुनि, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद), पुष्य और अश्विनी, नक्षत्र हो, सोमवार को श्रवण, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा, मङ्गलवार को अश्विनी, उत्तरभाद्रपद, कृत्तिका, आश्लेषा नक्षत्र, बुधवार को रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृत्तिका, मृगशिरा, गुरुवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य; शुक्रवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण, शनिवार को श्रवण, रोहिणी, स्वाती नक्षत्र हों तो सभी प्रकार सिद्धियों को देने वाले सर्वार्थसिद्धि योग होते हैं। पूर्वाचार्यों का यह मत है।

जीवेऽन्त्यमैत्राशव्यदितीज्यधिष्ण्यं शुक्रेऽन्त्यमेत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।

शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ।।

कार्यविशेष में निषिद्ध तिथि-

षष्ठी, अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या आदि तिथियों में पुरुष क्रम से तेल, मांस, क्षौर और मैथुन न करें और त्रयोदशी, दशमी, द्वितीया में उबटन न लगाएँ, अमावस्या, सप्तमी एवं नवमी को आँवला युक्त पदार्थ से स्नान नहीं करना चाहिए, यथा-

षष्ठ्यष्टमी भूतविधुक्षयेषु नो सेवेत ना तैलपले क्षुरं रतम् ।

नाभ्यञ्जनं विश्वदशद्विके तिथौ धात्रीफलैःस्नानममाद्रिगोष्वसत्।।(मु.चि.शु.7)

6.9. अशुभयोग-

दग्धयोग - सूर्यादि वारों में रविवार को द्वादशी, सोमवार को ईश-एकादशी, मङ्गलवार को पञ्चमी, बुधवार को अग्नि-तृतीया, बृहस्पतिवार को रस-षष्ठी, शुक्रवार को अष्टमी एवं शनिवार को नवमी तिथि हो तो दग्धयोग होता है।

विषयोग- रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठी, मङ्गलवार को सप्तमी, बुधवार को द्वितीया, बृहस्पतिवार को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी और शनिवार को सप्तमी तिथि पड़े तो विषयोग होता है।

हुताशन योग- रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठी, मङ्गलवार को सप्तमी, बुधवार अष्टमी, बृहस्पतिवार को नवमी, शुक्रवार को दशमी शनिवार को एकादशी हो तो हुताशन योग होता है।

यमघण्ट योग- रविवार को मघा, सोमवार को विशाखा, मङ्गलवार को शिव-आर्द्रा, बुधवार को मूल, गुरुवार को वह्नि-कृत्तिका, शुक्रवार को ब्राह्म-रोहिणी एवं शनिवार को कर-हस्त नक्षत्र हो तो यमघण्टयोग होता है। ये चारों योग शुभ कार्यों में त्याज्य हैं यथा-

सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दा वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः ।

सरय्यङ्गिसप्तोरगगोदिगीशा दग्धा विषाख्याश्च हुताशनाश्च ।।

सूर्यादिवारे तिथयो भवन्ति मघाविशाखाशिवमूलवह्निः ।

ब्राह्मं करोऽर्काद्यमघण्टकाश्च शुभे विवर्ज्या गमनेत्ववश्यम् ।।(मु.चि.शु.8-9)

6.10. आनन्दादि योग-

आनन्द, कालदण्ड, धूम्र, धाता, सौम्य, ध्वांक्ष, केतु, श्रीवत्स, वृत्र, मुद्गर, छत्र, मित्र, मानस, पद्म, लुम्ब, उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि, शुभ, अमृत, मुसल, गद, मातंग, रक्ष, चर, सुस्थिर तथा प्रवर्द्धमान ये योग अपने-अपने नाम के अनुसार फल देने वाले होते हैं।

रविवार को अश्विनी से, सोमवार को मृगशिरा से, मंगलवार को आश्लेषा से, बुधवार को हस्त से, गुरुवार को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराषाढ़ा से, शनिवार को शतभिषा। उपर्युक्त योग के अनुसार वर्तमान नक्षत्र तक गणना करें, उस दिन तक गिनने पर जो संख्या प्राप्त हो उसी संख्या वाला योग उस दिन आनन्दादि स्थिर योगों में से समझना चाहिए।

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो धाता सौम्यो ध्वांक्षकेतू क्रमेण ।

श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ।।

उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धी शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च ।

मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्य-प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ।।(मु.चि.शु.24)

6.11. अशुभ योगों का परिहार-

ध्वाङ्क्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्यो वर्ज्या वेदाः पद्मलुम्बे गदेऽश्वाः।

धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयं दे रक्षोमृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे ।।(मु.चि.शु.26)

आवश्यक कार्य होने पर ध्वांक्ष, वज्र, मुद्गर इन योगों के आदि की पाँच-पांच घटी, पद्म लुम्ब की 4 घटी, गदयोग की 7 घटी, धूम्र योग की 1 घटी, काण योग एवं मुसल योग की 2 घटी त्यागकर उनकी शेष घटियों में मांगलिक कार्य किया जा सकता है। परन्तु राक्षस, मृत्यु, उत्पात एवं काल इन योगों की सम्पूर्ण घटियों को त्याग देना चाहिए।

6.12. उत्पात, मृत्यु, काण और सिद्धियोग-

द्वीशात्तोयाद्वासवात् पौष्णभाच्च ब्राह्मात्पुष्यादर्यमर्क्षाच्चतुर्भैः ।

स्यादुत्पातो मृत्युकाणौ च सिद्धिवारिऽर्कोद्ये तत्फलं नामतुल्यम् ॥(मु.चि.शु.30)

योग	रवि.	सोम.	भौम.	बुध.	गुरु	शुक्र	शनि
उत्पात	विशाखा	पूर्वषाढा	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ. फा.
मृत्यु	अनुराधा	उत्तरषाढ़ा	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	आश्वलेषा	हस्त
काण	ज्येष्ठा	श्रवण	पूर्वाभाद्रपद	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
सिद्धि	मूल	धनिष्ठा	उत्तराभाद्रपद	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफाल्गुनि	स्वाती

रविवार में विशाखा से चार नक्षत्र, सोमवार में पूर्वाषाढा से चार नक्षत्र, मङ्गलवार में धनिष्ठा से चार नक्षत्र, बुध में रेवती से चार नक्षत्र, गुरु में रोहिणी से चार नक्षत्र, शुक्र में पुष्य से चार नक्षत्र, शनि में उत्तराफाल्गुनी से चार नक्षत्र होने से क्रम से उत्पात, मृत्यु, काण और सिद्धियोग होते हैं।

6.13. कुलिकादियोग-

कुलिकः कालवेला च यमघण्टश्च कण्टकः ।

वाराद्विघ्ने क्रमान्मन्दे बुधे जीवे कुजे क्षणः ।।(मु.चि.शु.37)

अभीष्ट दिन से **शनि** तक गणना करने से जो संख्या हो उसको द्विगुणित करने पर जो संख्या प्राप्त हो उस संख्या वाला मुहूर्त **कुलिक** योग। **बुध** तक गणना करने पर जो संख्या प्राप्त हो उसे द्विगुणित करने पर **कालवेला**, **गुरु** तक गिनकर दूना करने पर **यमघण्ट**, **मङ्गल** तक गिनकर दूना करने पर **कण्टक** योग होता है।

उदाहरण- सोमवार को कुलिक आदि योग जानना है तो-

सोम से शनि 5x2= 10 कुलिक।

सोम से बुध 3x2=6 कालवेला।

सोम से गुरुवार 4x2= 8 यमघण्ट।

सोम से मङ्गल 1x2= 2 कण्टक।

मध्यम मान से 2,2, घटी का एक मुहूर्त होता है। स्पष्टमान से दिनमान का 15वां भाग दिन का मुहूर्त और रात्रिमान का 15वां भाग रात्रि का मुहूर्त्त समझना चाहिए लेकिन रात्रि में वारेश से पञ्चम ग्रह से क्रमशः गणना करनी चाहिए।

6.14. संक्रान्ति नक्षत्र से शुभाशुभ फल ज्ञान-

जिस नक्षत्र में सूर्य संक्रान्ति हो उससे पूर्व नक्षत्र से गणना करने पर अपना जन्मनक्षत्र 3 नक्षत्र पर्यन्त पड़े तो यात्रा, अग्रिम छः नक्षत्रों में पड़े तो शरीर सुख, अग्रिम तीन नक्षत्रों में तो पीड़ा, अनन्तर छः नक्षत्रों में पर्यन्त पड़े तो वस्त्र की प्राप्ति, तदनन्तर तीन नक्षत्रों में हो तो धन की हानि और उसके बाद अन्तिम छःनक्षत्रों में हो तो धनागम होता है। जैसा कि मुहूर्त्त चिन्तामणि में कहा गया है-

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतस्त्रिभे स्वभे निरुक्तं गमनं ततोऽङ्गभे।

सुखं त्रिभे पीडनमङ्गभेंऽशुकं त्रिभेऽर्थहानी रसभे धनागमः ।।

संक्रान्ति पूर्व नक्षत्र से जन्म नक्षत्र संख्या	3	6	3	6	3	6
फल	यात्रा	सुख	पीड़ा	वस्त्रलाभ	धनहानि	धनागम

6.15. गोधूलि लग्न की प्रशंसा-

इस गोधूलि लग्न में नक्षत्र, तिथि,करण, लग्न, दिन, नवांश, मुहूर्त्त, योग, अष्टम स्थान, जामित्र दोषादि का विचार गोधूलि लग्न में नहीं करना चाहिए क्योंकि गोधूलि लग्न सभी कार्य में प्रशस्त है ऐसा मुनियों ने कहा है।

नास्यामृक्षं न तिथिकरणं नैव लग्नस्य चिन्ता

ना वा वारोन च लवविधिर्नो मुहूर्तस्य चर्चा ।

नो वा योगो न मृतिभवनं नैव जामित्रदोषो ।

गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्य्येषु शस्ता ॥ (मु.चि.वि.प्र.100)

गोधूलि के भेद-

हेमन्त ऋतु (मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन) में संध्या समय सूर्य जब गोलाकार हो जाते हैं, ग्रीष्म ऋतु (चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़) मासों में जब आधे अस्त हो जाते हैं एवं वर्षा ऋतु (श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक) मासों में सम्पूर्ण अस्त होने पर गोधूलि होती है। ये तीन प्रकार की गोधूलि के समय सभी कार्य शुभ होते हैं।

पिण्डीभूते दिनकृति हेमन्ततौं स्यादर्धास्ते तपसमये गोधूलिः ।

सम्पूर्णास्ति जलधरमालाकाले त्रेधा योज्या सकलशुभे कार्यादौ ॥ (मु.चि.वि.प्र.101)

गोधूलि में वर्जनीय समय-

अस्तं याते गुरुदिवसे सौरे सार्के लग्नान्मृत्यौ रिपुभवने लग्ने चेन्दौ।

कन्यानाशस्तनुमदमृत्युस्थे भौमे वोढुर्लाभे धनसहजे चन्द्र सौख्यम् ॥ (मु.चि.वि.प्र.103)

गुरुवार को सूर्यास्त होने के बाद एवं शनिवार को सूर्यास्त से पूर्व गोधूलि शुभ होती है। गोधूलिकाल में विवाह लग्न से अष्टम, षष्ठभाव, एवं लग्न में यदि चन्द्रमा हो तो कन्या का नाश होता है। लग्न, सप्तम और अष्टम भाव में मंगल हो तो वर का नाश होता है। एकादश, द्वितीय एवं तृतीय भाव में चन्द्रमा हो तो सुखकारक है।

6.16. शुभ कार्य के आरम्भ करने का मुहूर्त्त-

जन्म राशि अथवा जन्म लग्न से उपचय 3,6,10,11 इन राशियों की लग्न हो, द्वादश और अष्टम भाव शुद्ध हो अर्थात् ग्रह रहित हो। लग्न पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो, चन्द्रमा लग्न से 3, 6, 10, 11भावों में स्थित हो तो इस मुहूर्त्त में आरम्भ किए गए सभी कार्यों में सफलता प्राप्त होती है।

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।

चन्द्रे त्रिषडदशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ।।

6.17. कर्ज देने-लेने का मुहूर्त-

स्वाती, पुनर्वसु, मुदुसंज्ञक (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) विशाखा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा एवं अश्विनी नक्षत्रों में, चर लग्न में, नवम, पञ्चम और अष्टम भाव ग्रहरहित या शुभ ग्रहों से युत हो तो ऋण लेना, ऋण देना एवं व्यापार में लगना शुभ होता है। मङ्गलवार, संक्रान्ति दिन, वृद्धि योग तथा रविवार को हस्त नक्षत्र में ऋण नहीं लेना चाहिए। क्योंकि इनमें ऋण लेने से पुत्र एवं पौत्रादि भी सदा ऋणी रहता है। बुधवार को कभी भी ऋण नहीं देना चाहिए।

स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे चरे

लग्ने धर्मसुताष्टशुद्धिसहिते द्रव्यप्रयोगः शुभः ।

नारे ग्राह्यमृणन्तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽकेऽह्नि यत्

तद्वंशेषु भवेदृणं न च बुधे देयं कदाचिद् धनम् ।।(मु.चि.न.प्र.27)

6.18. औषधि निर्माण-सेवन और सिलाई- कढ़ाई मुहूर्त्त-

लघुसंज्ञक (हस्त, अश्विनी पुष्य, अभिजित्), मृदुसंज्ञक(मृगशिरा रेवती, चित्रा, अनुराधा), चरसंज्ञक (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) और मूलनक्षत्र में तथा द्विस्वभाव (3,6,912) लग्न में, शुक्र, सोम, गुरु, बुध और रविवार में, लग्न मे बारहवें, सातवें और आठवें स्थान शुद्ध के शुद्ध रहने पर शुभ तिथियों में जन्मराशि और जन्म नक्षत्र को छोड़कर औषधि सेवन करना शुभ है। पुनर्वसु, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रों में सिलाई- कढ़ाई करना शुभ होता है। यथा मुहूर्त्तचिन्तामणि-

भैषज्यं सल्लघुमुदुचरे मूलभे द्व्यङ्गलग्ने

शुक्रेन्द्विज्ये विदि च दिवसे चापि तेषां रवेश्च ।

शुद्धे रिष्फद्यूनमृतिगृहे सत्तिथौ नो जनेर्भे

सूचीकर्म्माप्यदितिवसुभत्वाष्टरमित्राश्विपुष्ये ।।(मु.चि.न.प्र.15)

क्रय विचार-

क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टो विक्रयर्क्षे क्रयोऽपि न।

पौष्णाम्बुपाश्विनीवातश्रवश्चित्राः क्रये शुभाः ।।(मु.चि.न.प्र.16)

क्रय के नक्षत्र में विक्रय तथा विक्रय के नक्षत्र में क्रय नहीं करना चाहिए। रेवती, शतभिषा, अश्विनी, स्वाती, श्रवण और चित्रा नक्षत्र में क्रय करना शुभ है, विक्रय करना अशुभ है।

विक्रय करने एवं दुकान खोलने का मुहूर्त्त-

पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे केन्द्रत्रिकोणे शुभैः

षट्त्र्यायेष्वशुभैर्विना घटतनुं सन्विक्रयः सत्तिथौ ।

रिक्ताभौमघटान्विना च विपणिर्मित्रध्रुवक्षिप्रभे-

लग्ने चन्द्रसिते व्ययाष्टरहितैः पापैः शुभैर्द्व्यायखे ।।(मु.चि.न.प्र.17)

पूर्वाद्वीश(पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद) विशाखा, कृशानु-कृत्तिका, सार्प-आश्लेषा, यम- भरणी आदि नक्षत्रों में तथा केन्द्र (प्रथम, चतुर्थ, सप्तम), दशम भाव, त्रिकोण (नवम, पञ्चम) इनमें शुभ ग्रह हों, 6,3,11 भावों में पाप ग्रहों के रहने पर कुम्भ लग्न को छोड़कर अन्य लग्नों तथा शुभ तिथि में विक्रय शुभ है। रिक्ता 9, 4, 14 तिथि, मंलवार और कुम्भ लग्न को छोड़कर मित्रसंज्ञक(मृगशिरा, रेवती, चित्रा, एवं अनुराधा), ध्रुवसंज्ञक (उत्तराफाल्गुनी,उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा रोहिणी) क्षिप्रसंज्ञक (अश्वनी, हस्त, पुष्य, अभिजित) नक्षत्रों में लग्न में चन्द्र एवं शुक्र के स्थित रहने पर, द्वादश और अष्टम भाव पापग्रहों से रहित तथा द्वितीय, एकादश, एवं दशमभाव में शुभ ग्रह हो तो दुकान खोलना शुभ है।

वाहन, घोड़ा-हाथी खरीदने-बेचने का मुहूर्त्त-

क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येष्वरिक्तारदिने प्रशस्तम् ।

स्याद्वाजिकृत्यं त्वथ हस्तिकार्यं कुर्यान्मृदुक्षिप्रचरेषु विद्वान् ।।(मु.चि.न.प्र.18)

क्षिप्रसंज्ञक(अश्वनी, हस्त, पुष्य, अभिजित), रेवती, धनिष्ठा, मृगशिरा, स्वाती, शतभिषा और पुनर्वसु नक्षत्रों में, रिक्ता तिथियों को त्यागकर अन्य तिथियों और मङ्गलवार को छोड़कर अन्य दिन में वाहन, घोड़ा खरीदना, बेचना या सवारी में लाना शुभ है। इसी तरह मृदुसंज्ञक(मृगशिरा, रेवती, चित्रा, एवं अनुराधा), क्षिप्रसंज्ञक(अश्वनी, हस्त, पुष्य, अभिजित) और चरसंज्ञक(स्वाती, पुनर्वसु,श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) क्षिप्रसंज्ञक (अश्वनी, हस्त, पुष्य, अभिजित) नक्षत्र में वाहन व हाथी का खरीदना और बेचना चाहिए।

अभिजित नक्षत्र - उत्तराषाढ़ा का अन्तिम भाग तथा श्रवण नक्षत्र के आदि का योग है। जैसा कि अथर्ववेद में प्रमाण है **"अभिजिन्मे रासतां पुण्यमेव"** अर्थात् ब्रह्म देवता का अभिजित् नक्षत्र हमें पुण्य प्रदान

करे।(अथर्ववेद.19.7.4.) तैत्तिरीय ब्राह्मण 1.5.1 में "**अभिजयत्परस्तादभिजितमवस्तात्**" अर्थात् अभिजित् नक्षत्र हमें सर्वत्र जय प्रदान करता है। तैत्तिरीय ब्राह्मण 3.1.1 में कहा गया है कि ब्रह्मा ने जिससे सबको जीता वह अभिजित् नक्षत्र हमें विजय तथा लक्ष्मी प्रदान करे।

अभिजित मुहूर्त्त-यह मुहूर्त्त सभी वर्णों के लिए अत्यन्त श्रेष्ठ है। इसमें सभी प्रकार की मनोकामनाएँ, अर्थसंचय यात्रा आदि कार्यों में प्रशंसनीय है।

ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानां शूद्राणां चापि नित्यशः।

सर्वेषामेव वर्णानां योगो मध्यं दिने अभिजित्।। (अथर्ववेद 20)

अभिजित्सर्वकामाय सर्वकामार्थसाधनः।

अर्थसञ्चय मानानामध्वानं गन्तुमिच्छताम्।। (अथर्ववेद 21)

अभिजित मुहूर्त्त का समय- छाया रहित सीधी सूर्य की किरणें बारह अङ्गुल के दण्ड पर ही पड़ें। अर्थात् मध्याह्नकाल। यह मुहूर्त्त दिन का अष्टम मुहूर्त्त है। दिन के 12 बजने से एक घटी (24 मिनट) पूर्व तथा एक घटी के बाद का समय (48 मिनट) अभिजित मुहूर्त्त का होता है। अर्थात् "**चतुर्थमभिजितल्लग्नम्**"। समय स्थानीय दिनमान से ज्ञात होता है।

चतुर्षु चैव वैराजस्त्रिषु विश्वावसुस्तथा।

मध्याह्ने चाभिजिन्नाम अस्मिन् छाया प्रतिष्ठति।।(आथर्वण 8)

इसमें स्वयं भगवान विष्णु अशेष दोषों को सुदर्शनचक्र से नष्ट कर देते हैं। जैसा कि ज्योतिषसारसंग्रह में कहा है- **दिनमध्यगते सूर्ये मुहूर्त्ते ह्यभिजित्प्रभुः।**

चक्रमादाय गोविन्दः सर्वान्दोषान्निकृन्तति।।

लेकिन अभिजित मुहूर्त्त को बुधवार को शुभ कार्यों एवं दक्षिण दिशा की यात्रा में त्यागना चाहिए।

कालहोरा का प्रयोजन

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य ।

कुर्य्यादिक्छूलादि चिन्त्यं क्षणेषु नैवोल्लङ्घ्यः पारिघश्चापि दण्डः ॥ (मु.चि.शुभा.प्र.56)

जिस दिन में जो कार्य कहा गया है, वह दिन यदि दूषित हो और उस दिन वह कर्म करना आवश्यक हो तो उस दिन की कालहोरा में भी किया जा सकता है। इसी तरह जिस नक्षत्र में जो कार्य कहे गये हैं वह कार्य उस नक्षत्र के स्वामी के तिथ्यंश (तिथि स्वामी के मुहूर्त) में भी किये जा सकते हैं। मुहूर्त में वारशूल,

नक्षत्रशूल और लालाटिक योग का विचार अवश्य ही करना चाहिए। परिघदण्ड का उल्लंघन तो कभी भी किसी प्रकार नहीं करना चाहिए।

इकाई का सारांश- समय सदैव अपनी गति से चलता रहता है। इसलिए समय हमेशा अपनी गति के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। अतः वेदोक्त शुभ कार्यों को सम्पादित करने के लिए श्रेष्ठ समय का निर्णय नितान्त अत्यावश्यक है क्योंकि शुभ मुहूर्त्त ही विघ्नों को नष्ट कर कार्यों में सफलता देते हैं। जैसे- जातक को आठ वर्ष तक माता- पिता के पाप कर्मों का फल मिलता है परन्तु अरिष्ट निवारण हेतु जप-तप , दान व औषधियों के द्वारा अरिष्ट को दूर किया जा सकता है तथा जातक के अन्नप्राशन के समय चन्द्रमा यदि लग्नगत हो तो जातक भिक्षुक के रूप में जीवन यापन करता है। वही यज्ञोपवीत के समय उचित मुहूर्त्त नहीं हो तो जातक के पञ्चम, पञ्चमेश, नवम, नवमेश, दशम, दशमेश व बृहस्पति आदि के शुभ रहने पर भी जातक विद्याहीन रह सकता है परन्तु शुभ मुहूर्त में यज्ञोपवीत करने से जातक श्रेष्ठ विद्या प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार विवाह लग्न के आधार पर ही भार्या का शील निर्भर करता है। अर्थात् कुण्डली के अनुसार जिस जातक का शील उचित न हो उसका शील विवाह की शुभ लग्न से शुभ हो जाता है और वह भार्या उचित शील के द्वारा धर्म, अर्थ और पुरुषार्थ को प्राप्त करती है। यदि हम सामान्य कार्यों की बात करें तो जन्म राशि अथवा जन्म लग्न से उपचय 3,6,10,11 इन राशियों की लग्न हो, द्वादश और अष्टम भाव शुद्ध हो अर्थात् ग्रह रहित हो। लग्न पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो, चन्द्रमा लग्न से 3, 6, 10, 11भावों में स्थित हो तो इस मुहूर्त्त में आरम्भ किये गए सभी कार्यों में सफलता प्राप्त होती है लेकिन अनुचित मुहूर्त्त होने पर विपरीत परिणाम प्राप्त होता है।

इकाई समाप्त

1. एक दिन तथा एक रात्रि में कितने मुहूर्त्त होते हैं? **तीस** (30)।
2. एक दिन में कितने मुहूर्त्त होते हैं? **पन्द्रह** (15)।
3. कौनसा मुहूर्त्त दिन का अष्टम मुहूर्त्त है? **अभिजित**।
4. कौन- कौनसे नक्षत्रों में सिलाई- कढाई करना शुभ होता है? **पुनर्वसु, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, अश्विनी और पुष्य**।
5. किस वार को कभी भी ऋण न देना चाहिए? **बुधवार** ।
6. किस वार को ऋण वापस करना चाहिए? **मंगलवार**।

7. रेवती, शतभिषक, अश्विनी, स्वाती, श्रवण और चित्रा नक्षत्र में क्या करना शुभ है? **क्रय करना।**

निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-

1.अभिजित मुहूर्त्त को ....को शुभ कार्यों एवं ....दिशा की यात्रा में त्यागना चाहिए। **बुधवार- दक्षिण।**

2.अभीष्ट दिन से **शनि** तक गणना करने से जो संख्या हो उसको द्विगुणित करने पर जो संख्या प्राप्त हो उस संख्या वाला मुहूर्त .... योग। **कुलिक योग**

3.गुरुवार को सूर्यास्त होने के बाद एवं ....सूर्यास्त से पूर्व गोधूलि शुभ होती है। **शनिवार को** ।

4.आजीविका के साधन, यश-अपयश आदि का विचार.................से करते हैं। **दशमभाव**

बोध प्रश्न-

10. मुहूर्त्त की क्या आवश्यकता है तथा शुभ कार्यों को आरम्भ करने के मुहूर्त्त का विश्लेषण कीजिए?

11. अभिजित मुहूर्त्त को स्पष्ट कीजिए।

12.वाहन, घोड़ा-हाथी खरीदने-बेचने के मुहूर्त्तों को लिखिए।

13.विक्रय करने एवं दुकान खोलने के मुहूर्त्त का वर्णन कीजिए।

14.सर्वार्थसिद्धि योगों का वर्णन कीजिए।

15.उपनयन मुहूर्त्त का वर्णन कीजिए।

परियोजना कार्य-

2. आपके घर में कौन- कौनसे कार्य मुहूर्त्तों से किए जाते हैं एवं उसके लिए मुहूर्त्त कैसे देखते हैं, दर्शाइये।

इकाई -6 (भावविचार)

आकाश में स्थित ग्रहों की स्थिति के आधार पर समय व जन्मकुण्डली का निर्माण कर तथा उनमें ग्रहों को आकाशीय स्थिति के अनुसार स्थापित कर फलादेश किया जाता है। कुण्डली में बारह भाव होते हैं। जातक की जन्मकुण्डली में विद्यमान द्वादश भावों में स्थित ग्रह स्थितियों के आधार पर ही उसके भूत-वर्तमान और भविष्य में होने वाली घटनाओं का फलादेश किया जाता है। कुण्डली में स्थित तनु, धन, सहज, बन्धु, पुत्र, शत्रु, जाया, रन्ध्र, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय आदि संज्ञाओं से जाना जाता है।

यथा- **तनुधनं च सहजो बन्धुपुत्रारयस्तथा।**

युवतीरन्ध्र धर्मायकर्मलाभव्ययाः क्रमात्॥ (बृहत्पराशरहोराशास्त्र 37)

इन भावों द्वारा ही जातक के जीवन की तथा विश्व की तात्कालिक घटनाओं का ज्ञान करते हैं।

7.1. **कारकग्रह-** भाव, भावेश और कारक ग्रह की फल कथन में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका है। लग्नादि द्वादश भावों के लिए कारक ग्रह- (1) सूर्य (2) बृहस्पति (3) मंगल (4) चन्द्र और बुध (5) बृहस्पति (6) मंगल और शनि (7) शुक्र (8) शनि (9) बृहस्पति और सूर्य (10) सूर्य, बुध, बृहस्पति और शनि (11) बृहस्पति और (12) शनि क्रमशः तन्वादि द्वादश भावों के कारक हैं।

7.2. **भाव फल विचार का निर्णय-** लग्न, घन, भाग्यादि भावों से विचारणीय विषयों का विचार चन्द्रमा से भी करना चाहिए। लग्न से तृतीय स्थान से विचारणीय विषयों का विचार, कुज से तृतीय स्थान से भी करना चाहिए। चतुर्थ भाव का विचार लग्न व चद्र लग्न से भी करना चाहिए। षष्ठभाव से विचारणीय रोग और शत्रु का विचार बुध से षष्ठ स्थान से भी करें। पुत्र का विचार गुरु से पञ्चम भाव, स्त्री का शुक्र से सप्तम भाव से भी करना प्रशस्त है। जिस भाव से जो विषय विचारणीय है, अर्थात् विषय का उसके भावेश से भी विचार करना चाहिए।

तन्वादि भावों से विचारणीय विषय में पाराशर वचन-

भावफलों का शुभाशुभफल कथन

यो यो शुभेर्युतो दृष्टो भावों वा पतिदृष्टयुक्।

युवा प्रबुद्धो राज्यस्थः कुमारो वापि यत्पतिः।।

भावं न वीक्षते सम्यक् सुप्तो वृद्धो मृतोऽथवा ।

पीडितो वास्य भावस्य फलं नष्टं वदेद् ध्रुवम् ।। (बृ.पा.हो.रा.14,16

जिस भाव में उस भाव का स्वामी या शुभ ग्रह बैठा हो अथवा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो अथवा जिस भाव का स्वामी युवावस्था में हो या कुमारावस्था में हो या प्रबुद्धावस्था में हो अथवा लग्न से या विचारणीय भाव से दशम स्थान में हो तो ऐसी अवस्था वाला भावेश यदि भाव को देखे या योग करें तो उस भाव से सम्बन्धित सारे शुभ फल होते हैं ।

प्रथम भाव- जन्मकुण्डली में प्रथम भाव को **लग्न, होरा, कल्प, उदय, तनु और जन्म** कहते हैं, इससे शरीर, रूप, वर्ण ज्ञान, बलाबल, आकार, स्वास्थ्य, सुख-दुःख, व्यक्तित्व, आत्मविश्वास, आत्मसम्मान, चरित्र, स्वभाव, कद, मस्तिष्क और व्यक्तित्व, पितामह, प्रारम्भिक जीवन की अवस्था, वर्तमान काल आदि का विचार भी किया जाता हैं। इस भाव का सूर्य ग्रह कारक हैं।

देहं रूपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाऽबलम् ।

सुखं दुःखं स्वभावं च लग्नभावान्निरीक्षयेत् ।। (बृ.पा.12.1)

द्वितीय भाव- जन्मकुण्डली में **धन, कुटुम्ब, अर्थ, वाक् को द्वितीय भाव** कहते हैं इसभाव से धन, वाणी, भोजन, कटुम्ब, मारक भाव, दाँतों का विचार, ईश्वर में आस्था, चलने का ढंग, खान-पान, शत्रु-मित्र, पैतृक-धन, वस्त्र, द्रव्य, माता से लाभ पारिवारिक-सुख, मित्र, विद्या, खाद्य पदार्थ, मुख, दाहिना नेत्र(Right eye), जिह्वा, नाक, कला, लेखन कला(Writing skills), धातु, रत्न व सुवर्णादि धातुओं के क्रय-विक्रय का विचार किया जाता हैं। इस भाव का कारक बृहस्पति ग्रह हैं।

धनं धान्यं कुटुम्बांश्च मृत्युजालममित्रकम् ।

धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानान्निरीक्षयेत् ।।

तृतीय भाव- जन्मकुण्डली में तीसरे भाव को **पराक्रम, सहोदर, वीर्य, सहज और धैर्य कहते हैं।** छोटे भाई-बहन, धैर्य, लेखन कार्य, बौद्धिक विकास, वीरता, मीडिया, संप्रेषण (Communication), खेल, कन्धा, दायां हस्त, दाहिना-कर्ण (Right ear), छोटी-छोटी यात्राएँ, मित्र, वाक चातुर्य, कार्य की इच्छा शक्ति, भाई-बहन का सुख, शौर्य, धैर्य, गायन, साँस, योगाभ्यास, सम्बन्धियों का सुख, रेलयात्रा, साहस(Courage), सेना, सेवक, चाचा, मामा, दमा, खांसी, पराक्रम, भाई, उपदेश, माता-पिता के मरण आदि का विचार किया जाता हैं।

विक्रमं भृत्यभ्रात्रादि चोपदेश प्रयाणकम् ।

पित्रोर्वै मरणं विज्ञो दुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत् ।।

चतुर्थ भाव- जन्मकुण्डली में चौथे भाव को **सुख, मातृ, बन्धु, पाताल, वृद्धि,को चतुर्थ भाव** कहते हैं, इससे मातृ सुख, भूमि, वाहन, सुख, पढ़ाई, मन, सुख, गृह निर्माण समय, घर के भौतिक सुख(Material happiness), हृदय, सम्पति, गृह, यान-सुख, चौपाया, मित्र-बन्धुबान्धव, परोपकार के काम, माता, माता का स्वास्थ्य, पारिवारिक प्रेम-द्वेष, उदारता, दया, नदी, घर की सुख शान्ति, क्षेत्र, उद्यान, मामा, श्वसुर, नानी, पेट के रोगादि का इस भाव से विचार किया जाता हैं।

वाहनान्यथ बन्धूंश्च मातृसौख्यादिकान्यपि ।

निधि क्षेत्रं गृहं चापि चतुर्थात् परिचिन्तयेत् ।।

पञ्चम भाव- सुत, देव, बुद्धि, विद्या, संतान आदि नामों से जाना जाता हैं। इस भाव से शिक्षा, यन्त्र, मन्त्र, संतान, समाधान, परामर्श, बुद्धि, प्रेम, इष्ट-देव, पेट, गर्भ, सञ्चित कर्म, ईश, विश्वास, नीति, विद्या, संतान से सुख-दुःख, गुप्त-मंत्रणा, शास्त्र-ज्ञान, विचार-शक्ति, लेखन-कला, लाटरी, एवं शेयर द्वारा लाभ-हानि(Profit and loss by share), यश-अपयश का सुख, प्रबन्धात्मक योग्यता, पूर्वजन्म की स्थिति, भविष्य ज्ञान, आध्यात्मिक रुचि, मनोरञ्जन, प्रेम-सम्बन्ध, इच्छाशक्ति, गर्भाशय(Uterus) आदि का विचार करते हैं। बृहस्पति इस भाव का कारक ग्रह है।

यन्त्रमन्त्रौ तथा विद्यां बुद्धेश्चैव प्रबन्धकम् ।

पत्रराज्यापभ्रंशादीन् पश्येत्पुत्रालयाद् बुधः ।।

षष्ठम भाव - इस भाव को **रिपु, रोग, भय, क्षत, ऋण** भाव कहते हैं, जिससे जातक के रोग, ऋण, शत्रु, प्रतियोगिता, नौकरी, नौकर, न्यायालय, चोरी, मुकदमा, कलंक, विपत्ति, आँख , अंग-भंग, मूत्र, हृदय रोग, चोट की स्थिति, युद्ध, अपयश, मामा, मौसी, दुःख, विश्वासघात, पापकर्म, हानि, स्व-बन्धुबन्धुओं से विरोध, नाभि, गुदा, कमर सम्बन्धित रोगों का भी विचार षष्ठ भाव से करते हैं। शनि व मंगल ग्रह इस भाव के कारक हैं।

मातुलातंकशङ्कानां शत्रूश्च व्रणादिकान् ।

सपत्नीमातरं चापि षष्ठभावान्निरीक्षयेत् ।।

सप्तम भाव- इस भाव को **जाया, जामित्र, काम और मारक** संज्ञा से भी जाना जाता हैं। इस भाव से पति-पत्नी, विवाह, वैवाहिक-सम्बन्ध व सुख, व्यापारिक, साझेदारी(Partnerships), विदेश यात्रा(Foreign travel), नष्ट धन, दादा, पदप्राप्ति, वाणिज्य, जातक मरण, भोजन का विचार, चोरी से अर्जित धन, स्त्री सुख, दाम्पत्य सम्बन्ध, व्यापार में लाभ-हानि(Profit and loss in business), पितामह, प्रवास, विदेश गमन, भाई- बहन की संतान, दैनिक आय, काम-विकार, बवासीर, भगन्दर (गुप्त रोग) आदि का विचार किया जाता हैं। इस भाव का कारक ग्रह शुक्र ग्रह हैं। पत्नी व पति विचार तथा साझेदारी में सफलता- असफलता का विचार इसी भाव से होता है।

जायामध्वप्रयाणं च वाणिज्यं नष्टवीक्षणम् ।

मरणं च सर्वदेहस्य जाया भावान्निरीक्षयेत् ।।

अष्टम भाव- जन्मकुण्डली में इस भाव को **रन्ध्र, मृत्यु और आयु** भाव कहते हैं। इस भाव से आयु, आकस्मिक दुर्घटना मृत्यु, स्त्री का सौभाग्य, लाटरी, (lottery) सट्टा, अचानक लाभ-हानि, पैतृक-सम्पत्ति, गहन शोध, भूमि स्थित गुप्त धन, लम्बी-बीमारी, चोरी की आदत, रोग का कारण, शल्य चिकित्सा, वेतन, लोन (loan) का लेन देन, मृत्यु के कारण, आयु, गुप्तधन की प्राप्ति, विघ्न, दीर्घ यात्राएँ धन, अवसाद, अपमान, श्मशान (crematorium), नशा, पूर्व जन्म का अनुमान, मृत्यु के बाद की स्थिति, जीवन साथी से भूमि-धन का लाभ, दुर्घटना, यातना, गुप्तेन्द्रिय कष्ट, पति और पत्नी की आयु, दास्य वर्ग और विषम परिस्थितियों का विचार किया जाता हैं। इस भाव का कारक शनि ग्रह हैं। मृत्यु का विचार भी इसी भाव से करते हैं।

आयूरणं रिपुं चापि दुर्गं मृतधनं तथा ।

गत्यनुकादिकं सर्वं पश्येद् रन्धाद् विचक्षणः ।।

नवम भाव- जन्मकुण्डली में नवम भाव को **धर्म, भाग्य, शुभ** भाव कहते हैं। इस भाव से धर्म,अध्यात्म, भक्ति, आचार्य- गुरु, देवता, पिता, भाग्य, धर्म, आयात-निर्यात(Import Export), विदेश यात्रा, धार्मिक यात्रा, जंघा, भाई की स्त्री, स्नेह की भावना, देव मंदिर का निर्माण, तपस्या, पुण्य का विचार, मानसिक सोच, दान, शील, पुण्य, तीर्थ यात्रा, विधा, भाग्योदय, उच्च शिक्षा, पितृ, सिद्धि, बड़े भाई, पौत्र, बहनोई, यश-कीर्ति आदि का विचार किया जाता हैं। इस भाव का कारक सूर्य एवं गुरु हैं।

भाग्यं श्यालं च धर्मं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा ।

तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थान्निरीक्षयेत् ।।

दशम भाव- जातक में इस भाव को **कर्म, मान, पद** भाव कहते हैं। इस भाव से राज्य, मान-सम्मान, प्रसिद्धि, नेतृत्व, पिता, आजीविका के साधन, यश-अपयश, घुटने विकार, प्रसिद्धि, संगठन, प्रशासन, जय, उच्च पद, दूर देश में निवास, अभिमान, आकाशीय वृतान्त अधिकार, पिता का सुख-दुःख, अधिकार, राज्य, प्रतिष्ठा, पदोन्नति (Promotion), सरकार, सास, वर्षा, वायुयान सम्बन्धी विचार इस भाव से किया जाता हैं। इस भाव के कारक ग्रह सूर्य, बुध, गुरु एवं शनि हैं।

राज्यं चाकाशवृतिं च मानं चैव पितुस्तथा ।

प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थान्निरीक्षणम् ।।

एकादश भाव- जन्मकुण्डली में इस भाव को **आय और लाभ** भाव कहते हैं। इससे लाभ, गुप्तदान,आय, संपत्ति, सिद्धि, वैभव, ऐश्वर्य, दायाँ कान, कल्याण, बड़े भाई-बहन, , वाहन, इच्छा, उपलब्धि, धैर्य, ससुर से होने वाला धन लाभ, माता का अनिष्ट, परोपकारी संस्थाएँ(Charitable organizations), सामाजिक लोग, प्रतिष्ठित लोगों से आय, आदि के सन्दर्भ में विचार किया जाता है। इस भाव का कारक ग्रह गुरु है।

नाना वस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च ।

आयं वृद्धिं पशूनां च भवस्थान्निरीक्षणम् ।।

द्वादश भाव- इस भाव को व्यय भाव कहते हैं। इस भाव से हानि, दण्ड, जेल, निवेश, आध्यात्मिकता, बायाँ नेत्र(left eye), दरिद्रता, चुगलखोर, अस्पताल, मोक्ष, दोनों पैर, विदेश यात्रा, मुक्ति, बचाव, निंद्रा, दान, शीतलता, स्त्री सुख, शय्या सुख, परस्त्री गमन, बड़े रोग(Major diseases), उच्च स्थान से पतन, पिता का धन, निर्धनता, दूर देश की यात्रा, वैभव का नाश(Destruction of glory), धन हानि, खर्च, दान, दण्ड, व्यसन, रोग, शत्रुपक्ष से हानि, बाहरी स्थानों से सम्बन्ध, स्त्री पुरुष के गुप्त सम्बन्ध, शयन सुख, षड्यन्त्र, धोखा, राजकीय संकटों आदि का विचार इसी भाव से किया जाता हैं। इस भाव का कारक शनि हैं।

व्ययं च वैरिवृत्तान्तरिः फमन्त्यादिकं तथा ।

व्ययाच्चैव हि ज्ञातव्यमिती सर्वत्र धीमता।

भावफलं सम्यक तत्तत्संज्ञानपूर्वकम् ।। 1-13

इस प्रकार बारह राशियों के आधार पर जन्मकुण्डली के बारह भावों की रचना की गई है जिन्हें भाव कहते हैं। जन्म कुंडली या जन्मांग जन्म समय की स्थिति बताती है, इसमें स्थित प्रत्येक भाव हमारे जीवन की विविध अव्यवस्थाओं तथा घटनाओं को दर्शाते हैं। जन्म कुंडली में बारह भाव होते हैं और प्रत्येक भाव में एक राशि होती है। कुण्डली के सभी भाव जीवन के किसी न किसी क्षेत्र से सम्बन्धित होते हैं। इस प्रकार सभी बारह भावों से विचार किया जाता हैं।

केन्द्रभाव- 1,4, 7,10, त्रिकोण भाव- 5, 9, उपचय भाव- 3, 6, 10, 11, पणफर भाव 2, 5, 8, 11 आपोक्लिम भाव 3, 6, 9, 12, मारक भाव 2, 7 और त्रिक भाव- 6, 8, 12 हैं।

प्रशासन विचार- प्रथम भाव से प्रजा का स्वास्थ्य एवं मंत्रिमण्डल का विचार। द्वितीय भाव से सर्वकार का राजस्व, आयात एवं निर्यात। तृतीय भाव कृषि, भूमि, परिवहन, शिक्षण संस्थाओं से सम्बन्धित कार्य, चतुर्थ भाव से जनता की प्रसन्नता, सामाजिक संलग्नता तथा राजनीति। पञ्चमभाव से नेतृत्व व क्षमता, सीमा विवाद। सप्तमभाव से सेना का विचार व आक्रमण। नवम भाव से देशीय व वैदेशिक सम्बन्ध व युद्ध- विद्रोह, देश का विकास, न्यायालय से सम्बन्धित कार्य। दशम भाव से संसद, वैदेशिक व्यापार, एकादश भाव से अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, विदेशों से लाभ आदि का भी विचार करना चाहिए।

इकाई का सारांश- राशि, ग्रह , नक्षत्र एवं भाव में सम्पूर्ण विश्व विराजमान है। विश्व का विचार करने के लिए हमें आवश्यकता है कि कौन राशि?, कौन ग्रह?, कौन नक्षत्र? भचक्र में कहाँ स्थित तथा भाव का मान कितना है? भाव तथा ग्रह का सम्बन्ध ब्रह्माण्ड की घटनाओं से है। यदि हम इनके सम्बन्ध को समझ जाएँ तो बता सकते हैं कि कहाँ, कब, और कौन सी घटनाएँ घटित होने वाली हैं। अतः इसके लिए भाव के कारकत्त्व का ज्ञान बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।बारह राशियों की तरह कुण्डली में बारह भावों की आचार्यों ने गवेषणा की क्योंकि ये ग्रह, राशि एवं भाव जिस विषय के कारक होते हैं। वे अपनी महादशा, अन्तर्दशा और प्रत्यन्तर दशा में बलाबल के अनुसार शुभाशुभ फल अवश्य देते हैं। सभी व्यक्ति अपनी-अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण करना चाहते हैं लेकिन वह सफलता भावों में स्थित ग्रह के बल और दशा पर निर्भर करती है। अर्थात् शुभ भावेश की दशा आने पर सामान्य प्रयास भी किया जाए तो सफलता अवश्य मिल जाती है लेकिन वही अशुभ ग्रह की दशा हो तो कार्य में बारम्बार प्रयास करने पर निराशा ही हाथ लगती है। अब शंका उत्पन्न होती है कि भावेश क्या है? तो भाव की राशि के स्वामी को ही भावेश कहा जाता है।

इकाई समाप्त

1. भाव कितने होते हैं? **12 प्रकार के** ।

2. धन का विचार किस भाव से करते है? **द्वितीयभाव**।

3. दक्षिण नेत्र का विचार किस भाव से करते हैं? **द्वितीयभाव**।

4.बड़े भाई का विचार किस भाव से करते हैं? **एकादश** (11)।

5. तनु प्रथमभाव का कारकग्रह है? **सूर्य** ।

6. बृहत्पाराशरहोराशास्त्र के प्रणेता कौन हैं? **महर्षि पाराशर।**

निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-

7.भाव की राशि के स्वामी को ....कहा जाता है। **भावेश** ।

8.................भाव को जाया, जामित्र, काम और मारक संज्ञा से भी जाना जाता हैं। **सप्तमभाव**

9.दशम से.......................... का विचार करना चाहिए। **व्यापार व आजीविका** ।

10.आजीविका के साधन, यश-अपयश आदि का विचार.................से करते हैं। **दशमभाव**

बोध प्रश्न-

11. पञ्चमभाव से क्या- क्या विचार करते हैं?

12.उत्तर भारत- दक्षिण भारत में माता और पिता का विचार किस भाव से तथा कैसे करते हैं उदाहरण सहित लिखिए?

13. दशम भाव से क्या - क्या विचार किया जाता है?

14.तनु,धनादि द्वादश भावों का सामान्य परिचय लिखिए।

इकाईः 7 (गोचर विचार)

भचक्र में ग्रह स्व- स्व गो (गति) से नित्य भ्रमण हुए एक राशि से दूसरी राशि में ग्रह के (चर) जाने का नाम गोचर है। 'गो' का अर्थ है गति। अर्थात् नक्षत्र पिण्डों की गति 'चर' का आशय है। गमन अर्थात् **'गोचर'** शब्द का अर्थ है ग्रहों का निरन्तर गतिमय होना। अतः आकाशस्थ जो ग्रह स्व- स्व राशि में जाते हैं तब उस राशि में गोचर ग्रह का विचार करते है। लेकिन शंका उत्पन्न होती है कि जन्मकाल में ग्रह कैसे चलते हैं? तथा उनका प्रभाव विश्व पर कैसे पडेगा? वह जन्म कुण्डली तो जन्म होने पर स्थिर हो जाती है, इसमें ग्रहों की स्थिति भी स्थिर हो जाती है। परन्तु ऐसा नहीं है क्योंकि वह ग्रह कुण्डली में स्थिर प्रतीत होते हैं लेकिन आकाश में ग्रह अपनी-अपनी कक्षा में अपनी-अपनी गति से नित्य भ्रमण करते हुए एक राशि से दूसरी राशि में भ्रमण करते रहते हैं। अतः जब ये जहाँ जाते हैं वहाँ पर अपनी तात्कालिक स्थिति से मानव पर प्रभाव डालते हैं। अर्थात् राशि परिवर्तन के साथ- साथ अपना प्रभाव बदलते रहते हैं। जब हम गोचर विचार कहते हैं तो जन्मकालिक ग्रह की स्थिति और ग्रह कहाँ गोचर कर रहे हैं, उन स्थितियों का विचार करते हैं।

ग्रहों का गोचर काल-

- सूर्य, शुक्र, बुध का भ्रमण काल 1 माह होता है।
- चन्द्र का भ्रमण काल सवा दो दिन होता है।
- मंगल का भ्रमण काल 57 दिन होता है।
- गुरु का भ्रमण काल 1 वर्ष होता है।
- राहु-केतु का भ्रमण काल डेढ़ वर्ष होता है।
- शनि का भ्रमण काल ढाई वर्ष होता है।

गोचर में ध्यातव्य- गोचर में ग्रह किस प्रकार का फल देगा शुभ या अशुभ फल देगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह ग्रह जन्म समय में-

- किस- किस भाव का स्वामी है?
- किस स्थान पर बैठा हुआ है?

- किस का कारक है?
- गोचर के समय किस भाव में जा रहा है?
- यदि जन्म के समय कोई ग्रह राशि में बलवान हो स्व राशि, अपने उच्च, मित्र, अपने मूल त्रिकोण में, अपने नवांश या उच्च नवांश में और किसी शुभ स्थान में भी बैठा हो तो गोचर में यदि वह किन्हीं शुभ भावों में जाएगा तो जन्म कुण्डली में योगकारक होगा। अशुभ स्थान में गोचर करे तो फल अशुभ नहीं देगा।
- यदि ग्रह बलवान न हो स्वराशि और नवांश में नीच का हो या किसी शत्रु की राशि और किसी क्रूर ग्रह से युत व दृष्ट हो, किसी शुभ ग्रह से युत या दृष्ट न हो या फिर अशुभ स्थानों का स्वामी हो एवं अस्त हो तो गोचर में वह शुभ स्थानों में जाता हुआ भी विशेष शुभ फल नहीं देगा।
- ग्रह जब जन्म राशि से व लग्न से बारहवें स्थान में जाते हैं तो अत्यधिक व्यय करते हैं, शुभ ग्रह अच्छे कार्यों में व्यय करते है। पाप ग्रह विपरीत कार्यों में खर्चा अधिक कराते हैं।
- शुभ ग्रह गोचर में जब वक्री होते हैं तो अधिक शुभ फल देते हैं। पाप ग्रहों के वक्री होने पर अत्यधिक अशुभ फल देते हैं लेकिन शुभ अथवा अशुभ प्रभाव उस समय देते हैं जिस समय अधिक ग्रह गोचर में वक्री हो जाएँ।

गोचर लग्न निर्णय- गोचर में ग्रहों का विचार जन्म लग्न से अथवा चन्द्र राशि (जन्म राशि) से किया जाए। इस बारे में ज्योतिर्निबन्ध में सटीक निर्देश है।

यथा- विवाहे सर्वमाङ्गल्ये यात्रादौ ग्रहगोचरे।

जन्मराशेः प्रधानत्वं नाम राशिं न चिन्तयेत।

बृहत्पाराशर होराशास्त्र- **चन्द्राच्च विज्ञेयं फलं जातककोविदैः।** अर्थात् आचार्यों के निर्देशानुसार चन्द्रराशि से ही गोचर विचार करना चाहिए क्योंकि चन्द्रलग्न शरीर है और जन्मलग्न प्राण हैं यथा- देवकेरलाकार-

चन्द्रलग्नं शरीरं स्यात् लग्नं स्यात् प्राणसंज्ञकम्।

ये उभे सम्परीक्ष्येव सर्वं नाडी फलं स्मृतम्।

गोचर विचार के समय सभी लग्नों में चन्द्रलग्न ही सर्वश्रेष्ठ है, इसे प्रधान मानकर इसी से गोचरवश स्थित ग्रहों की गणना कर फलादेश करना चाहिए। जैसा कि फलदीपिकार का निर्देश है-

सर्वेषु लग्नेष्वपि सत्सु चन्द्रलग्नं प्रधानं खलु गोचरेषु ।

तस्मात्तद्दक्षादपि वर्तमानग्रहेन्द्रचारैः कथयेत्फलानि।।(फ.दी.26.1)

इस सन्दर्भ को **वृहज्जातक** में भी स्पष्ट वर्णन है कि चन्द्रमा से अमुक-अमुक भावों में सूर्य कब अच्छा फल करता है अर्थात् सब प्रकार की लग्नों (लग्न, सूर्य लग्न, चन्द्र लग्न) के होते हुए भी गोचर विचार में चन्द्र लग्न की ही प्रधानता है। अर्थात् चन्द्र लग्न का महत्त्व ज्योषिशास्त्र में कम नहीं है।

नीच गतो जन्मनि यो ग्रह स्यात् तद्राशिनाथोऽपि तदुच्चनाथ:।

सचन्द्रलग्नाद् यदि केन्द्रवर्ती राजा भवेद् धार्मिको चक्रवर्ती ।।(जा. पा.7.3)

अर्थात् जन्म के समय जो ग्रह नीच राशि में स्थित हो, यदि उस नीच राशि का स्वामी या उस ग्रह के उच्च स्थान का स्वामी चन्द्र लग्न से केन्द्र में हो तो वह जातक चक्रवर्ती राजा होता है। यहाँ भी केन्द्र स्थिति चन्द्र से ही है।

अतः गोचर विचार के समय यह निर्णय करें कि चन्द्र लग्न से शुभ या अशुभ ग्रह कौन किस राशि में है।

सभी ग्रह निम्नलिखित स्थानों में शुभ हैं-

गोचरवश सूर्य जब चन्द्र राशि से 3, 6, 10 और 11 वें भाव में।

चन्द्रमा 1,3, 6,7, और 10 वें स्थान में।

मङ्गल और शनि 3, 6 और11 वें भाव में।

बुध 2, 4, 6, 8, 10 और 11 वें भाव में।

बृहस्पति 2, 5, 7, 9 और 11 वें भाव में।

शुक्र 1, 2 , 3, 4, 5, 8, 9, 11, और 12 वें भाव में।

शनि 3, 6 और 11 वें भाव में।

राहु 3, 6, 10 और 11 वें भाव में।

केतु 3, 6, 10 और 11 वें भाव में।

यथा फलदीपिका- **सूर्यः षड्विदशस्थितस्त्रिदशषद्सप्ताद्यगश्चन्द्रमाः**

जीवस्त्वस्ततपोद्विपञ्चमगतो वक्रार्कजौ षड्गिगौ ।

सौम्यः षड्स्वचतुर्दशाष्टमगतः सर्वेऽप्युपान्तस्थिताः

शुक्रः खास्तरिपून्विहाय शुभदस्तिग्मांशुवद्भोगिनौ॥(फ.दी.26.2)

चन्द्रराशि से उपर्युक्त 3,6,10 और 11वें भाव में सूर्य को शुभ फलप्रदाता कहा गया है, वह तभी होगा जब शनि के अतिरिक्त अन्य ग्रह चन्द्रराशि से नौवें, बारहवें, चौथें और पाँचवें भाव में न स्थित हों।

यथा मन्त्रेश्वर - **लाभविक्रमखशत्रुषु स्थितः शोभनो निगदितो दिवाकरः।**

खेचरैः सुततपोजलान्त्यगैः व्यार्किभिर्यदि न विध्यते तदा॥ (फ.दी.26.3)

उपर्युक्त वेधस्थानो में यदि शनि के अतिरिक्त अन्य ग्रह न हो तो सूर्य कथित स्थानों में शुभ होता है। शनि से सूर्य का वेध नहीं होता। बुध सूर्य से अधिकतम 28 अंश और शुक्र सूर्य से अधिकतम 48 अंश के अन्तर पर होते हैं। अतः इनके वेध का प्रश्न ही नहीं होता। शेष मङ्गल और बृहस्पति का ही वेध हो सकता है। गोचर में सूर्य अपने स्थान से सप्तमभावस्थ ग्रह से विद्ध होता है।

- गोचर से सूर्य के शुभ स्थान 3,6, 10, और 11 वें भाव।
- वेध स्थान 9,12, 4, और 8 भाव।

गोचरफल-

चन्द्रमा के शुभ और वेध स्थान

चन्द्रमा जन्मराशि से सातवें, पहले, छठें, ग्यारहवें, दसवें और तीसरे भाव में गोचरवश शुभ होता है, यदि क्रमशः दूसरे, 5वें, 12वें, 8वें, 4थें और 9वें भाव में बुध के अतिरिक्त अन्य किसी ग्रह का सञ्चार न हो।

- गोचर से चन्द्रमा के शुभ स्थान 1,3,6,7, और 10 वें स्थान में।
- वेध स्थान 2,5, 12, 8,4 और 9 भाव।

शनि और भौम के शुभ और वेध स्थान -

द्यूनजन्मरिपुलाभखत्रिगः चन्द्रमाः शुभफलप्रदः सदा ।

स्वात्मजान्त्यमृतिबन्धुधर्मगैर्विध्यते न विबुधैर्यदि ग्रहैः॥ (फ.दी.26.4)

शनि और मङ्गल जन्मकालिक चन्द्रराशि से गोचरवश तीसरे, छठें और ग्यारहवें भाव में शुभद होता है, यदि क्रमशः 12वें, 9वें और 5वें भाव में गोचरवश अन्य कोई ग्रह न स्थित हो। शनि सूर्य से वेध नहीं होता।

- मङ्गल और शनि के गोचरवश शुभ स्थान 3,6,11 भाव ।
- वेध स्थान 12,9, 5 भाव। (शनि को सूर्य से वेध नहीं होता)

विक्रमायरिपुगः कुजः शुभः स्यात्तदान्त्यसुतधर्मगैः खगैः ।

चेन्न विद्ध इनसूनुरप्यसौ किन्तु धर्मधृणिना न विद्यते॥ (फ.दी.26.5)

बुध के शुभ स्थान

जन्मकालिक चन्द्रराशि से 2,4,6,8,10 और 11 वें भाव में गोचरवश शुभ फल देता है, यदि चन्द्रराशि से क्रमशः 5,3,9,1,8 और 12वें भाव में चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य कोई ग्रह संक्रमित न हो।

- बुध के गोचरवश शुभ स्थान 2,4,6,8,10 और 11वां भाव।
- वेध स्थान 5,3,9,1,8 और 12वां भाव।

स्वाम्बुशत्रुमृतिखायगः शुभो ज्ञस्तदा न खलु विद्धयते सदा ।

स्वात्मजत्रितप आद्यनैधनप्राप्तियैर्विबुधुभिर्यादि ग्रहैः॥ (फ.दी.26.6)

बृहस्पति के शुभ और वेध स्थान-

गोचर से बृहस्पति 2,11,9,5 और 7वें भाव चन्द्रराशि से में शुभ होता है, यदि 12,8,10,4 और तीसरे भाव में गोचर से अन्य कोई ग्रह नहीं हो।

- बृहस्पति के गोचरवश शुभ स्थान 2,11,9,5 और 7वें भाव ।
- वेध स्थान 12,8,10,4 और तीसरा भाव।

स्वायधर्मतनयास्तसंस्थितो नाकनायकपुरोहितः शुभः।

रिःफरन्ध्रखजलत्रिगैर्यदा विद्यते गगनचारिभिर्न हि॥ (फ.दी.26.7)

शुक्र के शुभ और वेध स्थान-

गोचरवश शुक्र 1,2,3,4,5,8,9, 12 और 12वें जन्मराशि से भावों में शुभ फलप्रद होता है, यदि क्रमशः 8,7,1,10,9,5,11,6 और तीसरे भाव में गोचर से अन्य कोई ग्रह न हो।

- गोचरवश शुक्र के शुभ स्थान-1,2,3,4,5,8,9, 12 और 12 भाव।
- वेध स्थान 8,7,1,10,9,5,11,6 और तीसरा भाव।

आसुताष्टमतपोव्ययायगो विद्ध आस्फुजिदशोभनः स्मृतः।

नैधनास्ततनुकर्मधर्मधीला भवैरिसहजस्थखेचरैः॥ (फ.दी.26.8)

लग्नादि द्वादश भावों में सूर्य संक्रमण का फल-

जन्मराशि में संक्रमित होने पर सूर्य जातक को **परिश्रम** और **धनक्षय** कराता है, स्वभाव में **चिड़चिड़ापन** और **रोग** देता है तथा **दुःसाध्य यात्रा** कराता है। जन्मराशि से **द्वितीय भाव** में सूर्य **धननाश** और **कष्ट** के साथ- साथ अन्य **लोगों से हानि** तथा स्वभाव में **जिद्दीपन** देता है। जन्मराशि से **तृतीयभाव** में जातक को **पदोन्नति**, **धनागम**, **प्रसन्नता**, **रोगादि से मुक्ति** और **शत्रुओं का नाश** करता है। **चतुर्थभाव** में जातक रोगी तथा विषय-भोगादि में विघ्न करता है।

जन्मन्यायासदाता क्षपयति विभवान् क्रोधरोगाध्वदाता

वित्तभ्रंशं द्वितीये दिशति न सुखदो वञ्चनामाग्रहं च।

स्थानप्राप्ति तृतीये धननिचयमुदाकल्यकृच्चारिहन्ता

रोगान् दत्ते चतुर्थे जनयति च मुहुः स्रग्धराभोगविघ्नम् ॥ (फ.दी.26.9)

जन्मराशि से **पञ्चमभाव** के संक्रमण काल में **मानसिक सन्ताप**, **स्वास्थ्य** सम्बन्धी परेशानी, **व्याधि** और **मोह (अविवेक)** की वृद्धि होती है। **षष्ठभाव** के गोचर काल में जातक को **रोगादि व** शत्रुओं से **मुक्ति**, **मोहादि और मानसिक चिन्ता** से जातक मुक्त होता है। **सप्तमभाव** में कष्टप्रद यात्राएँ, **उदर और गुदामार्ग में रोग** तथा **अपमानजनक स्थिति** उपस्थित होती है। **अष्टमभाव** में जातक को भय और रोग, विवाद , राजकोप एवं अत्यधिक ताप से कष्ट पाता है।

चित्तक्षोभं सुतस्थो वितरति बहुशो रोगमोहादिदाता

षष्ठेऽर्को हन्ति रोगान् क्षपयति च रिपूञ्छोकमोहान्प्रमार्ष्टि।

अध्वानं सप्तमस्थो जठरगुदभयं दैन्यभावं च तस्मै

रुक्त्रासावष्टमस्थः कलयति कलहं राजभीतिं च तापम्॥ (फ.दी.26.10)

नवमभाव के संक्रमण काल में सूर्य जातक को विपत्ति और दीनता देता है। स्वजनों एवं मित्रों से मतभेद और मानसिक कष्ट होता है। **दशमभाव** में जातक को कार्यों में सफलता और उच्चपद की प्राप्ति होती है। **एकादशभाव** में सम्मान और वैभवादि की अभिवृद्धि होती है तथा जातक को रोगादि से मुक्ति मिलती है। **द्वादशभाव** में जातक को कष्ट, धन की हानि, स्वजनों से विरोध और ज्वरादि से भय होता है।

आपद्दैन्यं तपसि विरहं चित्तचेष्टानिरोधं

प्राप्नोत्युग्रां दशमगृहगे कर्मसिद्धिं दिनेशे।

स्थानं मानं विभवमपि चैकादशे रोगनाशं

क्लेशं वित्तक्षयमपि सुहृद्वैरमन्त्ये ज्वरं च॥ (फ.दी.26.11)

लग्नादि भावों में चन्द्र गोचर का फल –

चन्द्रराशि से प्रथमभाव के संक्रमण काल में भाग्योदय, **द्वितीयभाव** में धननाश, **तृतीयभाव** में विजय, सफलता, **चतुर्थभाव** में भय, **पञ्चमभाव में** शोक, **षष्ठभाव** में नैरोग्यता, **सप्तमभाव** में सुख, **अष्टमभाव** में अनिष्ट, **नवमभाव** में रोग, **दशमभाव** में अभीष्ट की सिद्धि, **एकादश भाव** में आनन्द। **द्वादशभाव** में अत्यधिक व्यय कराता है।

क्रमेण भाग्योदयमर्थहानिं जयं भयं शोकमरोगतां च।

सुखान्यनिष्टं गदमिष्टसिद्धि मोदं व्ययं च प्रददाति चन्द्रः॥ (फ.दी.26.12)

लग्नादि द्वादश भाव में गोचरवश मंगल का फल-

जन्मराशि के संक्रमण काल में **मंगल** जातक को मनस्ताप, स्वजन-वियोग, रक्त और पित्त की विकृति से कष्ट देता है। **द्वितीयभाव** में भय, वाणीदोष एवं धनक्षय होता है। **तृतीयभाव** में विजय, सफलता, स्वर्णाभूषण एवं आनन्द का लाभ होता है।**चतुर्थभाव** में पदच्युति, उदर व्याधि और जातक के स्वजनों पर विपत्ति आती है।

अन्तः शोकं स्वजनविरहं रक्तपित्तोष्णरोगं

लग्ने वित्ते भयमपि गिरां दोषमर्थक्षयं च

धर्ये भौमो जनयति जयं स्वर्णभूषाप्रमोदं

स्थानभ्रंशं रुजमुदरजां बन्धुदुःखं चतुर्थे॥ (फ.दी.26.13)

पञ्चमभाव में मङ्गल के संक्रमण काल में जातक को ज्वर, पुत्रचिन्ता या स्वजनों से कलह होती है। **षष्ठभाव** में शत्रुओं से कलह की निवृत्ति, नैरुज्यता, विजय, धन का लाभ तथा कार्य में अनुकूलता होती है।

ज्वरमनुचितचिन्तां पुत्रहेतुव्यथां वा

कलयति कलहं स्वैः पञ्चमे भूमिपुत्रः।

रिपुकलहनिवृत्तिं रोगशान्ति च षष्ठे

विजयमथ धनाप्तिं सर्वकार्यानुकूल्यम्॥ (फ.दी.26.14)

सप्तमभाव में मङ्गल के संक्रमण काल में जातक का पत्नी से विरोध, नेत्रव्याधि और उदरव्याधि से कष्ट होता है। **अष्टमभाव** में ज्वर, चोट आदि से रक्तस्राव एवं अर्थ और सम्मान-प्रतिष्ठा की हानि होती है। **नवमभाव** में पराजय, धनक्षय, शारीरिक दुर्बलता के कारण कार्यक्षमता की हानि, शरीर को पुष्टि प्रदान करने वाले तत्त्वों का क्षय आदि फल होता है।

कलत्रकलहाक्षिरुग्जठररोगकृत्सप्तमे

ज्वरक्षतजरूक्षितो विगतवित्तमानोऽष्टमे।

कुजे नवमसंस्थिते परिभवोऽर्थनाशादिभि-

विलम्बितगतिर्भवत्यबलदेहधातुक्षयैः॥ (फ.दी.26.15)

दशमभाव में भौम के गोचर होने पर दुराचार में प्रवृत्ति होती है अथवा उसके कार्यों में विफलता या विघ्न आते हैं तथा जातक अत्यधिक थकान का अनुभव करता है। **एकादशभाव** में धन, आरोग्यता, भूसम्पदादि की वृद्धि होती है। **द्वादशभाव** में धन का क्षय तथा तज्जनित सन्ताप से पीड़ा होती है।

दुश्चेष्टा वा कर्मविघ्नः श्रमः खे द्रव्यारोगयक्षेत्रवृद्धिश्च लाभे।

भौमः खेटो गोचरे द्वादशस्थो द्रव्यच्छेदस्ताप उष्णामयाद्यैः॥ (फ.दी.26.16)

द्वादश भावों में बुध का गोचर फल-

बुध **जन्मराशि** के संक्रमण काल में धनक्षय कराता है, **द्वितीयभाव** में धनलाभ कराता है, **तृतीयभाव** में शत्रुभय देता है, **चतुर्थभाव** में धनलाभ कराता है, **पञ्चमभाव** में स्त्री एवं पुत्रों से कलह कराता है, **षष्ठभाव** में विजय प्रदान करता है, **सप्तमभाव** में विरोध कराता है, **अष्टमभाव** में धन-पुत्रादि का लाभ देता है, **नवमभाव** में जातक के लिए विघ्न करता है, **दशमभाव** में चतुर्दिक् सुख होता है, **एकादशभाव** में धनलाभ तथा **द्वादशभाव** में भयभीत एवं तिरस्कृत होता है।

वित्तक्षयं श्रियमरातिभयं धनाप्तिं भार्यातनूजकलहं विजयं विरोधम्।

पुत्रार्थलाभमथ विघ्नमशेषसौख्यं पुष्टिं पराभवभयं प्रकरोति चान्द्रिः॥ (फ.दी.26.17)

द्वादश भावों में बुध का गोचर फल-

चन्द्रराशि के संक्रमण काल में बृहस्पति विदेश यात्रा और धन की हानि तथा शत्रुता कराता है। **द्वितीयभाव** में धनलाभ तथा कुटुम्ब सुख के साथ- साथ उसकी वाणी सारगर्भित होती है **तृतीयभाव** में

पदच्युति, प्रिय व्यक्ति का निधन, व्यवसाय में अवरोध तथा रोग होते हैं। **चतुर्थभाव** में स्वजनों और बन्धुओं के कारण कष्ट, दीनता और चतुष्पादों से भय होता है।

जीवे जन्मनि देशनिर्गमनमप्यर्थच्युतिं श्रुतां

प्रप्नोति द्रविणं कुटुम्बसुखमप्यर्थे स्ववाचां फलम्।

दुश्चिक्ये स्थितिनाशमिष्टवियुतिं कार्यन्तरायं रुजं

दुःखैर्बन्धुजनोद्भवैश्च हिबुके दैन्यं चतुष्पाद्भयम्॥ (फ.दी.26.18)

बृहस्पति **पञ्चमभाव** के गोचर काल में जातक को पुत्रलाभ, सज्जनों से समागम तथा राजकृपा प्राप्त होती है। **षष्ठभाव** में शत्रुओं व स्वजनों के द्वारा उत्पीडित एवं रोगों से कष्ट पाता है। **सप्तमभाव** में सदुद्देश्य से यात्रा, भार्या से सुख तथा पुत्रलाभ होता है। **अष्टमभाव** में कष्टप्रद यात्राएँ, अरिष्ट, धनक्षय, कष्ट आदि फल होते हैं। जैसा कि फलदीपिका में कहा गया है-

पुत्रत्पत्तिमुपैति सज्जनयुतिं राजानुकूल्यं सुते

इष्टे मन्त्रिण पीडयन्ति रिपवः स्वज्ञातयो व्याधयः।

यात्रां शोभनहेतवे वनितया सौख्यं सुताप्ति स्मरे

मार्गक्लेशमरिष्टमष्टमगते नष्टं धनैः कष्टताम्॥ (फ.दी.26.19)

भाग्यभाव में बृहस्पति सौभाग्य का उदय तथा सिद्धि कराता है। **दशमभाव** में धन, स्थान और पुत्र की हानि कराता है। **एकादशभाव** में पुत्र, स्थान और सम्मानादि की वृद्धि होती है। **द्वादशभाव** में जातक को कष्ट, सम्पदादि की हानि का भय होता है।

भाग्ये जीवे सर्वसौभाग्यसिद्धिः कर्मण्यर्थस्थानपुत्रादिपीडा।

लाभे पुत्रस्थानमानादिलाभो रिःफे दुःखं साध्वसं द्रव्यहेतोः॥ (फ.दी.26.20)

द्वादश भावों में शुक्र का गोचर फल-

जन्मराशि में शुक्र विषयभोग का सुख प्रदान करता है। **द्वितीयभाव** में धनलाभ, **तृतीयभाव** में वैभवादि का सुख, **चतुर्थभाव** में सुख तथा मित्रों की प्राप्ति, **पञ्चमभाव** में सन्तान-लाभ का सुख, **षष्ठभाव** में विपत्ति, **सप्तमभाव** में स्त्री को कष्ट, **अष्टमभाव** में धनलाभ, **नवमभाव** में सुख, **दशमभाव** में कलह का भय, एकादशभाव में निर्भयता एवं **द्वादशभाव** के संक्रमण काल में जातक को धन का लाभ होता है।

अखिलविषयभोगं वित्तसिद्धिं विभूतिं

सुखसुहृदभिवृद्धिं पुत्रलब्धिं विपत्तिम्।

दिशति युवतिपीडां सम्पदं वा सुखाप्तिं

कलहमभयमर्थप्राप्तिमिन्द्रारिमन्त्री॥ (फ.दी.26.21)

द्वादश भावों में शनि का गोचर फल-

शनि गोचरवश जातक की **जन्मराशि** में रोगादि की वृद्धि तथा स्वजन का निधन, **द्वितीयभाव** में धन पुत्रादि की हानि, **तृतीयभाव** में पद, भृत्य एवं धन का लाभ, **चतुर्थभाव** में स्वजन, स्त्री और धन का नाश, **पञ्चमभाव** में धन, पुत्र और बुद्धि की क्षति, **षष्ठभाव** में सभी प्रकार के सुख तथा शत्रुओं पर विजय, **सप्तमभाव** में स्त्री को कष्ट, यात्रा और भय होता है, **अष्टमभाव** में पुत्रनाश, पशु, मित्र एवं धन से सम्बन्धित पीड़ा तथा रोग देता है।

रोगाशौचक्रियाप्तिं धनसुतविहतिं स्थानभृत्यार्थलाभं

स्त्रीबन्ध्वर्थप्रणाशं द्रविणसुतमतिप्रच्युतिं सर्वसौख्यम्।

स्त्रीरोगाध्वावभीतिं स्वसुतपशुसुहृद्वित्तनाशामयार्तिं

जन्मादेरष्टमान्तं दिशति पदवशेनार्कसूनुः क्रमेण॥ (फ.दी.26.22)

नवमभाव में शनि के गोचर होने पर दरिद्रता, धार्मिक अनुष्ठानादि में बाधा, पिता के समान किसी स्वजन का निधन और कष्ट होता है। **दशमभाव** में दुराचार में प्रवृत्ति, प्रतिष्ठादि की हानि तथा रोगादि से कष्ट होता है। **एकादशभाव** में सभी प्रकार के सुख, वैभव एवं कीर्ति लाभ होता है। **व्ययभाव** में व्यर्थ परिश्रम, अनावश्यक कार्य में प्रवृत्ति, शत्रु द्वारा धनक्षय, स्त्री और पुत्रों को रोग तथा कष्ट होता है।

दारिद्र्यं धर्मविघ्नं पितृसमविलयं नित्यदुःखं शुभस्थे

दुर्व्यापारप्रवृत्तिं कलयति दशमे मानभङ्गं रुजं वा।।

सौख्यान्येकादशस्थो बहुविधविभवप्राप्तिमुत्कृष्टकीर्तिं

विश्रान्तिं व्यर्थकार्याद्वसुहतिमरिभिः स्त्रीसुतव्याधिमन्त्ये॥ (फ.दी.26.23)

द्वादश भावों में गोचर राहु के फल-

गोचरवश राहु **जन्मराशि** में शारीरिक क्षति, **द्वितीयभाव** में धनक्षय, **तृतीयभाव** में सुख, **चतुर्थभाव** में कष्ट, **पञ्चमभाव** में धनहानि, **षष्ठभाव** में सुख, **सप्तमभाव** में विनाश, **अष्टमभाव** में मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्ट, **नवमभाव** में हानि, **दशमभाव** में लाभ, **एकादश भाव** में सुख और **द्वादशभाव** में व्यय आदि फल देता है।

ग्रहों के गोचर का प्रभाव व काल-

क्षितितनयपतङ्गौ राशिपूर्वत्रिभागे

सुरपतिगुरुशुक्रौ राशिमध्यत्रिभागे।

तुहिनकिरणमन्दौ राशिपाश्चान्त्यभागे

शशितनयभुजङ्गौ पाकदौ सार्वकालम्॥ (फ.दी.26.25)

सूर्य और कुज राशि में प्रवेश करते ही राशि के प्रथम 10 अंश के गोचर काल में, बृहस्पति और शुक्र राशि के मध्यभाग (10अंश से 20 अंश) में, चन्द्रमा एवं शनि राशि के (अन्तिम भाग) 10 अंशों में अपना फल देते हैं बुध और राहु सम्पूर्ण राशि के संक्रमण काल में फल देते हैं।

नक्षत्रगोचर सप्तशलाका चक्र-

रेखाः सप्तसमालिखेदुपरिगास्तिर्यक्तथैव क्रमा-

दीशादग्निभमादितोऽपि गणयेदादित्यभस्यावधि ।

वेधा जन्मदिने मृतिर्भयमथाधानाख्यनक्षत्रके

कर्मण्यर्थविनाशनं खलु रविर्दद्यात्सपापो मृतिम्॥ (फ.दी.26.26)

पूर्व-पश्चिम दिशा में सात रेखाएँ और उनके ऊपर याम्योत्तर दिशा में सात रेखाएँ खींच कर इन रेखाओं के 28 छोरों पर पूर्वोत्तर दिशा में कृत्तिका से प्रारम्भ कर साभिजित् 28 नक्षत्रों को चित्र के अनुसार स्थापित करने से सप्तशलाका चक्र बनता है।

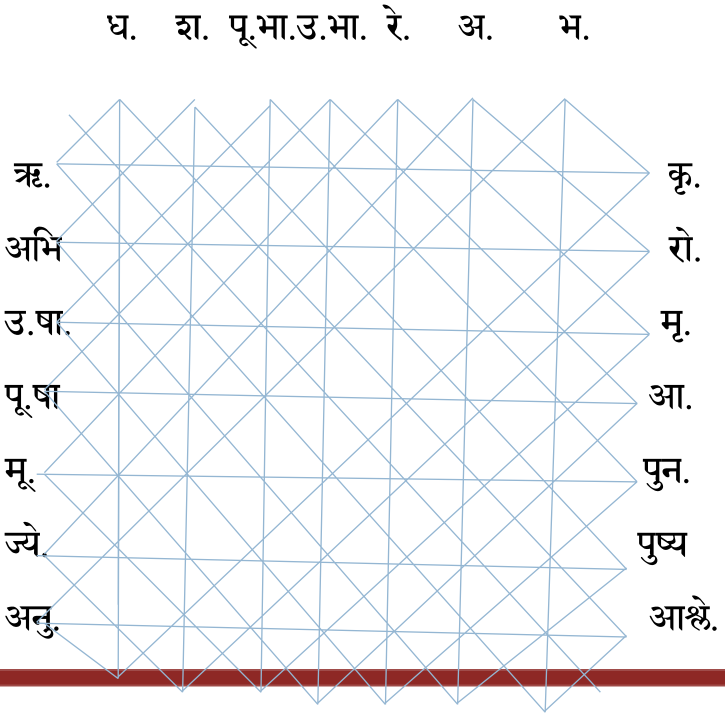

वि. स्वा. चि. ह. उ.फा. पू.फा. म.

सप्तशलाका चक्र

सूर्याधितिष्ठित नक्षत्र से यदि जन्मनक्षत्र का वेध हो तो जीवन का संकट होता है। सूर्यनक्षत्र का वेध यदि आधान नक्षत्र से हो तो भय और चिन्ता, यदि कर्मनक्षत्र का वेध हो तो धनहानि होती है किन्तु यदि सूर्य के साथ उस नक्षत्र में कोई पापग्रह युत हो तो उक्त वेधस्थिति में मृत्यु होती है।

जन्म के समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र में स्थित हो उस नक्षत्र को जन्मनक्षत्र कहते है। जन्मनक्षत्र से 19वां नक्षत्र आधान नक्षत्र और 10वां नक्षत्र कर्मनक्षत्र होता है।

अर्थात् ज्येष्ठा-पुष्य में, शतभिषा-स्वाती में, पूर्वाषाढा और आर्द्रा में, रेवती-उत्तरा- फाल्गुनी में, धनिष्ठा-विशाखा में, उत्तराषाढ़ा-मृगशिरा में, अश्विनी-पूर्वाफाल्गुनी में, आश्लेषा- अनुराधा में, हस्त-उत्तरभाद्रपद में, रोहिणी-अभिजित् में, मूल-पुनर्वसु में, चित्रा-पूर्वभाद्रपद में, भरणी-मघा में और श्रवण-कृत्तिका में परस्पर वेध होता है।

एवं विद्धे खचरैः क्रूररन्यैर्मरणम्।

सौम्यैर्विद्धे न मृतिर्विद्यादेवं सकलम्॥ (फ.दी.26.27)

इस प्रकार उक्त नक्षत्रों (जन्म, आधान और कर्म नक्षत्र) का यदि सूर्येतर पापग्रहों (मङ्गल, शनि, राहु और केतु) से युक्त नक्षत्रों का वेध हो तो भी मृत्यु (अथवा मृत्युतुल्य कष्ट) सम्भव होती है । यदि शुभग्रह युक्त नक्षत्रों का वेध हो तो मृत्यु नहीं होती। इसी प्रकार सर्वत्र विचार करना चाहिए।

आधानकर्मर्क्षविपन्निजर्क्षे वैनाशिके प्रत्यरभे वधाख्ये ।

पापग्रहो मृत्युभयं विदध्याद्वेधे तथा कार्यहरः शुभाख्ये॥ (फ.दी.26.28)

आधाननक्षत्र, कर्मनक्षत्र, विपत्, जन्मनक्षत्र, वैनाशिक नक्षत्र, प्रत्यरिनक्षत्र और वधनक्षत्र का वेध यदि पापग्रह से हो तो मृत्युकारक होते हैं। यदि शुभग्रह से उक्त नक्षत्रों का वेध हो तो केवल व्यावसायिक क्षति होती है।

जन्मनक्षत्र से 19वें नक्षत्र की आधान, 10वें नक्षत्र की कर्म, 3सरे नक्षत्र की विपत्, 23वें नक्षत्र की वैनाशिक, 5वें नक्षत्र की प्रत्यारि और 7वें नक्षत्र की वध संज्ञा हैं।

आदित्यसङ्क्रान्तिदिने ग्रहाणां प्रवेशने वा ग्रहणे च युद्धे।

उल्कानिपाते च तथाद्भुते च जन्मत्रयं स्यान्मरणादिदुःखम्॥ (फ.दी.26.29)

सूर्यसंक्रान्ति या अन्य किसी ग्रह के राशि परिवर्तन के दिन, ग्रहण, ग्रहयुद्ध या उल्कानिपात के दिन यदि जन्मत्रय नक्षत्र (जन्मनक्षत्र, अनुजन्मनक्षत्र या त्रिजन्मनक्षत्र) पड़ें तो वह दिन जातक के लिए अनिष्टकर होता है। कर्मक्ष को **अनुजन्मनक्षत्र** कहते हैं ।

असत्फलः सौम्यनिरीक्षितो यः शुभप्रदश्चाप्यशुभेक्षितश्च।

द्वौ निष्फलौ द्वावपि खेचरेन्द्रौ यः शत्रुणा स्वेन विलोकितश्च॥ (फ.दी.26.30)

पाप फल देने वाले ग्रह यदि शुभग्रह से दृष्ट हों अथवा शुभ फल देने वाले ग्रह पापग्रह से दृष्ट हों तो दोनों स्थितियों में ग्रह निष्फल होते है। यदि शुभ या पाप फल प्रदाता ग्रह अपने शत्रु से दृष्ट हों तब भी वे निष्फल होते हैं।

अनिष्टभावस्थितखेचरेन्द्रः स्वोच्चस्वगेहोपगतो यदि स्यात्।

न दोषकृच्चोत्तमभावगश्चेत् पूर्णं फलं यच्छति गोचरेषु॥ (फ.दी.26.31)

अनिष्ट स्थान में स्थित ग्रह यदि अपनी राशि या अपनी उच्च राशि में स्थित हो तो वे अनिष्टकारक नहीं होते। ऐसे ग्रह यदि शुभ स्थान में स्थित हों तो गोचर में वे पूर्ण फल देते हैं।

ग्रहेश्वरास्ते शुभगोचरस्था नीचारिमौढ्यं समुपाश्रिताश्चेत्।

ते निष्फलाः किन्त्वशुभाङ्कसंस्थाः कष्टं फलं संविदधत्यनल्पम्॥ (फ.दी.26.32)

गोचर से ग्रह यदि शुभप्रद स्थानों में स्थित हों और अपनी नीचराशि, शत्रुराशि या सूर्य-सान्निध्य में अस्त हों तो वे शुभ फल नहीं देते। यदि अशुभप्रद स्थान में उक्त स्थिति में हों तो उनका अशुभ फल अधिक होता है।

द्वादशाष्टमजन्मस्थाः शन्यर्काङ्गारका गुरुः।

कुर्वन्ति प्राणसन्देहं स्थानभ्रंशं धनक्षयम्॥ (फ.दी.26.33)

शनि, सूर्य, भौम और बृहस्पति गोचरवश जब जन्मराशि, उससे अष्टम और द्वादश राशि में हों तो जातक को मृत्युभय, पदच्युति और धनक्षय के कारण होते हैं।

चन्द्राष्टमे च धरणीतनयः कलत्रे राहुः शुभे कविरवी च गुरुस्तृतीये।

अर्कः सुतेऽर्किरुदये च बुधश्चतुर्थे मानार्थहानिमरणानि वदेद्विशेषात्॥ (फ.दी.26.34)

जन्मराशि से गोचरवश अष्टम भाव में चन्द्रमा, सप्तम भाव में भौम, नवम भाव में राहु, षष्ठ भाव में शुक्र, तृतीय भाव में बृहस्पति, पञ्चम भाव में सूर्य, जन्मराशि में शनि और चतुर्थ भाव में बुध जातक को अपमान, धनक्षय और अन्य परिस्थितियों के अनुकूल रहने पर मृत्युदायक भी हो सकते हैं।

अङ्गग्रह-

गोचरवश सूर्यादि ग्रह विभिन्न नक्षत्रों के संक्रमण काल में जातक के विभिन्न अङ्गों को प्रभावित करते हैं ।ग्रहों के इस प्रभाव के परिज्ञान हेतु 27 नक्षत्रों को जातक के विभिन्न अङ्गों में न्यस्त करने और उनके संक्रमण काल के प्रभाव का आचार्य ने वर्णन किया है यथा-

सूर्यनक्षत्र - न्यासक्रम

वक्त्रे क्ष्मा मूर्ध्नि चत्वार्युरसि च चतुरः सव्यहस्ते चतुष्कं
पादे षड्वामहस्ते चतुरथ नयने द्वौ च गुह्ये द्वयं च।
भानुर्नाशं विभूतिं विजयमथ धनं निर्धनं देहपीडां
लाभं मृत्युं च चक्रे जनयति विविधान् जन्मभाद्देहसंस्थः॥ (फ.दी.26.35)

जन्मनक्षत्र आनन में, द्वितीयादि चार नक्षत्र शिर में, षष्ठादि चार नक्षत्र वक्ष में, दशमादि चार नक्षत्र दक्षिण भुजा में, चतुर्दशादि 6 नक्षत्र दोनों पैरों में, विंशत्यादि चार नक्षत्र वाम भुजा में, चौबीसवां और पच्चीसवां नक्षत्र दोनों नेत्रों में तथा 26वां और 27वां नक्षत्र गुह्याङ्गों में न्यस्त कर फल का विचार करना चाहिए। जन्मनक्षत्र में गोचरवश यदि सूर्य संक्रमित हो तो विनाश, शिर में धनागम, वैभवादि, वक्षःस्थ नक्षत्रों में विजय, दक्षिण भुजा में धनागम, दोनों पैरों के नक्षत्रों में निर्धनता, वाम भुजा के नक्षत्रों में देहपीड़ा, नेत्रस्थ नक्षत्रों में लाभ तथा गुह्य प्रदेशस्थ नक्षत्रों में गोचरवश सूर्य की स्थिति मृत्युकारक होती है।

चन्द्रनक्षत्र न्यासक्रम-

शीतांशोर्वदने द्वयोरतिभयं क्षेमं शिरस्यम्बुधौ
पृष्ठे शत्रुजयं द्वयोर्नयनयोर्नेत्रे धनं जन्मभात्।
पञ्चस्वात्मसुखं हृदि त्रिषु करे वामे विरोधं क्रमात्
पादौ षड्ढु विदेशतां जनयति त्रिष्वर्थलाभं करे॥ (फ.दी.26.36)

जन्मनक्षत्रादि दो नक्षत्र आनन में, तीन आदि चार नक्षत्र शिर में, सात आदि दो नक्षत्र पृष्ठभाग में, नव आदि दो नक्षत्र दोनों नेत्रों में, ग्यारह आदि पाँच नक्षत्र वक्षःस्थल में, सोलहवां आदि तीन नक्षत्र वाम

हस्त में, उन्नीसवां आदि छः नक्षत्र दोनों पैरों में, पचीसवां आदि तीन नक्षत्र दक्षिण हस्त में न्यस्त करना चाहिए।

आननस्थ नक्षत्रों में चन्द्रमा के आने पर अतिभय, शिरस्थ नक्षत्रों में कुशल, सुख, पृष्ठस्थ नक्षत्रों में विजय, नेत्रस्थ नक्षत्रों में धनागम, वक्ष-स्थ नक्षत्रों में आत्मिक सुख, वाम हस्तगत नक्षत्रों में कलह, पैरों में स्थित नक्षत्रों में यात्रा, दक्षिण हस्त के नक्षत्रों में भ्रमण काल में चन्द्रमा धनलाभ कराता है।

भौमनक्षत्र न्यासक्रम-

वक्त्रे द्वे मरणं करोत्यवनिजः षट् पादयोर्विग्रहं
क्रोडे त्रीणि, जयं चतुर्विधनतां वामे करे मस्तके।
द्वे लाभं चतुराननेऽधिकभयं क्षेमं करे दक्षिणे
वार्द्धिर्द्वे नयने विदेशगमनं चक्रे स्वजन्मर्क्षतः॥ (फ.दी.26.39)

आनन में न्यस्त जन्मनक्षत्रादि दो नक्षत्रों में गोचरवश चन्द्रमा के आने पर जातक को मृत्युभय होता है। पैर के तृतीयादि छः नक्षत्र के संक्रमण काल में विवाद (कलह), वक्षःस्थ नवमादि नक्षत्रों में जय, सफलता, वाम हस्त के द्वादशादि चार नक्षत्रों में दारिद्रय, शिर के षोडशादि दो नक्षत्रों में लाभ, आनन के अष्टादशादि चार नक्षत्रों में असीम भय, दक्षिण हस्त के द्वाविंशत्यादि चार नक्षत्रों में सुख, आनन्द और नेत्रद्रय के षड्विंशत्यादि दो नक्षत्रों में गोचरवश मङ्गल विदेशगमन कराता है।

बुध-बृहस्पति-शुक्र नक्षत्र- न्यासक्रम -

मूर्ध्नि त्रीणि मुखे त्रयं च करयोः षट् पञ्च कुक्षौ तथा
लिङ्गे द्वे द्विचतुष्टयं चरणयोः प्राप्तेऽमरेन्द्रार्चितः।
शोकं लाभमनर्थमर्थनिचयं नाशं प्रतिष्ठां तथा
दद्यादात्मदिनात्तथैव भृगुजस्तद्बुधोऽपि क्रमात्॥

शिर के जन्मनक्षत्रादि तीन नक्षत्रों में गोचरवश बुध, बृहस्पति एवं शुक्र दुःख और शोक देते हैं। आनन के चतुर्थादि तीन नक्षत्रों में लाभ, हस्तद्वय के सप्तमादि छः नक्षत्रों में अनर्थ, कुक्षि के त्रयोदशादि पाँच नक्षत्र में प्रचुर धनलाभ, लिङ्गप्रदेश के अष्टादशादि दो नक्षत्रों में हानि, विनाश और चरणद्वय के एकोनविंश आदि आठ नक्षत्रों में सम्मान एवं प्रतिष्ठा देते हैं।

शनि-राहु-केतु नक्षत्र-न्यासक्रम-

भूवेदवह्निगुणवेदशराग्निनेत्र-दस्रं च वक्त्रकरपादपदेषु हस्ते।

कुक्षौ च मूर्ध्नि नयनद्वयपृष्ठभागेन्यस्य क्रमेण शनि संयुतभान्निजर्क्षात्॥

दुःखं च सौख्यं गमनं च नाशं लाभं स्वभोगं सुखसौख्यमृत्यून्।

वक्त्रक्रमादाह फलानि मन्दस्यैवं तमः खेचरयोर्वदन्तु॥ (फ.दी.26.40)

आनन के जन्मनक्षत्र में गोचरवशात् शनि, राहु और केतु दुःख-क्लेश आदि फल देते हैं। दक्षिण हस्त के द्वितीयादि चार नक्षत्रों में सुख, प्रसन्नता, दक्षिण चरण के षष्ठादि तीन नक्षत्रों में यात्रा, वाम चरण के नवमादि तीन नक्षत्रों में हानि, वाम हस्त के द्वादशादि चार नक्षत्रों में लाभ, कुक्षिप्रदेश के षोडशादि पाँच नक्षत्रं में भोगादि सुख, शिर के एकविंशत्यादि तीन नक्षत्रों में सुख, उल्लास, नेत्रों के चतुर्विंशत्यादि नक्षत्रद्वय में उल्लास तथा पृष्ठ के षड्विंशत्यादि नक्षतरद्वय में उक्त तीनों जीवन-भय देते हैं।

यत्राष्टवर्गे अधिकबिन्दव: स्युस्तत्र स्थितो गोचरतो ग्रहेन्द्र:।

तद्वत्फलं प्राह शुभं व्ययारिरन्ध्रस्थितो वाऽपि शुभं विधत्ते॥ (फ.दी.26.41)

अष्टकवर्ग समुदाय के जिस भाव राशि में अधिक बिन्दु प्राप्त हों उस भाव में गोचरवश ग्रह शुभ फल देते हैं। त्रिक (छठे, आठवें, बारहवें) भाव में भी यदि अधिक बिन्दु प्राप्त हों तो उस भाव में भी गोचरवश ग्रह शुभ फल देते हैं।

लत्तादोष एवं लत्ताफल-

रवेर्द्वादशनक्षत्रं भूसुतस्य तृतीयकम्।

गुरोः षड्वारकं चैव शनेरष्टमतारकम्॥

एतेषां च पुरोलत्ता पृष्ठलत्ताः प्रकीर्त्तिताः।

शुक्रस्य पञ्चमं तारं चन्द्रजस्य तु सप्तमम्॥

राहोस्तु नवमं चैव द्वाविंशं भं हिमद्युतेः।

ग्रहस्थितर्क्षाद्गणयेल्लत्तायां जन्मभे व्यथा ॥ (फ.दी.26.42-44)

सूर्यनक्षत्र से बारहवां नक्षत्र, मङ्गल के नक्षत्र से तीसरा नक्षत्र, बृहस्पति के नक्षत्र से छठा नक्षत्र, शनिनक्षत्र से आठवां नक्षत्र आगे की ओर गिनने पर पुरोलत्ता से युक्त होता है। शुक्रनक्षत्र से पाँचवां नक्षत्र, बुधनक्षत्र से सातवां नक्षत्र, राहु स्थित नक्षत्र से नवां नक्षत्र तथा चन्द्रनक्षत्र (गोचरवश) से 22वां नक्षत्र पृष्ठ-लत्तादोषयुक्त होता है। ग्रह स्थित नक्षत्र से पुरो या पृष्ठ लत्ता की गणना होती है। जन्मनक्षत्र (जिस नक्षत्र

में जन्मकालिक चन्द्रमा स्थित हो उसे जन्मनक्षत्र कहते हैं) में यदि लत्ता पड़े तो व्यथा, रोग या थकान होती है।

पुरोलत्ता की गणना ग्रह स्थित नक्षत्र से आगे की ओर गिनते हैं। पृष्ठलता की गणना ग्रह स्थित नक्षत्र से विपरीत दिशा में पीछे की ओर होती है। सूर्य, मङ्गल, बृहस्पति और शनि की पुरोलत्ता और शेष ग्रह चन्द्रमा, बुध और शुक्र की पृष्ठलत्ता होती है।

नक्षत्र चित्रा में सूर्य की लत्ता होगी। यदि शुक्र ज्येष्ठा नक्षत्र में स्थित हो तो उसकी लत्ता विपरीत क्रम से गणना करने पर पाँचवें चित्रा नक्षत्र में शुक्र की भी लत्ता होगी। यदि मङ्गल उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में स्थित हो तो मङ्गल की लत्ता उत्तराफाल्गुनी से सीधे क्रम से गिनने पर तीसरे नक्षत्र चित्रा में होगी। इस प्रकार चित्रा नक्षत्र में सूर्य, मङ्गल और शुक्र तीनों ग्रहों की लत्ता पडेगी। जिस व्यक्ति का जन्म चित्रा नक्षत्र में हुआ हो उसके लिए वह दिन जिस दिन चन्द्र नक्षत्र चित्रा हो, अत्यन्त अनिष्टकर होगा।

सूर्यादि ग्रहों के लत्ताफल

रवेः सर्वार्थहानिः स्यात्तमसोर्दुखमुच्यते।

मरणं जीवलत्तायां बन्धुनाशो भयावहः॥

शुक्रस्य कलहो भ्रंश अनर्थः शशिजस्य तु।

चन्द्रस्य तु महाहानिर्लत्तामात्रफलं भवेत् ॥ (फ.दी.26.45-46)

सूर्य की लत्ता में समस्त धन-सम्पदादि विनष्ट होता है। राहु और केतु की लत्ता में आपदा, बृहस्पति की लत्ता में मृत्यु, सम्बन्धियों का विनाश, असुरक्षाजन्य भय, शुक्र की लत्ता में कलह-विवाद, बुध की लत्ता में पदच्युति या पदावनति या इसी प्रकार की विपत्ति, चन्द्रमा की लत्ता में हानि फल होते हैं। इस प्रकार विभिन्न लत्ताओं के अलग-अलग फल कहे गए हैं।

सर्वत्र लत्तासाङ्कर्ये द्विगुणत्रिगुणादिकम्।

वदेद्दोषफलं नृणां ग्रहाल्लत्ताधिकक्रमात्॥ (फ.दी.26.47)

यदि एक ही नक्षत्र में एकाधिक ग्रहों की लत्ता पड़े तो पाप फल में आनुपातिक वृद्धि- द्विगुणित, त्रिगुणित आदि की वृद्धि होती है।

सर्वतोभद्रचक्रोक्त शुभवेधाः शुभावहाः।

पापवेधा दुःखतरा गोचरेताश्च चिन्तयेत्॥ (फ.दी.26.48)

सर्वतोभद्र चक्रानुसार शुभवेध शुभ फलदायक और पापवेध कष्टप्रद होता है। गोचर फल कथन में इसका विशेष रूप से विचार करना चाहिए।

सर्वतोभद्र चक्र

पूर्व श्लोक में मन्त्रेश्वर ने सर्वतोभद्र चक्र का उल्लेख मात्र कर उससे वेधादि का विचार करने का निर्देश दिया है। यदि कृत्तिका नक्षत्र में सूर्य स्थित हो तो कृत्तिका से बारहवें अस्त दिशा में यदि नक्षत्र, राशि, व्यञ्जन, स्वर और तिथि पड़े तथा वे सभी पापवेध युक्त हों तो ऐसा जातक निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त होता है।

सूर्य व चन्द्रमा कभी भी वक्रगति से नहीं चलते हैं। राहु व केतु सदा पीछे की ओर अर्थात् मीन, कुम्भ इस क्रम से चलते हैं अर्थात् ऐसे ग्रहों को वक्री ग्रह कहते हैं। इनके अतिरिक्त मंगल से शनि तक के पाँच ग्रह स्थिति के अनुसार मार्गी (सीधी गति) या वक्री (उल्टी गति) से चलते हैं।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 5वें नक्षत्र की विद्युन्मुख संज्ञा है।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 8वें नक्षत्र की शूल संज्ञा है।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 14वें नक्षत्र की सन्निपात संज्ञा है।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 18वें नक्षत्र की केतु संज्ञा है।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 21वें नक्षत्र की उल्का संज्ञा है।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 22वें नक्षत्र की कम्प संज्ञा है।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 23वें नक्षत्र की वज्रक संज्ञा है।

सूर्य स्थित नक्षत्र से 24वें नक्षत्र की निर्घात संज्ञा है।

ये आठ उपग्रह हैं। ये समस्त कार्यों में अवरोधक होते हैं। दुर्भाग्यवश इनमें से कोई यदि व्यक्ति का जन्मनक्षत्र हो और विद्ध हो तो जातक लम्बी बीमारी से अथवा दुर्घटना आदि से मृत्यु को प्राप्त होता है।

जन्मकालिक चन्द्राधितिष्ठित नक्षत्र को जन्म नक्षत्र कहते हैं।

जन्म नक्षत्र से 10वें नक्षत्र को कर्म नक्षत्र कहते हैं।

जन्म नक्षत्र से 19वें नक्षत्र को आधान कहते हैं।

जन्म नक्षत्र से 23वें नक्षत्र को विनाशन या वैनाशिक कहते हैं।

जन्म नक्षत्र से 18वें नक्षत्र को सामुदायिक कहते हैं।

जन्म नक्षत्र से 16वें नक्षत्र को सङ्घातिक कहते हैं।

जन्म नक्षत्र से 26वें नक्षत्र को जाति कहते हैं।

जन्म नक्षत्र से 27वें नक्षत्र को देश कहते है।

जन्म नक्षत्र से 28वें नक्षत्र को अभिषेक नक्षत्र कहते हैं।

दशापहाराष्टकवर्गगोचरे ग्रहेषु नृणां विषमस्थितेष्वपि।

जपेच्च तत्प्रीतिकरैः सुकर्मभिः करोति शान्ति व्रतदानवन्दनैः॥

दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग और गोचर में दुःस्थिति में पड़े ग्रहों से उत्पन्न विषम स्थिति के निवारण हेतु उक्त ग्रह के प्रिय मन्त्रों का जप, अनुष्ठानादि सत्कर्म, शान्ति, व्रत, दान, वन्दना आदि से उनको प्रसन्न करना चाहिए।

अहिंसकस्य दान्तस्य धर्मार्जितधनस्य च।

सर्वदा नियमस्थस्य सदा सानुग्रहा ग्रहाः॥

जो हिंसा नहीं करता है अर्थात् जो दूसरों को किसी प्रकार का दैहिक, भौतिक, मानसिक किसी प्रकार से प्रताड़ित नहीं करता, जो आत्मनियन्त्रित रहता है, जो धर्ममार्ग से अर्जित धन का उपभोग करता है तथा नित्य नियम, संयमादि का पालन करता है। ऐसे व्यक्ति के प्रति ग्रह सदैव अनुकूल रहते हैं।

ग्रहों का राशि में जाने से पूर्व फल देने का काल-

सूर्यारसोम्यार्फुजितोक्षनागसप्ताद्विघस्त्रान्विधुरश्विनाडीः।

तमोयमेज्याश्रिरसाश्विमासान्गन्तव्यराशेःफलदा पुरस्तात्।।

सूर्य जिस राशि पर जानेवाला है उसका फल 5 दिन पहले से ही देना प्रारंभ करता है तथा मंगल 8 दिन पूर्व से, बुध 7 दिन पूर्व से, शुक्र 7 दिन पूर्व से, चन्द्र 3 घटी पूर्व, राहु 3 महीने पूर्व, शनि 6 महीने पूर्व, बृहस्पति 2 महीने अर्थात् 27 अंश से ऊपर स्पष्ट जब हो तो सभी अग्रिम राशि का फल देता है।

इकाई का सारांश-जन्म समय में ये ग्रह जिस राशि में पाए जाते हैं वह राशि उनकी जन्मकालीन राशि कहलाती है जो कि जन्म कुण्डली का आधार है और जन्म के पश्चात् किसी भी समय वे अपनी गति से जिस राशि में भ्रमण करते हुए दिखाई देते हैं, उस राशि में उनकी स्थिति गोचर कहलाती है। ब्रह्माण्ड में करोड़ों तारे हैं। वे सब स्थिरप्राय हैं। गोचर ग्रहों के प्रभाव उनके राशि परिवर्तन के साथ-साथ बदलते रहते हैं। जातक के वर्तमान समय की शुभाशुभ जानकारी के लिए गोचर बहुत उपयोगी विचार है। वर्ष भर के समय की जानकारी गुरु और शनि से, मास की सूर्य से और प्रतिदिन की चन्द्रमा के गोचर से प्राप्त की जा सकती है। वास्तविकता तो यह है कि किसी भी ग्रह का गोचर फल उस ग्रह की अन्य ग्रहों से स्थिति के अनुरूप ही कहना चाहिए।

इकाई समाप्त

1. गोचर स्थित ग्रहों की गणना का फलादेश किस लग्न से करना चाहिए? **चन्द्र लग्न** ।

2. चन्द्र राशि से गोचरवश सूर्य किन-किन भावों में शुभ होता है? **3,6,10 तथा11भावों में।**

3. जन्म नक्षत्र से 10वें नक्षत्र को क्या कहते हैं? **कर्मनक्षत्र।**

4. बुध जन्मराशि के संक्रमण काल में क्या फल देता है? **धनक्षय।**

5. सप्तशलाका के अनुसार श्रवण का वेध नक्षत्र होता है? **कृत्तिका।**

निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-

15.भाग्यभाव में गोचरवश बृहस्पति ....कराता है। **सौभाग्य का उदय तथा सिद्धि।**

16. गोचरवश राहु जन्मराशि में ....देता है । **शारीरिक क्षति।**

17.गोचरवश मङ्गल तृतीयभाव में ....देता है । **विजय, सफलता या स्वर्णाभूषण** ।

18.गोचरवश शुक्र जन्मराशि से द्वादशभाव में ....देता है। **धनलाभ**

बोध प्रश्न-

19. चन्द्रलग्न से ही गोचर क्यों करते है तथा क्या कारण है?

20. गोचरवश सूर्य के बारह भावों के फल लिखिए।

21. सप्तशलाका चक्र का निर्माण करते हुए नक्षत्र वेध को स्पष्ट कीजिए।

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

- फलदीपिका, पं गोपेशकुमार ओझा, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली।
- फलदीपिका, डॉ. हरिशङ्कर पाठक, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
- जातकपारिजात ,चौखम्भा संस्कृत संस्थान ,पं कपिलेश्वर चौधरी एवञ्च पं मातृप्रसाद पाण्डेय , वाराणासी।
- बृहज्जातकम् ,सावित्री ठाकुर प्रकाशन ,श्रीसीताराम झा पं ,चौराहा वाराणसी।
- युजर्वेद संहिता
- अथर्ववेद संहिता
- बृहत्संहिता , पण्डित श्री अच्युतानन्द झा शर्मणा, चौखम्बा विद्याभवन वाराणासी,
- बृहत्पाराशर-होराशास्त्रम्, दैवज्ञः पं. देवचन्द्र झा, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी।
- सूर्यसिद्धान्तः, श्रीकपिलेश्वरशास्त्रि, चौखम्भा संस्कृत भवन, वारणसी।
- लघुजाककम्, पं लवणलाल् झा, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।
- सारावली, डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली वाराणसी।
- मुहूर्त्तचिन्तामणिः, चौखम्भा संकृत संस्थान, वाराणसी।
- षट्पञ्चाशिका, डॉ. सुरेशचन्द्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
- लघुपाराशरी सिद्धान्त, मोतिलालवनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली।

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

द्वारा सञ्चालित एवं प्रस्तावित राष्ट्रीय आदर्श वेद विद्यालय

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - ४५६००६ (म.प्र.)

Phone : (0734) 2502266, 2502254, E-mail : msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in